द्विवेदीयुग के साहित्यकारों

के

कुछ पत्र

सम्पादक

बैजनाथ सिंह 'विनोद'

१९५८

हिन्दुस्तानी एकेडेमी

उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद

प्रकाशक
हिंदुस्तानी एकेडेमी
उत्तर-प्रदेश, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण—२०००
१९५८
मूल्य—[illegible])

सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

प्रकाशकीय

हिंदुस्तानी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद की ओर से श्री बैजनाथ सिंह 'विनोद' द्वारा संकलित एवं संपादित "द्विवेदी युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र" नामक ग्रंथ का प्रकाशन हर्ष का विषय है।

विदेशी शासन युग में जबकि अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजियत हम भारतीयों के लिए भी अभिमान का विषय बन रही थी, उस समय हिंदी खड़ी बोली की प्रतिभा ने कुछ ऐसे साहित्य सेवियों को उत्पन्न किया जिनकी सेवा और साधना का फल हमें आज मिला है। आचार्य द्विवेदी जी तथा उनके समकालीन लेखकों के व्यक्तित्व का परिचय साधारणतया हमें उनकी रचनाओं द्वारा प्राप्त होता है। किंतु यह परिचय अधूरा है। उनके वैयक्तिक पत्र इस अधूरी जानकारी को पूरा करते हैं। "विनोद" जी ने जिस परिश्रम से इन पत्रों का संकलन एवं संपादन किया है वह अभिनन्दनीय है।

इन पत्रों से हमें यह भी ज्ञात होता है कि हमारे साहित्य निर्माताओं ने देश के संकटकाल में किस अदम्य उत्साह, उत्कट विश्वास और कठोर साधना से हिंदी भाषा और साहित्य की निःस्वार्थ सेवा की थी।

हिंदुस्तानी एकेडेमी
उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद

धीरेन्द्रवर्मा
मंत्री

विषय-सूची

भूमिका

किसी महान् साहित्यिक के वास्तविक व्यक्तित्व की जानकारी के लिए उसकी साहित्यिक कृतियाँ जितनी उपादेय हैं, उनसे कहीं अधिक उपादेय उसके वैयक्तिक पत्र हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में अपने इष्ट-मित्रों, परिचित व्यक्तियों आदि को पत्र लिखता है। इनमें विचित्र प्रकार के विषयों के पत्र हो सकते हैं—जीवन की जटिल समस्याओं से संबद्ध पत्र, रोजमर्रा के काम-काज के पत्र, व्यावसायिक धंधों से संबद्ध पत्र या किन्हीं दार्शनिक, साहित्यिक, कलात्मक अथवा राजनैतिक पहलुओं से संबद्ध पत्र। किसी साहित्यिक कृति में कृतिकार का रूप प्रकट तो होता है, किन्तु वह कला एवं कल्पना के पर्दे के पीछे छिपकर आता है, जब कि पत्रों में उसका असली रूप दिखाई पड़ सकता है, बशर्ते उसके पत्र-लेखन में ईमानदारी बरती गई हो। जो लोग अपने जीवन में 'दुहरे व्यक्तित्व' के अभ्यासी हैं, उनके पत्रों में बनावटी-पन हो सकता है, उसमें वह निश्छल, अनाविल, भावप्रवाह, 'दिलको कलम के सहारे कागज पर रख देने की' प्रवृत्ति भी नहीं पाई जाती। यह दूसरी बात है कि कोई दक्ष मनोवैज्ञानिक उनकी इन कृत्रिम पत्रावलियों से भी उनके असली चरित्र का अनुमान करने में सफल हो जाय। यही कारण है कि पत्र-लेखन-कला के पार-खियों ने पत्रों का महत्व किसी व्यक्ति के काव्य से भी किसी अंश में अधिक माना है। पत्र भी कविता की भांति ही हृदय के उद्‌गार हैं, जहां पत्र-लेखक अपने हृदय को उंडेल कर रख देता है। पर हर एक व्यक्ति में यह क्षमता नहीं होती, प्रत्येक व्यक्ति को यह कला नहीं प्राप्त होती कि वह पत्र पर अपने हृदय को रख सके। इसीलिए पत्र-लेखन को भी 'कला' माना जाता है। अपने लेख "पत्र-लेखन-कला" में श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने पत्र-लेखन की अकृत्रिमता तथा निश्छलता पर पूरा जोर देते हुए लिखा है :—

"पत्र-लेखन-कला पर अधिक लिखने के पहले एक बात स्पष्ट कर देने की आवश्यकता है, वह यह है कि जो आदमी बज़ात खुद अच्छा नहीं है, वह अच्छा पत्र-लेखक हरगिज़ नहीं बन सकता। कृत्रिम ढंग से लिखे हुए पत्रों की पोल बड़ी आसानी से खुल जाती है। जिस तरह कोई कुशल व्यापारी रुपये को हाथ में लेते ही खरे-खोटे सिक्के की पहचान कर लेता है उसी तरह किसी सुसंस्कृत आदमी के

लिए स्वाभाविक और बनावटी पत्रों में भेद करना कोई मुश्किल बात नहीं है। इसके सिवा बने हुए पत्र कागजी नाव की तरह हैं, जो चल नहीं सकते। काठ की हांड़ी की तरह केवल एक बार आप उनसे काम ले सकते हैं। अच्छा पत्र-लेखक बनना अत्यन्त कठिन है। अन्य क्षेत्रों में तो आपको थोड़े से आदमियों का मुकाबला करना पड़ता है, पर यह क्षेत्र तो ऐसा है, जिसमें दुनिया आपकी प्रतिद्वन्द्विता के लिये खड़ी है, क्योंकि चिट्ठियां तो लाखों करोड़ों ही आदमी नित्यप्रति लिखा करते हैं।"

इस दृष्टिकोण से नगण्य से नगण्य, अदने से अदने आदमी के पत्र भी, यदि वे उपर्युक्त गुणों से संपन्न हैं, पत्र-लेखन-कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। किंतु हम यह नहीं मानते कि जो व्यक्ति "बज़ात खुद अच्छा नहीं है, वह अच्छा पत्र-लेखक हरगिज़ नहीं बन सकता।" राजनीतिज्ञों, कूटनीतिज्ञों, साहित्य जगत् के कूटनीतिज्ञों और 'दुहरे व्यक्तित्व' के लोग आमतौर से अच्छे नहीं होते, पर अच्छे पत्र-लेखक होते हैं। किन्हीं महान् साहित्यिकों, युगविधायक महापुरुषों, दक्ष राजनीतिज्ञों तथा गंभीर दार्शनिकों के पत्रों का दुहरा महत्व भी होता है, वे एक ओर पत्र-लेखन-कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं, दूसरी ओर साहित्यिक प्रगति ऐतिहासिक या राजनीतिक गतिविधि तथा दार्शनिक विचाधार का पूरा परिचय देते हैं। कीट्स, शेली, बायरन या जान्सन के पत्र अंगरेज़ी साहित्य की अपूर्व निधि हैं, तो नेपोलियन, मार्क्स, एंजेल्स या लेनिन के पत्र यूरोपीय इतिहास की गतिविधि के परिचायक हैं। कतिपय साहित्यिक उत्कृष्ट कोटि के पत्र-लेखक होते हैं। कवीन्द्र रवीन्द्र, तौल्स्तौय, रोमो रोलौ तथा स्टीफेन ज़्विग उच्चकोटि के पत्र-लेखक थे। उन्होंने कई पत्रों में अनेकों व्यक्तियों के जीवन की धाराओं को बदल दिया है। हिंदी के भी कई साहित्यिक पत्र-लेखन-कला में कुशल रहे हैं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, साहित्याचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा, श्रीधर पाठक आदि के कई पत्र साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इधर कुछ ही दिनों से हिंदी के साहित्यिकों का ध्यान इन साहित्यिक विभूतियों के पत्रों की ओर जाने लगा है। श्री राय कृष्ण-दास, मुरारीलाल केडिया, पं० बनारसीदास चतुर्वेदी, श्री रामेश्वर गुरू (जबलपुर), श्री लल्ली प्रसाद पांडेय (प्रयाग) आदि व्यक्तियों ने तथा नागरी प्रचारिणी सभा काशी और हिंदी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) आदि संस्थाओं ने द्विवेदी जी तथा पं० पद्म सिंह शर्मा आदि के पत्रों को सहेज कर रक्खा है। द्विवेदी जी के द्वारा कई साहित्यिकों तथा अन्य संपर्क में आने वाले लोगों को लिखे गए पत्रों का एक संग्रह इन्हीं पंक्तियों के लेखक के द्वारा प्रकाशित किया जा चुका है, जो भारतीय ज्ञानपीठ, काशी से छपा है। पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी तथा श्री हरिशंकर जी शर्मा के संपादकत्व में पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्रों का भी एक संकलन आत्माराम ऐंड संस के

यहां से पिछले वर्ष प्रकाशित हो चुका है। चतुर्वेदी जी के द्वारा संकलित शर्मा जी के पत्र प्रायः बहुत बाद के हैं। यद्यपि इनका भी साहित्यिक महत्व किसी कदर कम नहीं है, तथापि द्विवेदी युग की आरंभिक स्थिति का संकेत इन पत्रों से नहीं मिलता। ये पत्र उस समय के हैं, जब छायावाद-युग केवल आरंभ ही नहीं हुआ था, अपितु वह परिपक्व हो चुका था। पं० पद्मसिंह शर्मा के अनेक पत्र इससे बहुत पहले के भी उपलब्ध हैं। ये पत्र सन् १९०५ ई० से १९१३ तक के हैं। ये सभी पत्र नागरी प्रचारिणी सभा के पास हैं, जहां से उनकी प्रतिलिपि इन पंक्तियों के लेखक ने ली है। इनके साथ ही आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्रीधर पाठक, के भी अनेक पत्रों का संग्रह मैंने किया है।

साहित्याचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा अपने काल के महान् पंडित, भावुक आलोचक तथा स्वाभिमानी व्यक्ति थे। उनके इस व्यक्तित्व की झलक उनके प्रत्येक पत्र में दिखाई पड़ेगी। संस्कृत, हिंदी, फारसी तथा उर्दू के निष्णात् पंडित तथा ब्रजभाषा साहित्य के अपूर्व पारखी थे। बिहारी की सतसई पर उन्होंने जिस संजीवनी भाष्य की रचना की है, वह अधूरा होने पर भी शर्मा जी की कीर्ति का ज्वलन्त प्रतीक है। इस रचना में शर्मा जी ने संस्कृत, फारसी तथा उर्दू काव्यों की समानान्तर सूक्तियों का प्रचुर प्रयोग कर बिहारी के दोहों के साथ उनकी तुलना की है। यह दूसरी बात है कि आज के आलोचक को शर्मा जी की आलोचन-पद्धति केवल 'वल्लाह' या 'मुक़र्रर शाद' वाली मालूम हो तथा उसमें साहित्यालोचन की वैज्ञानिक दृष्टि का अभाव खटके, किन्तु इतना होते हुए भी वह इससे इन्कार नहीं करेगा कि शर्मा जी ने बिहारी के कलात्मक सौंदर्य को किसी सीमा तक पहचानने की कोशिश अवश्य की थी तथा वे एक भावुक सहृदय भी थे, कोरे अलंकारी पंडित नहीं। शर्मा जी के पांडित्य के विषय में दो मत नहीं हो सकते। स्वयं उनके गुरु पं० काशीनाथ जी तथा गुरुभाई पं० भीमसेन जी शास्त्री तक उनके पांडित्य के कायल थे। जहां तक फारसी साहित्य में उनके दखल का प्रश्न है, हाली तथा अकबर जैसे उर्दू के नामीगरामी शायर तक उनसे अपने नज़्म की दाद पाने में फख्र समझते थे। अकबर ने पं० पद्मसिंह शर्मा के पांडित्य एवं योग्यता की प्रशंसा करते हुए लिखा था—"आपकी क़ाबलियत और सुखनफ़हमी ने मुझको आपका आशक़ बना दिया है। मेरे लिये दुआ फरमाया कीजिये। अब बजुज़ यादे ख़ुदा और ज़िक्रे आख़रित के कुछ जी नहीं चाहता; लेकिन इसी रंग के सच्चे साथी नहीं मिलते। आप बहुत दूर हैं।" (महाकवि अकबर का पत्र पं० पद्मसिंह शर्मा के नाम, चतुर्वेदी जी के द्वारा "पद्मसिंह शर्मा के पत्र" की भूमिका में पृ० ३८ पर उद्धृत)।

द्विवेदी युग के प्रायः सभी लेखक तथा समालोचक नवोदित छायावाद के

प्रबल विरोधी थे। पं० पद्मसिंह शर्मा भी छायावाद के प्रशंसक नहीं थे। इतना होते हुए भी उन्होंने श्री मोहनलाल महतो 'वियोगी' की छायावादी कविताओं के संग्रह की प्रशंसा की थी तथा एक पत्र में श्री बालकृष्ण राव की कविताओं को भी सराहा था। अपने एक पत्र में उन्होंने श्री सुमित्रानन्दन पंत की मुलाकात का भी जिक्र किया है। पंत जी ने 'पल्लव' की भूमिका में ब्रजभाषा की पुरानी कविताओं की जो निन्दा की थी, वह शर्मा जी को नागवार जरूर गुजरी होगी और इसी संबंध में शर्मा जी ने लिखा है कि "इस बार पहली बार पं० सुमित्रानन्दन पंत से बिजनौर में मुलाकात हुई। आदमी तबीयत के साफ और "जैन्टिलमैन" मालूम हुए। "पल्लव" की भूमिका में जो पहले कवियों के विषय में अन्ट शन्ट, अनापशनाप ऊलजलूल लिख गए हैं, उसे वापस लेने को कहते थे। यह भी कहते थे कि ब्रजभाषा का विरोध करने के लिए मुझसे खासतौर पर कहा गया था, इसी से वैसा लिखना पड़ा इत्यादि। गला सुरीला है। सुर-ताल से वाक़िफ हैं। राग-रागनियों के नाम जानते हैं। आजकल के आदर्श छायावादी कवि में जो गुण होने चाहिएं सब हैं।"

(चतुर्वेदी जी के संग्रह पत्र संख्या ८३ से उद्धृत)।

प्रस्तुत संग्रह में संकलित शर्मा जी के पत्रों का साहित्यिक महत्व है। द्विवेदी जी की नैषधीय चरित्र चर्चा तथा अन्य कृतियों का इन पत्रों में उल्लेख हुआ है। शर्मा जी ने उन्हें लगातार साहित्यिक सेवा में जुटे रहने की प्रेरणा भी दी है। वही हमेशा उनके समक्ष एक न एक मांग पेश करते रहे हैं। द्विवेदी जी के सत्प्रयत्नों की प्रशंसा करते हुए उर्दू की रचनाओं के हिंदी कृतियों की तुलना में उन्होंने लिखा है—

"आपने बहुत अच्छा किया जो 'लिबर्टी' का अनुवाद कर दिया, उसका अनुवाद उर्दू में तो (सुना है) हो चुका है। बेचारी दुखिया हिंदी को उर्दू के सामने मुंह दिखाने योग्य आप ही का शुभोद्योग बना दे तो बना दे। और लोग का तो इधर ध्यान ही नहीं।.....पंडित जी इस समय उर्दू के पक्षपाती बड़े घोर परिश्रम के साथ काम कर रहे हैं। उन्होंने उर्दू को बड़े ऊंचे आसन पर बिठा दिया है। कोई आवश्यकीय विषय ऐसा नहीं जिसकी दो चार पुस्तकें उर्दू में न हों, पर हिंदी में क्या है? वही रद्दी उपन्यास या और कुछ भी। न मालूम हिंदी हितैषियों का ध्यान किधर है, जो अपने औचित्य को नहीं समझते। उर्दू को मुकाबले का चैलेंज और यह बेपरवाई। "विधाय वैरं सामर्षे नरोऽरौ य उदासते। प्रक्षिप्योदर्चिषं कक्षे शेरते-ऽभिमारुतम्॥"

(आचार्य महाबीर प्रसाद द्विवेदी को लिखा शर्मा जी की जुलाई ६ सन् १९०५ के पत्र से उद्धृत)।

एक अन्य पत्र में आचार्य द्विवेदी की समालोचना-शैली की प्रशंसा करते

हुए शर्मा जी ने लिखा है—"मुझे आपका समालोचना प्रकार बड़ा रुचता है। ....आपकी समालोचन शैली तो अपूर्व ही है।" आचार्य द्विवेदी का साहित्यिक व्यक्तित्व मुख्य रूप में कवि का न था, यद्यपि उन्होंने संस्कृत और हिंदी में कतिपय कविताएं भी लिखी हैं। एक पत्र में द्विवेदी जी के काव्य कौशल की दाद देते हुए शर्मा जी लिखते हैं—

"पंडित जी आप मुझे व्यर्थ में अतिशयोक्ति करने का उपालंभ देते हैं। सच जानिए मैंने आपके या आपकी कविता विषय में कोई अत्युक्ति नहीं की है। किन्तु जैसा अन्तःकरण ने लिखाया है, वैसा अविकल, लिख भर दिया है। चाहे मुझे अतिशयोक्ति का इलजाम फिर सुनना पड़े, परन्तु मैं 'काव्यमंजूषा' को देख कर यह कहे बिना कदापि नहीं रह सकता कि आप संस्कृत के भी अद्भुत कवि हैं, जैसे जचे तुले, सीधे सादे भावगर्भित और सरल शब्दों द्वारा अपने भाव अभिव्यक्त करने की शक्ति आप में है वह अन्य आधुनिक कविंमन्यों में नहीं देखी जाती।"

(जुलाई १९, सन् १९०५ के पत्र से उद्धृत)।

द्विवेदी जी को पं० पद्मसिंह शर्मा किस आदर की दृष्टि से देखते हैं यह तो उनके प्रत्येक पत्र की संबोधन-शैली से ही स्पष्ट है। पत्र के कलेवर में भी यह प्रत्येक वाक्य से प्रकट होती दिखाई पड़ती है। एक पत्र में शर्मा जी ने आचार्य द्विवेदी जी से हिंदी के व्याकरण की मांग पेश करते हुए लिखा है:—

"व्याकरण बनाने के लिए जिन बातों की आवश्यकता है, वे सब आप में हैं। सामग्री और अवकाश की कमी अलबत्ता हो सकती है। यह ठीक है कि आप से बहुत से कामों के लिए प्रार्थना की जाती है, और निःसंदेह आप कर भी बहुत कुछ रहे हैं। परन्तु फिर भी आपके सिवा कहें किससे? अभागे हिंदी साहित्य को तो केवल आप ही का सहारा है और बस। भाषा और व्याकरण विषयक प्रबंध को अवश्य लिखिए। हमें आशा है कि वह हिंदी व्याकरण की भूमिका होगी। और जब भूमिका बन गई तब व्याकरण भी किसी न किसी दिन बन ही जायगी। परमात्मा से प्रार्थना है कि इस काम में आपको पूरी सफलता प्राप्त हो।"

(आचार्य द्विवेदी जी को लिखे १०-९-०५ के पत्र से)।

शर्मा जी के कई पत्रों में भाषा विषयक शुद्धता-अशुद्धता पर भी संकेत मिलता है। एक स्थान पर 'जब' के साथ 'तो' के प्रयोग को शुद्ध बताते हुए वे लिखते हैं—

"आपका मत है कि जब के साथ "तब" का प्रयोग होना चाहिए "तो" का नहीं। परन्तु उर्दू के प्रसिद्ध कवि गालिब ने इसका प्रयोग इस प्रकार किया है—

"यह कह सकते हो हम दिल में नहीं हैं? पर यह बतलाओ।
कि जब दिल में तुम्हीं तुम हो तो आंखों से निहा क्यों हो?

और इस प्रकार के महाविरे हिंदी और उर्दू में एक सा ही होना चाहिए।"

(पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्र सं० ८ से उद्धृत)।

शर्मा जी के व्याकरण संबंधी विचार अन्य कई पत्रों में भी मिलेंगे। एक स्थान पर "ऐश्वरीय" शब्द की अशुद्धता पर संकेत किया गया है तथा संस्कृत व्याकरण के दूसरी भाषा के शब्द में हिंदी वर्तनी के प्रयोग का भी विरोध किया है।

"एक स्थान पर "ऐश्वरीय" शब्द है। वहां "ईश्वरीय" चाहिए, क्योंकि 'छ' प्रत्यय होने पर वृद्धि नहीं होती। यथा—स्वर्गीय, देवदत्तीय इत्यादि। तीसरा शब्द अनुग्रहीत है, वह अनुगृहीत होना चाहिए बस।

एक प्रार्थना और है। इस निबंध में किसी स्थान पर इस विषय पर और लिख दीजिए कि बहुत से लेखक संस्कृत व्याकरण के अनुसार दूसरी भाषा के शब्दों में भी परसवर्ण, षत्व तथा णत्व का विधान करते हैं, जो अनुचित है। यथा—"अन्जुमन्" की जगह 'अञ्जुमन्' इन्जील की जगह 'इञ्जील' आदि लिखते हैं। 'पोस्ट-मास्टर' के स्थान में "पोष्टमास्टर" और 'गवर्नमेंट' की जगह गवर्णमेण्ट आदि' लिखते हैं; जो सर्वथा अशुद्ध होता है।"

(पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्र सं० ९ से उद्धृत)।

पं० पद्मसिंह शर्मा के प्रत्येक पत्र में प्रसंगोपयुक्त संस्कृत फारसी और उर्दू की सूक्तियां उद्धृत मिलेगी। एक स्थान पर 'सरस्वती' में छपी हुई कविताओं को भद्दी बताने वालों के विषय में वे लिखते हैं—

'सरस्वती' की कविता कौन से नागरी वाले भद्दी बताते हैं? आरा के या बनारस के? उन बेचारों का भी कुछ दोष नहीं, किसी ने सच कहा है—

विपुल हृदयाभियोग्ये खिद्यति काव्ये जडो न मौर्ख्ये स्वे।
निंदति कंचुककारं प्रायः शुष्कस्तनी नारी॥

(सो नागरी सभा भी शुष्कस्तनी है—)

(पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्र सं० २९ से उद्धृत)।

इन सूक्तियों में कई स्थानों पर वे समानान्तर सूक्तियां भी उद्धृत करते हैं। इन पत्र संग्रह के कई पत्रों में एक साथ संस्कृत तथा फारसी-उर्दू की समान भाववाची सूक्तियां उद्धृत हैं। उदाहरण के लिये एक स्थान पर नैषधीय चरित्र में उर्दू के शायर सौदा के एक शेर के भावसाम्य का संकेत करते हुए उन्होंने लिखा है—

"विलम्बसे जीवित ! किं तवद्रुतं ज्वलत्पदस्ते हृदयं निकेतनम्।
जहासिनाद्यापि मृषासुखासिकामपूर्वमालस्यमिदं तवेदृशम्॥"

इस नैषधीय पद्य के साथ इसे (सौदा के शेर को) पढ़िए—

"कि इश्क़ का शौला है जो भड़का तो रहा क्या,
ए जान निकल जा कि लगे मुत्तलिस आतिस।।"

(पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्र संख्या ३२ से उद्धृत)।

शर्मा जी में भावुक सहृदयता तथा जिन्दादिली का इज़हार कई पद्यों के विषय में लिखे गए मत से मिलता है। "गाथासप्तशती" की एक गाथा की सरसता तथा भावप्रवणता का संकेत करते हुए वे लिखते हैं—

'गाथा सप्तशती' की एक गाथा हमें बहुत पसंद आई जिसका संस्कृत अनुवाद दे कर आपसे प्रार्थना करता हूं कि उसे किसी सुंदर संस्कृत छंद में हमारे लिये अनुवाद कर दीजिए, तद्यथा—

"स्फुरिते वामाक्षि, त्वभि यद्येष्यति स प्रियोद्य तत्सुचिरम्।
संमील्य दक्षिणं त्वयैवेतं प्रलोकयिष्यै।।"

यह किसी प्रोषितपतिका या विरहिणी की (वामनेत्र को फरकता देख कर) उक्ति है। नेत्र के लिए इनाम अच्छा मुक़र्रिर किया है।

उसी जिन्दादिली के कारण वे बिहारी के कायल हो गए। बिहारी सतसई के विषय में—जिन दिनों शर्मा जी का बिहारी-सतसई से परिचय हुआ ही था, वे लिखते हैं:—

"बिहारी-विहार" सतसई का संस्कृत अनुवाद—"श्रृंगार सप्तशती" तथा लाला चन्द्रिका सहित उसकी एक शुद्ध प्रति, ये सब हम देखना चाहते हैं, इसके लिये बनारस को लिखते हैं, शायद वहां से ये मिल जायं, क्या कहें सतसई हमें चिपट बैठी, गले का हार बन गई, देखिए कब इससे पीछा छूटे! नहीं नहीं, गलती की, यह दूर करने लायक नहीं, यह तो कंठ में धारण करने योग्य चीज़ है।"

(पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्र संख्या ३८ से उद्धृत)।

शर्मा जी के पत्रों में कहीं-कहीं बड़ा सुंदर व्यंग्य होता है। एक स्थान पर वे लिखते हैं:—

"......के शास्त्री परीक्षोत्तीर्ण होने का हाल पढ़ कर हमें भी आश्चर्य हुआ,.....को मैं खूब जानता हूं। मेरी कांगड़ी की स्थिति के समय यह वहां था, उस समय उसमें वैलक्षण्य नहीं था, जैसा इसके साथियों की दशा थी वैसा ही प्रायः इसकी थी। इसके पश्चात् फिर सिकन्दराबाद में भी देखा, तब भी वहां के अध्यापक आदिकों से कुछ विशेषता प्रकट नहीं हुई थी। ऐसी दशा में सहसा शास्त्री पास कर लेना आश्चर्यवह है। इसके अतिरिक्त इस साल पंजाब से एक और महाशय शास्त्री

पास हुए हैं, उनका नाम है....., उनका और मेरा अजमेर तथा हरद्वार में बहुत साथ रहा है। उस समय उनसे हिंदी भाषा तक लिखनी न आती थी, संस्कृत शब्दों का उच्चारण भी ठीक न होता था, अवस्था ३०-३५ वर्ष की होगी, वह भी पास हो गए। यह महाशय खत्री हैं। **संस्कृत के लिये शुभ लक्षण है।"**

(अंतिम वाक्य चुभती हुई व्यंग्योक्ति से गर्भित है)।

द्विवेदी जी पर संस्कृत कवियोंका गहरा प्रभाव था पर मराठी जीवन और साहित्य का भी उन पर प्रभाव था। मराठी कविता में संस्कृत के वृत्तोंका व्यवहार होता है। पदविन्यास भी प्रायः गद्य का सा ही रहता है। इसी मराठी के नमूने पर द्विवेदी जी ने हिंदी में पद रचना शुरू की। आगे चल कर द्विवेदीजी के प्रभाव के कारण हिंदी में परंपरा से व्यवहृत छन्दों के स्थान पर संस्कृत के वृत्तों का चलन पड़ा, जिसके कारण संस्कृत पदावली का समावेश बढ़ने लगा। श्री मैथिलीशरण गुप्त जी को १९-४-११ के अपने एक पत्र में द्विवेदी जी ने लिखा है—"मुसद्दस को किसी मौलवी से जरूर सुनिए और समझिए। हरिगीतिका छन्द बुरा नहीं। कविता खूब ओजस्विनी और यथास्थान कारुणिक होनी चाहिए। संभल संभल लिखिएगा। देरी हो तो हर्ज नहीं। नमूने के लिए थोड़ी 'संरस्वती' में पहले छापेंगे।" (द्विवेदी पत्रावली पृष्ठ ११६)। इसके अतिरिक्त द्विवेदी जी की प्रवृत्ति सीधी सादी भाषा की ओर भी थी। 'सरस्वती' पत्रिका द्वारा उन्होंने कविता में बोलचाल की भाषा का आग्रह किया। इसी कारण उनके काल में इतिवृत्तात्मक पद्यों का ढेर भी लग गया था।

द्विवेदी जी की भाषा में उर्दू का भी अच्छा पुट था। संभवतः इसका उनके मित्रों ने विरोध भी किया था। इसका प्रमाण उनके पत्रों में मिलता है। उन्होंने स्व० श्रीधर पाठक को २९-४-०६ के अपने एक पत्र में लिखा था—'सरस्वती' में कुछ लेख जानबूझ कर उर्दू मिश्रित भाषा में लिखे जाते हैं। इसी से हिंदी और उर्दू रीडरों की भाषा एक रक्खी गई है। 'सरस्वती' का प्रचार मदरसों में बहुत है। अतएव कोई कोई लेख मदरसों के लड़कों और मुदर्रिसों के साथ लाभ के लिए ही लिखे जाते हैं। ठेठ हिंदी या संस्कृत मिश्रित हिंदी का आदर करने वाले बहुत कम हैं। यदि 'सरस्वती' के खर्च का भार उन पर ही छोड़ दिया जाय तो उसका निकलना ही बंद हो जाय। परन्तु इससे आप यह न समझिए कि हम आपको लेख लिखने से मना करते हैं। यदि आपके लेख से हिंदी का कुछ भी हित होने की आशा हो, तो आप अवश्य लिखिए। हम उसे सिर आंखों पर लेंगे। पर यदि किसी की प्रणाली विशेष पर आक्षेप न हो तो अच्छा। लेख ऐसा हो कि उसकी बातें सब पर घटित हो सके। आपकी लेखनी से आपको भी 'सरस्वती' के विरोध में लेख अच्छा

न लगेगा, क्योंकि इस तरह की प्रणाली औरों की भी तो है। आप समझदार हैं, जो कुछ भी आप उचित समझेंगे वही करेंगे। प्रयाग में कुछ काम है। १०-५ दिन में वहां जाने का इरादा है। यदि जाना हुआ तो आपसे भी मिल लेंगे।" (द्विवेदी पत्रावली पृष्ठ ६१)। इससे उस समय की सरकारी नीति तथा उस नीति से सामंजस्य बनाए रखने की द्विवेदी जी की प्रवृत्ति का पता लगता है।

स्व० श्रीधर पाठक जी के जिन पत्रों को मैं यहां प्रकाशित कर रहा हूं, उनमें भी अधिकांश में उस काल की लेखन प्रणाली और व्याकरण संबंधी विवाद हैं। श्रीधर पाठक जी ने एक स्थान पर स्पष्ट लिखा है कि—"कर्ता को प्रायः सर्वत्रैव प्रकट रखना अर्थात् जहां उसे पुरानी प्रथा के अनुसार गुप्त रखना चाहिए, वहां भी उसका लाना, इससे अरोचकता उत्पन्न होती है और मुहाविरे का मज़ा मारा जाता है।" इसके बाद अनेक उदाहरण देकर द्विवेदी जी के विचारों का खंडन करते हुए अन्त में उन्होंने लिखा है—"मैं कोई नवीन प्रणाली निकालना नहीं चाहता, परन्तु शिष्ट क्षुण्ण प्रथाका परम पक्षपाती हूं—मुझे राजा शिवप्रसाद, पं० राधाचरण गोस्वामी, लाला बालमुकुन्द गुप्त की लेख शैली बहुत रुचती है—मुझे असीम प्रसन्नता हो यदि आप इन सुलेखकों का अनुसरण कर सकें।" (२२-८-०५ को प्रयाग से लिखा पत्र)। श्री बालमुकुन्द गुप्त जी के पत्रों में सुदूर अतीत की अनेक जानने योग्य बातें हैं। उस काल की साहित्यिक चोरी, साहित्यिक विवाद और एक दूसरे के प्रति प्रेम और आदर के अनेक उदाहरण गुप्त जी के पत्रों में भरे पड़े हैं। ये पत्र ऐसे हैं कि जिनका महत्व आज भी कम नहीं हुआ है। हिंदी भाषा और साहित्य के विकास को स्पष्ट करने के लिए इन पत्रों को प्रमाण रूप में रखा जा सकता है। और इसी दृष्टि से इन पंक्तियों के लेखकों ने स्व० महावीर प्रसाद द्विवेदी, पद्मसिंह शर्मा, श्रीधर पाठक, बालकृष्ण भट्ट और बालमुकुन्द गुप्त के महत्वपूर्ण पत्रों का यह संग्रह प्रस्तुत किया है। इन पत्रों से उस काल की ऐतिहासिक स्थिति पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है।

प्लाट नं० १५, सिद्धगिरि बाग
१५, अगस्त १९५७

बैजनाथ सिंह 'विनोद'

श्री पं० जनार्दन झा 'जनसीदन' जी के नाम

(१)

झांसी
६–१–०३

महाशय

आपका कृपापत्र आया। जीवनचरित[1] भी मिला। उसके छापने का हम यथा-समय विचार करेंगे। इसे आप किसके नाम से प्रकाशित कराना चाहते हैं। इसमें कुछ हेरफेर की जरूरत होगी।

आपने हमारे विषय में जो कुछ लिखा उसके लिए हम आपको धन्यवाद देते हैं।

बहुत अच्छा, आप अपनी कविता और अपना लेख भेजिए।
कृपा होगी।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२)

कानपुर
१२–२–०३

प्रिय पंडित जी, प्रणाम

शिक्षा-शतक की तो समाप्ति हो गई। अब 'पश्चात्ताप' की बेला है। कृपा करके उसे भी शीघ्र ही समाप्त करके भेज दीजिए तो छपना शुरू हो जाय।

आशा है, अब श्रीमान् राजा साहब[2] बखूबी आराम हो गए होंगे और सब काम-काज करने लगे होंगे।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

---

१. श्री जनार्दन झा 'जनसीदन' जी ने राजा कमलानन्द सिंह साहब की जीवनी लिखकर भेजी थी, जिसे सुधार कर 'सरस्वती'-संपादक को अपने नाम से छापने का अधिकार दिया था। द्विवेदी जी ने उसे जून, १९०३ की 'सरस्वती' में प्रकाशित किया था।

२. राजा कमलानंद सिंह।

(३)

झांसी
२४–२–०३

प्रिय महाशय

आपका अत्यन्त स्नेहसूचक पत्र आया। आपने जो कुछ हमारी प्रशंसा की उसके हम पात्र नहीं। यह आपके स्नेह—आपकी कृपा ही का फल है जो आप हमें ऐसा समझते हैं।

'सरस्वती' की जो भूलें आपने दिखाई उनके लिए हम कृतज्ञतापूर्वक धन्यवाद देते हैं। आपकी दिखाई हुई अनेक भूलें ठीक हैं। परन्तु पत्र द्वारा उन सबका विवेचन हमसे नहीं हो सकता। होने की आवश्यकता भी तादृश नहीं है। हमारे सदृश अल्पज्ञों से यदि भूलें हों तो कोई आश्चर्य की बात भी नहीं।

हिंदी का कोई सर्वसम्मत व्याकरण नहीं है। व्याकरण के बनानेवाले हमारे आपके सदृश ही सामान्य जन थे। अतः हिंदी लेखप्रणाली में किसके किए हुए नियम माने जायं? किया का बहुबचन किये ठीक ही है। परन्तु स्वर स्वतन्त्र हैं, व्यंजन अस्वंतन्त्र। इसलिए उच्चारण के अनुसार यदि किये भी लिखा जाय तो हो सकता है। हम तो दोनों लिखते हैं। जैसा जहां कलम से निकल जाय।

हिंदी लिखने में उर्दू-फारसी के शब्द आवें तो हम कोई हानि नहीं समझते। कोई-कोई उर्दू के शब्द अधिक बोलचाल में आते रहने के कारण अधिक सरल और अधिक बलपूर्ण हो गए हैं। सम्मति से सलाह ही अधिक सरल है। धूल में मिला देने की अपेक्षा खाक में मिला देना कहने ही में अधिक बल है।

अपना मत हमने आपकी आज्ञा के अनुसार लिख दिया। संभव है, आपका ही मत ठीक हो। सबके विचार पृथक्-पृथक् हुआ करते हैं।

जैसी कृपा है, वैसी ही बनाए रखिएगा। यही प्रार्थना है।

आपका
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(४)

झांसी

२३–३–०३

प्रिय महाशय

२० तारीख का आपका कृपापत्र आया। राजा साहब[1] का पत्र पढ़कर हमारा चित्त क्षुब्ध हो उठा। इसमें कोई संदेह नहीं। परन्तु हमारा क्षोभ हृदय के भीतर ही रहा। उससे हमने किसी प्रकार का अनौचित्य नहीं होने दिया। उसका उत्तर जो हमने राजा साहब को भेजा उसके पांच-चार दिन पीछे हमने उनका जीवनचरित समाप्त किया। उसमें उस क्षोभ का लवलेश भी आपको न मिलेगा। हम राजा साहव की उदारता और उनके भाषा-प्रेम पर मोहित हैं। अतएव यदि वे हमको उससे भी सख्त पत्र लिखते तो भी हम सिवाय विनय के और कुछ न कहते। यदि और कोई होता तो हम उसके पत्र का जवाब भर्तृहरि के उस श्लोक से देते जिसका चतुर्थ चरण है—

"मय्यप्यास्था न चेत्त्वयि मम सुतरामेष राजन् गतोऽस्मि"

परन्तु ऐसा करना हमारे शील के खिलाफ है। धनवानों में कितने पुरुष साहित्य-प्रेमी हैं? एक ही दो। उनको कटुवचन कहना हमारा धर्म नहीं है।

फ्रांस में दो कवि हो गए हैं। वे ११ वर्ष तक एक दूसरे से नहीं मिले। परंतु पत्र द्वारा ही उनका प्रगाढ़ स्नेह हो गया। यहां तक कि दोनों ने मिलकर पुस्तकें तक लिखीं। हमने समझा कि हमारा और राजा साहब का इतना पत्र-व्यवहार हो चुका है कि हम उनको उस कविता के विषय में लिख सकते हैं। हमको यह भासित हुआ कि वे उस कविता से प्रसन्न होंगे। यदि वे, जैसा आप अब लिखते हैं, सचमुच उसके देखने के लिए उत्कंठित हैं तो हम नहीं समझते, क्यों उन्होंने हमको उस प्रकार की कड़ी चिट्ठी लिखी। वह कविता अश्लील है, अतएव हम उसे राजा साहब के पास भेजने का साहस तबतक नहीं कर सकते जबतक वे स्वयं हमको उसके लिए यथोचित रीति पर न लिखें। उसकी नकल करने में हमें दो-तीन दिन लगेंगे। उसमें कोई २०० पंक्तियां हैं।

नायिका-भेद और इस प्रकार की कविता सब कोई अपने घर में पढ़ सकता है। परन्तु, नायिका-भेद का सर्वसाधारण में प्रचार अच्छा नहीं। हम इसके प्रतिकूल हैं। इस पर एक चित्र भी 'सरस्वती' में निकलेगा। इस प्रकार की पुस्तकों

---

१. राजा कमलानन्द सिंह।

के कर्त्ताओं को पुरस्कार देने में भी हानि नहीं। परन्तु सर्वसाधारण को इसका ज्ञान होना चाहिए कि अमुक अमुक को अमुक अमुक पुस्तक के लिए यह मिला। पर हमारा मत है—मन्दमति तो हम हई हैं, परन्तु इसमें हमारा क्या जोर। अपनी अपनी समझ तो है।

उस कविता[1] को राजा साहब के पास भेजने में हमने कोई हानि नहीं समझी। यदि राजा साहब या आपने वात्स्यायन, जयदेव, डल्लन, बाइरन आदि के ग्रंथ देखे हैं तो विशेष कहने की आवश्यकता नहीं। इनसे बड़ा ऋषि, भक्त और कवि कोई इस समय नहीं है।

रवीन्द्र बाबू की ग्रंथावली हमको कल तक मिल जाएगी। उसके लिए श्रीमान् राजा साहब से हमारा हार्दिक धन्यवाद कहिएगा। राजा साहब का प्रसाद समझ कर हम इन पुस्तकों को अत्यन्त प्रेम से पढ़ेंगे और सदैव पास रक्खेंगे। 'प्रसाद चिन्हानिपुरः फलानि"।

हमारी तो आपसे यही प्रार्थना थी कि आप भारतमित्र को कुछ न लिखिए। अपना लेख पढ़कर वह यह समझेगा कि हमी ने लिखा है और हमें फिर गालियां मिलेंगी। परन्तु यदि आपकी ऐसी ही इच्छा है तो छपने दीजिए।

कोई १ महीना हुआ होगा हमने आपको एक कार्ड लिखकर पूछा था कि 'साम्ब कमलानन्दम्"[2] में पं० अम्बिकादत्त व्यास का कहीं कोई जिकर क्यों नहीं है। क्या वह कार्ड आपको नहीं मिला? इसका उत्तर अब कृपा करके भेजिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

---

१. द्विवेदी जी ने 'सुहागरात' शीर्षक की अपनी बनाई एक कविता राजा साहब को गुप्त रीति से भेजी थी जिसे पढ़कर उनके मन में कुछ क्षोभ हुआ।

२. इस नाम का एक काव्य संस्कृत में सोती-सलेमपुर (दरभंगा) वासी पं० श्रीकांत मिश्र ने राजा साहब के संबंध में लिखा था, जो छपा हुआ है, जिसके लिए राजा साहब ने चार हजार पुरस्कार दिया था। —संपादक

(५)

झांसी
९–०३

प्रिय महोदय

आपका १३ ता० का कृपापत्र आया। हमने आपको कल पोस्टकार्ड भेजा है। श्रीमान् के पत्र का उत्तर भी दिया है। उससे आपको सरस्वती के समाचार विदित हुए होंगे। हम आपको और श्रीमान राजा साहब को धन्यवाद दे चुके हैं और फिर देते हैं। 'सरस्वती' का जारी रहना कम से कम अगले वर्ष तक निश्चय रहा। श्रीमान राजा साहब को हमलोग अभी और कोई कष्ट नहीं देना चाहते। हां, यदि उनके कोई परिचित सुहृद् इत्यादिकों में से कोई ऐसे हों जो हिंदी से प्रेम रखते हों तो उनके लिए 'सरस्वती' की कापियां मंगा करके उसे सहायता दे सकते हैं।

आपकी कविता में वे शब्द जिनके बारे में आपने लिखा है हम बदल देंगे।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(६)

झांसी
८ सितम्बर, ०३

प्रिय महाशय

आपका कृपाप्लावित पत्र आया। परमानन्द हुआ। हमारी प्रशंसा में आपने जो इतनी बड़ी भूमिका बांधी है, उसकी क्या अवश्यकता थी। पत्र द्वारा हमारा आपका विशेष परिचय हो गया है। अतएव प्रशंसात्मक लौकिकाचार अच्छा नहीं लगता।

'सरस्वती' के जिन शब्दों या वाक्यों पर आपने शंका की थी उनका स्मरण तक हमको नहीं। उस बात ही का विस्मरण हुए बहुत दिन हुए। यह एक अत्यन्त क्षुद्र बात थी। भला इस पर हम क्यों अप्रसन्न होने लगे। हम जानते हैं कि मनुष्य मात्र भूल करते हैं तो क्या हम उनसे बाहर हैं? हम इन बातों का बुरा नहीं मानते।

आप यदि मनोरंजक और उपयोगी कविताएँ और लेख 'सरस्वती' के लिए भेजेंगे तो हम उनको सहर्ष और सधन्यवाद छापेंगे। 'सरस्वती' के स्वामी उसे अगले वर्ष से बन्द करना चाहते हैं। परन्तु हमारी......इस बात का निश्चय नहीं हुआ। ग्राहकों की संख्या भी सवाई बढ़ी है, व्यय भी इस साल बहुत ही कम हुआ है, परन्तु आरम्भ से लगाकर आज तक उनका बहुत व्यय हुआ है। इसीलिए जारी रखते वे घबराते हैं। अगर 'सरस्वती' जीवित रही और हम उसे लिखते रहे तो लेख इत्यादि छपेंगे, नहीं तो सब धरे ही रह जायँगे। हमारे पास न मालूम कितने पड़े हैं। 'सरस्वती' जारी रहने से हम आपके लेख अवश्यमेव छापेंगे। आप लिखने का अभ्यास बनाए रहिए। आप तो विद्वान् हैं, अभ्यास से निपट मूढ़ विख्यात लेखक हो जाते हैं।

संस्कृत के जिस ग्रंथ[1] का आप अनुवाद कर रहे हैं, कीजिए। समाप्त होने पर हम उसे देखेंगे। आपकी कृति को देखना ही क्या है, आपके पत्र की रचना ही देखकर हमको आनन्द आता है, ग्रंथ देखकर तो और भी अधिक प्रमोद होगा।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(७)

झांसी
२४-९-०३

प्रिय महोदय

कृपापत्र आया। श्रीमान् की उदारता ने तो हमारे हृदय पर बड़ा ही असर पैदा किया है। हम यही ईश्वर से प्रार्थी हैं कि आपकी यह नवीन चिन्ता शीघ्र ही दूर हो जावे।

---

१. श्री जनार्दन झा 'जनसीदन' जी उन दिनों मैथिल महाकवि विद्यापति ठाकुर के 'पुरुष परीक्षा' ग्रन्थ का हिंदी अनुवाद कर रहे थे। उसी के विषय में उन्होंने द्विवेदी जी को लिखा था। समय पाकर उनका वह अनूदित ग्रंथ पुस्तकभंडार (लहरियासराय) से प्रकाशित हुआ।

श्रीमान ने बड़ी ही कृपा की जो 'सरस्वती' के लिए लेख लिखे। दीनबंधु बाबू का चरित शीघ्र ही भिजवाइए—फोटो समेत। आप 'सरस्वती' में छपने को जो लेख भेजें उनकी सरलता पर अधिक ध्यान रखें। 'सरस्वती' की भाषा के काठिन्य के विषय में बहुत शिकायतें आती हैं।

यह पता आपको कैसे मिला कि हमारे के........पुत्र भी हैं—न हमारे पुत्र न पुत्री।

हम अपने वंश में कूलद्रुम हो रहे हैं। वृद्धा माता और स्त्री के सिवाय हमारा और कोई निकट सम्बन्धी अथवा कुटुम्बी नहीं।

श्रीमान को देने लायक हमारे पास अपनी फोटो नहीं। तैयार कराके किसी समय हम भेंट करेंगे। हमारा चित्र श्रीमान ने अपने पास रखने योग्य समझा, इसलिए हम आपके कृतज्ञ हैं, यह हमारे लिए गौरव की बात है।

हमने आपको धन-सम्बन्धी सहायता के विषय में जो 'सरस्वती' का अपील लिखने को कहा था उसे लिखने को मना किया और लेख लिखने को नहीं मना किया, और जो आप जितने ही लिखेंगे उतना ही अधिक हम आपको धन्यवाद देंगे। वे दो कविताएँ जो आपने भेजी हैं उनका शेष भाग भी कृपा करके भेज दीजिए। 'सहायता' से हमारा अभिप्राय धन-संबंधी सहायता से है।

हमको यह जानकर बहुत सन्तोष और प्रसन्नता होती है कि आप 'सरस्वती' के ग्राहक बढ़ाने की चेष्टा कर रहे हैं। ऐसी ही दया बनाए रखिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(८)

झांसी
१२—११—०३

प्रिय महाशय

आपका कृपापत्र और निमंत्रणपत्र दोनों प्राप्त हुए। ईश्वर करे आपका यह सदनुष्ठान निर्विघ्न समाप्त हो। आपके श्रीमान की उदारता का परिचय हमको मिल चुका है। क्यों न ऐसे अच्छे काम में वे सहायता दें।

हमको बाबू नरनाथ झा की कविता छापने में उजर नहीं है। परन्तु ७०० कुंडलियों के लिए सात वर्ष नहीं तो ५ वर्ष अवश्य चाहिए। ऐसी बड़ी पुस्तक अलग

पुस्तकाकार ही छपनी चाहिए। आपका शिक्षाशतक छप रहा है। इसी महीने में निकलेगा। कृपा करके शेष भी शीघ्र ही भेज दीजिए और पश्चात्तापवाली कविता भी समग्र भेजिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(९)

झांसी
२८-१२-०३

प्रिय महाशय

कृपापत्र आया। गंगालहरी की एक प्रति बाबू नरनाथ झा को जाती है। स्टाम्प भेजने की जरूरत न थी।

अगर १० कुंडलिया भी एक बार में छपी तो १०० के लिए १० महीने चाहिए। रहिमनविलास आज दो वर्ष से छप रहा है तो भी समाप्ति नहीं हुई। उसके समाप्त होने पर हम बाबू साहब की कुंडलियों को छापने का विचार करेंगे।

आपके और श्रीमान के हम परम कृतज्ञ हैं। जबतक आपकी और श्रीमान की सहायता पूरी-पूरी न होगी तब तक 'सरस्वती' दीर्घायु भी न होगी।

'सरस्वती' के लेखों के विषय में आपने जो लिखा उसकी हम यथासाध्य परिपालना करेंगे।

आशा है, अब आप पहले से अच्छे होंगे।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१०)

दौलतपुर
१८-१-०४

प्रियवर

कृपापत्र मिला। आज से आप हमको जुही[1] कानपुर[1] के पते से पत्र भेजिएगा।

शिक्षाशतक के शेषांश की पहुंच हम भेज चुके हैं। बहुत अच्छा, आप यथावकाश प्रार्थनाशतक वगैरह को समाप्त कीजिएगा। कोई जल्दी नहीं। तबतक शिक्षा को छपने दीजिए।

दीनबंधु का चरित छप गया। हम प्रूफ देख चुके। परन्तु हमको उसके लिखने का तर्ज पसंद नहीं।

आपने हमारे विषय में राजासाहब को क्यों तकलीफ दी। ऐसा करने के लिए हमने तो आपसे प्रार्थना नहीं की—हमको जो जानते हैं या हमपर जिनका स्नेह है हम उनकी केवल कृपा के भिखारी हैं। तृणादपि लघुस्तूलः इत्यादि का स्मरण हमको हमेशा रहता है। इसलिए हमने याचकवृत्ति नहीं स्वीकार की। परन्तु ईश्वर की लीला समझ में नहीं आती। यदि ऐसा ही समय आया तो जिनका सालाना हिसाब रहता है और जिनको राज्यसम्बन्धी कम झमेले रहते हैं, पहले उन्हीं से याचना करेंगे। यों तो ब्राह्मण जन्म से भी और परंपरा से भी भिखारी है। परन्तु ब्राह्मण के एक भी लक्षण हमारे नहीं। अतः किस बल पर हम प्रतिग्रह का साहस करें। धृष्टता माफ कीजिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(११)

२-४-०४

प्रिय पंडित जी

कृपापत्र आया। २२ ता० का लिखा हुआ कल मिला। हम श्रीमान् की कृपा, श्रीमान् की प्रीति के भूखे, नहीं ऋणी हैं—नये पुराने का हमको जरा भर भी खयाल

---

१. मूल में जुही और कानपुर रोमन में भी था। किन्तु उसे देना हमने अनावश्यक समझा। —संपादक

नहीं। जो कुछ वे भेजेंगे उसे हम प्रेमोपहार[1] समझ कर अनमोल और अलभ्य मानेंगे। मैशीन को पैक (बन्द) करके भेजिएगा। दूर का मामला है। रेलवाले जिम्मेवारी भी वैसे नहीं लेते। नुकसान का डर रहता है।

और सब कुशल है।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१२)

दौलतपुर
(डाकघर, भोजपुर) रायबरेली

प्रियवर

कृपापत्र आया। कविता भी मिली। शिक्षाशतक का शेषांश भी भेजिए जिसमें हम उसे लगातार छापते जायं। बंद न करना पड़े। कविता बहुत अच्छी है। रसाल-पंचक को भी किसी समय प्रकाशित कर देंगे। पश्चात्तापशतक को आप थोड़ा ही सा भेजकर चुप हो गये। क्यों?

अभी हम कई एक महीना यहाँ रहेंगे। अनन्तर कानपुर जाने का विचार है। ३ महीने घर पर रहना काफी होगा। यहाँ देहात में दिल नहीं लगता। आम की फसल भी गई।

हम आपके राजा साहब और आपकी कृपा रूपी सहायता के हमेशा इच्छुक रहते हैं। उसके लिए समय और आवश्यकता क्या?

दीनबंधु का चरित शायद अगस्त में छप जाय। तस्वीर नहीं मिली।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

---

१. राजा साहब ने द्विवेदी जी को लिखा था कि आपके 'सरस्वती'-संपादन की मनोहरता से प्रसन्न होकर हम आपको कुछ पुरस्कार देना चाहते हैं। इस पर द्विवेदी जी ने लिखा था कि द्रव्य के अतिरिक्त कोई ऐसी चीज भेजिए जिसका हम नित्य उपयोग करें और जिससे हमें दैहिक और मानसिक सुख मिले। तब राजा साहब ने उन्हें एक कीमती बाइसिकिल (जो अपने लिए मंगवाई थी) भेजी और एक बंगला-काव्य-ग्रंथावली। —संपादक

(१३)

९-९-०४
जुही, कानपुर

प्रियवर

कृपापत्र आया। हमारे लिए आपको अभ्यर्थना की जरा भी जरूरत नहीं थी। जरूरत है प्रेम-पूजा की। उसी से आप हमको कृतकृत्य करते रहिए।

श्रीमान राजा कमलानन्द सिंह जी जो हिंदी के सुलेखकों को साहाय्य देना अपना कर्त्तव्य समझते हैं सो उनकी उदारता और कृपा है। श्रीमान होकर भी जिसने अपनी मातृभाषा—निःसहाय हिंदी पर दया-दृष्टि न की उसकी श्री की शोभा ही क्या? हमारी आन्तरिक इच्छा रहती है कि हम अपने इष्टमित्र और कृपालु सज्जनों को अपना स्मरण पत्र द्वारा कराया करें। परन्तु राजा साहब को हम बार-बार अकारण पत्र भेजकर उनके काम में विघ्न नहीं डालना चाहते।

यांचा बहुत बुरी वस्तु है। जब तक हाथ-पैर चलता है, हम इससे बचना चाहते हैं।

त्यजन्त्यसून् शर्म न मानिनो वरं
त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्।

जिनका हम पर प्रेम अथवा कृपा है उनसे इसके विपरीत व्रत का व्यवहार करने से डर लगता है कि कहीं वह कृपा भी उनकी हवा न हो जाय।

श्रीमान् समर्थ हैं। अगर वे 'सरस्वती' के लिए कुछ भी पूजा-सामग्री भेजेंगे तो वह उन्हें स्वीकार करेगी और यथोचित रीति पर उसकी सूचना भी छाप देगी। हम अपने क्षुद्र जीवन के लिए उनको कष्ट नहीं देना चाहते।

हमारी सब पुस्तकें अनेक बक्सों में बंद पड़ी हैं। यहां वर्ष दो वर्ष रहने का विचार है। मकान तलाश कर रहे हैं। मिल जाने पर आपको लिखेंगे। अभी हमको यह भी नहीं याद कि रामचरितेन्दुप्रकाश हमको मिला है या नहीं और हमने उसकी समालोचना लिख ली है या नहीं।

ईश्वर करे, आप सदैव प्रसन्न और स्वास्थ्यसंपन्न रहें।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१४)

जुही, कानपुर
२०–९–०४

श्रीमान कविशिरोमणि पंडित जनार्दन झा को बहुबिध प्रणाम। बिनय सुनिए। आपका अद्‌भुत पत्र आया। पढ़कर चित्त पर ऐसा आंतक जमा कि हम उसका वर्णन नहीं कर सकते। पुराणों में लिखा है कि देवता जब किसी पर प्रसन्न होते थे तब 'बरंब्रूहि' कहते थे। ठीक वैसे ही आपने हमसे 'बरंब्रूहि' का प्रश्न किया है। इससे अधिक श्रीमान् राजा कमलानन्द सिंह की उदारता, गुण-ग्राहकता और सामर्थ्य का और क्या उदाहरण हो सकता है। आपके उदाहरण से कर्ण, बलि और दधीचि आदि की कथा सब सच जान पड़ती है।

राजा साहब के लिए क्या कहना यशस्कर होगा, यह बतलाने में हम असमर्थ हैं। श्रीमान् की प्रतिष्ठा, कीर्ति और ख्याति अनन्य, अपरिमेय और दिग्व्यापिनी है। उनकी रचना हमारी समझ में है ही नहीं, उसकी किस तरह वृद्धि होगी, या कौन कार्य करने से वृद्धि होगी, यह बतलाना हमारे सामर्थ्य के सर्वदा बाहर है।

'सरस्वती' पर यदि कोई प्रसन्न होगा तो दो बातों से होगा। उसकी छपाई, सफाई, कागज इत्यादि पर या उसके लेखों पर। पहली बात का श्रेय छापनेवालों का है, जो 'सरस्वती' के मालिकों के आदमी हैं। दूसरी बात का भार हम पर है। जब हमने 'सरस्वती' का अधिकार अपने हाथ में लिया था तब उसकी दशा हीन—बहुत ही हीन—थी। पर अब वह बात नहीं। अब उसका प्रचार तब से करीब करीब दूना हो गया है। इसलिए उसकी अर्थकृच्छता जाती रही है। उसके मालिक आत्मावलम्बी हैं और ऐसे निर्धन भी नहीं हैं। जब 'सरस्वती' अच्छी हालत में न थी तब भी उन्होंने दूसरों की सहायता धन्यवाद-पूर्वक अस्वीकार कर दी। हां, १००-५० कापी 'सरस्वती' की यदि कोई लेकर अपनी गुणज्ञता दिखलाता तो कोई बात न थी। इस बात की सूचना हमने आपको भी दे दी थी। परन्तु शायद आप भूल गए होंगे।

रही हमारी बात। सो इस विषय में भी हमारी प्रार्थना सुनिए। महाराज गायकवाड़, ठाकुर साहब गोंडल, महाराज योधपुर ने संपादकों और लेखकों को हजारों रुपए से मदद की है। जसवन्तजसोभुषण के लिए तो सुनते हैं, लाखों मिले हैं। यह उस तरफ की बात हुई। आपकी तरफ हिंदी लेखकों को उत्साहित करने में आपके श्रीमान् ही अनन्वयालंकार के उदाहरण-स्वरूप हैं। यह हिंदी के लिए गौरव की बात है और श्रीमान् की उदारता की और गुणज्ञता की परिचायक है। व्यास जी के लिए आपने जो कुछ किया वह शायद ही किसी ने किया होगा। श्रीमान् संपत्ति का सद्‌व्यय करना जानते हैं। किसी ने ठीक कहा है—

अनुभवत ददत वित्तं मान्यान् मानयत सज्जनान् भजत।
अति - परुष - पवन - बिलुलित - दीपशिखा - चंचला लक्ष्मीः ॥

किसी लेखक या ग्रंथकार की जो सहायता की जाती है वह प्रायः उसे उत्साहित करने के लिए की जाती है। सो हम यों ही उत्साहित हो रहे हैं। आपके श्रीमान की हमपर कृपा-दृष्टि है, यह हमारे लिए सबसे अधिक उत्साह-वर्द्धक बात है। गत एप्रिल महीने तक हम एक ऐसे पद का उपभोग करते रहे जिसमें खूब द्रव्य-प्राप्ति भी थी और प्रभुत्व भी था। अब यद्यपि हम उससे अलग हो गए हैं तो भी आपके आशीर्वाद और श्रीमान् राजा साहेब जैसे महोदयों के कृपा-कटाक्ष से हमको इस समय भी इतनी प्राप्ति है कि उसके दशांश के लिए भी सैकड़ों अंगरेजी पढ़े अर्जियां लिए इधर-उधर घूमा करते हैं। कुछ चिट्ठियां हम आपको भेजते हैं, यह दो ही चार महीने के बीच की हैं। ये सभी राजाओं और राजाधिकारियों की हैं। इनसे आपको विदित हो जायगा कि इस तुच्छ जन पर आपके श्रीमान् ही की तरह और श्रीमानों की भी कृपा है। इन चिट्ठियों में एक और चिट्ठी भी आपको मिलेगी, जिससे आपको मालूम होगा कि जिस रेलवे में हम नौकर थे उसके एजेंट ने प्रसन्न होकर अभी इसी महीने ९०० रु० हमें इनाम देने का हुक्म दिया है। इन सब चिट्ठियों को कृपा करके वापस कर दीजिएगा।

यह सब लिखने का यह मतलब है कि परमेश्वर किसी प्रकार भोजन-वस्त्र हमें दिए जाता है। परन्तु आपके श्रीमान् राजा हैं, हम ब्राह्मण हैं। ब्राह्मण को लेने में क्या इनकार हो सकता है। दान और प्रतिग्रह दो ही तो उसके प्रधान काम हैं।

लेकिन खास हमारे लिए अभी सहायता अपेक्षित नहीं। यदि श्रीमान् की यह इच्छा हो कि लोग जानें कि वे हिंदी के कहां तक सहायक हैं, उसके उत्कर्ष-साधन में कहाँ तक यत्नवान् हैं, उसके लिखने वालों के कहाँ तक उत्साह-वर्द्धक हैं, तो अपने और 'सरस्वती' के संपादक के गौरव का पूरा विचार करके 'सरस्वती' के लेखों पर प्रसन्न होने का सूचक, जो चाहें भेज दें। तद्विषयक एक लेख 'सरस्वती' में निकल जायगा। हाँ, यदि आपकी सहायता की सूचना देना अनुचित समझा जायगा, तो वह रुपया हम 'सरस्वती' के मालिकों को भेज देंगे। उसके परिवर्तन में श्रीमान् को सरस्वती की यथासंख्य कापियां मिला करेंगी और हमसे उससे कुछ संबंध न रहेगा।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१५)

जुही, कानपुर
२०–१०–१९०४

प्रिय पंडितवर

आपका स्नेहसंवलित पत्र आया। आपने हमारी प्रशंसा लिखकर हमको लज्जित किया। हमारे पहले पत्र में आत्मश्लाघा का कुछ कालुष्य रहा हो तो आप क्षमा करें।

हमारी यही....अभिलाषा है कि आपके श्रीमान के यहाँ सदैव भीड़भाड़ रहे.....व काम-काज की अधिकता रहे और सदैव नए-नए उत्सवों का अनुष्ठान होता रहे। इन कारणों से यदि हमको पत्र लिखने के लिए श्रीमान को समय न मिले तो विषाद के बदले हमें उलटा हर्ष ही होगा।

शिक्षाशतक छपने गया। अब लगातार उसका प्रकाशन होता रहेगा, 'पश्चात्ताप' को भी पूरा कीजिए। पर श्रीमान राजा साहब का पत्र हमारे पास आने तक ठहरिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१६)

जुही, कानपुर
२०–११–०४

प्रिय पंडित जी, प्रणाम

कृपापत्र आया। वृन्दावन जाते समय आप अवश्य दर्शन दीजिए। हमारा इरादा अभी यहीं रहने का है।

बाइसिकिल के मूल्य की सीमा निर्दिष्ट हो चुकी है। इसलिए हम मेकर का नाम इत्यादि बताने की तादृश आवश्यकता नहीं समझते। उतने में जहाँ, जिस देश और जिस मेकर की मीडियम साइज मिल सके, भेजिए। हम उसे श्रीमान् का प्रेमोपहार समझ बड़े आदर और सम्मान से रक्खेंगे।

और....जहाँ तक हल्की, नफीस और मजबूत हो। उसके साथ उसकी सामग्री लैम्प, पूचर थे (?) जो अन्य चीजें रहती हैं वे सब रहें तो और भी अच्छा हो।

यदि मैंकर, नमूना या नाप इत्यादि जानना या देखना हो तो थामसन कं०, कलकत्ता के सूचीपत्र में देख लीजियेगा। न हो तो एक कार्ड भेजकर मंगा लीजिएगा। इस विषय में हम और कुछ लिखकर आपको अधिक कष्ट देना नहीं चाहते।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१७)

कानपुर
१२-१२-०४

प्रिय पंडित जी, प्रणाम

कृपापत्र आया। परमानन्द हुआ। आपका हम पर बड़ा प्रेम है। हम आपके ऋणी हैं। हम आपकी इस कृपा के पात्र तो नहीं। परन्तु यह आपकी उदारता है जो आप हमसे इतना स्नेह-भाव रखते हैं। आपने 'सरस्वती' के लेखों के विषय में जो लिखा वह हमारे लिए बहुत उत्साहजनक है। कभी-कभी हमारे दोषों की भी हमको सूचना देते रहिए।

छः महीने ही घर से अलग रहना आप बहुत समझते हैं। शायद आप सस्त्रीक वहाँ नहीं हैं। हम तो तीन-तीन वर्ष घर का मुँह नहीं देखते रहे हैं। श्रीमान आपको अपनी दृष्टि से दूर नहीं करना चाहते, यह तो आपके लिए सौभाग्य की बात है।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१८)

कानपुर
१३-१-०५

प्रणाम

४ ता० का कृपाकार्ड कल आया। बहुत दिन में पहुँचा। परमेश्वर करे श्रीमान शीघ्र ही सर्वतोभाव से नीरोग हो जायँ और पूर्ववत् प्राबल्य प्राप्त कर लें।

ऐसे मैनेजरों का देशी रियासतों में न होना ही अच्छा है। श्रीमान् ने यह काम जो अपने कनिष्ठ को देना चाहा है, वह बहुत अच्छा किया है।

और सब प्रकार कुशल है। कृपा बनाए रखिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१९)

कानपुर
१२–५–०५

प्रिय पंडित जी

कृपापत्र आया। हमारे घर के आदमी हमारे यहाँ कानपुर नहीं आए, वहीं काल की डाढ़ के बीच पड़े हैं। एक हमारी भांजी के देवी निकली हैं, इसीसे वे न बाहर रहने गए न यहाँ आए। हमने उनकी फिकर अब छोड़ दी है। यद्‌भवतु तद्‌भवतु।

आपकी चिट्‌ठी को पढ़कर असीम खेद हुआ। पर संतोष इतना ही है कि आप अपने कर्तव्य से नहीं चूके। प्रायः समापन्न विपत्तिकाले धियोपि पुँसां मलिनी भवन्ति।

कोई क्या कर सकता है। पर जब समझदार आदमी अपने कर्तव्य से भ्रष्ट होते हैं तब कुछ करते नहीं बन पड़ता। आज कल हमारे इस प्रकार के स्वदेशियों की जो दशा है, उसे देखकर दया और घृणा दोनों का आविर्भाव होता है। ईश्वर उनको सद्‌बुद्धि दे। किमधिकेन।

श्रीमदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२०)

कानपुर
२–४–०६

प्रिय महाशय

प्रणामानन्तर विदित हो कि कल कलकत्ते से एक मैशीन हमारे पास आ गई और अच्छी हालत में वह हमको मिल गई। इस कृपा के लिए हम श्रीमान के चिरकृतज्ञ रहेंगे। श्रीमान की उदारता और कृपा के सद्‌भाव तो सदैव ही से

हमारे हृत्पटल में अंकित हैं, पर अब वे हमारी आंखों को भी मूर्तिमान दिखाई देंगे—इस दयादृष्टि में इतनी विशेषता है। श्रीमान नीरोग रहें और चिरायु हों, यही हमारी ईश्वर से प्रार्थना है।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२१)

कानपुर
३-४-०६

प्रिय पंडित जी

कृपापत्र आया। मैशीन भी आ गई। दूसरा पत्र पढ़ लीजिए और यदि जरूरत हो तो श्रीमान को भी सुना दीजिए। हम आपके बहुत कृतज्ञ हैं। आपको धन्य-वाद दें तो क्या और न दें तो क्या, धन्यवाद एक कोरी नाचीज़ चीज़ है। बात यह है कि हम एक क्या दो मैशीन ले सकते हैं पर आपने तो यह अयाचित कृपा हमपर दिखलाई। उसे ग्रहण करने से हमको एक प्रकार की ग्लानि हुई कि जो वस्तु हम स्वयं लेने को समर्थ हैं उसके लिए मित्रों को कष्ट क्यों हमने दिया। अस्तु, मामला निर्विघ्न समाप्ति को पहुँच गया। इसका पक्ष अकेले आप ही को है।

आपके पत्र को पढ़कर हमे बेहद रंज हुआ। सच तो यह है कि सेवा वास्तव में बहुत ही निन्द्य है। हमने तो कोई २३ वर्ष इस वृत्ति में काटे। आपको तो शायद अभी इतने दिन न हुए हों। इससे यदि और कोई आपका जरिया जीविका का न हो तो जहां तक हो सके बने रहिए और श्रीमान् की शुभकामना करते रहिए और यथासाध्य सदुपदेश भी देते रहिए।

आपकी कविता का गंभीर भाव अब हमारी समझ में आया। आशा है श्रीमान ने भी उसका गूढ़ाशय समझ लिया होगा। रियासतों की हालत बड़ी खराब हो रही है। जिनके पास पृथ्वी है वे आलसी हो रहे हैं। उनसे उसका प्रबंध नहीं बन पड़ता। पर जिनमें वह शक्ति है उनके पास डब्बल भर भी जमीन नहीं। ईश्वर की गति तो देखिए। यदि हमारे प्रभु अंगरेज आप ही इस देश को छोड़ कर इंग्लैंड जाने लगें और जहाज पर सवार हो जायं तो हमको विश्वास है कि हम अकर्मण्य हिन्दुस्ता-नियों को एडन को तार भेजना पड़े कि आप लौट आइए, हम पर चाहे जैसा शासन

कीजिए, हम चूँ नहीं करेंगे। आपके बिना हमारा एक दिन भी सुख से नहीं कट सकैगा।

हमारा जो सद्भाव आपकी तरफ है उसमें कभी जरा भी न्यूनता नहीं हो सकती। इसका आप विश्वास रखिए।

"बसन्ति हि प्रेम्णि गुणा न वस्तूनि"

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२२)

कानपुर
८–४–०६

प्रियवर

आपका कृपापत्र आया। अत्यानंद हुआ।

जब तक आप श्रीनगर में हैं तबतक वैसा लेख लिखने की हम सलाह नहीं दे सकते, क्योंकि जो कुछ आप लिखेंगे उसका सम्बन्ध राजा साहब की रियासत से लोग लगावेंगे। और जिसके आश्रय में आदमी रहे उसके प्रतिकूल कुछ लिखना या उसकी भूलें आम में जाहिर करना शुभचिन्तक सेवक का धर्म नहीं। जहाँ हम अभी तक नौकर थे वहाँ की सैकड़ों बातें हमारी नजर में ऐसी आई कि लोगों के हजार कहने पर भी हमने उनको प्रकाशित करना उचित न समझा। यद्यपि उनके प्रकाशन से बहुत आदमियों को लाभ पहुंचता।

परन्तु यदि राजा साहब को कोई इन्कार न हो तो आप लिख सकते हैं। छपाने के पहले लेख आप दिखा लीजिएगा। और तो रियासतों की दशा छिपी नहीं, सब पर जाहिर है, राजा प्रजा दोनों पर।

श्रीमदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२३)

दौलतपुर
डा० भोजपुर, रायबरेली
१५-४-०६

प्रिय पंडित जी

कृपापत्र यहां मिला। हमारी बृद्ध माता बीमार हैं। उन्हीं को देखने आये। २-४ दिन में कानपुर वापस जायंगे।

भट्टाचार्य जी के चरित की सामग्री उनके पुत्र ने भेजी थी। उसमें पिता का नाम नहीं था। इससे हमने भी पूछने की परवा नहीं—वैसे ही रहने दिया।

आपके उस पत्र का वह वाक्य हमारे ध्यान में नहीं रहा, इससे वैसी गलती हुई। अब ऐसा न होगा, क्षमा कीजिए।

श्रीमान ने बाइसिकल के बारे में एक बहुत ही शालीनतासूचक पत्र हमको भेजा है। आपने तो देखा ही होगा। देना और नम्रता दिखाना सबका काम नहीं। हम श्रीमान् के सौजन्य पर मुग्ध हैं। इसी से हमने बाइसिकल की समालोचना भर कर दी है। उपहार की वस्तु की समालोचना ही क्या। वह तो सिर के बल लेना चाहिए। पर श्रीमान् ने पूछा कि वह कैसी है, इसलिए उसकी त्रुटियां हमने लिख दीं। हमको आशा है, हमारा सद्भाव देखकर श्रीमान् उसका विचार न करेंगें। लेकिन वाल्टर लाक को एक फटकार भेजनी चाहिए। उसने बड़ी बेपरवाही से मरम्मत की है। अगर यहां उसके ऐब ठीक न हुए ? तो शायद हमें भी उसे कलकत्ते या लाहौर भेजना पड़े।

प्रार्थनाशतक को पूरा कीजिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२४)

कानपुर
८-६-०६

बहुविध प्रणाम

कृपापत्र आया। सचमुच ही गंगातट पर भ्रमण करना बहुत ही सुखकर और शांतिदायक होता है—विशेषकर इस ऋतु में। हमारा भी घर गंगातट पर है। दो

चार दिन में वहीं जाने और सायंकाल तट पर बिताने का इरादा है। प्रार्थना के लिए अनेक धन्यवाद। बहुत दिन में आपने इस कविता को पूर्ण किया। आशा है 'सरस्वती' के पाठक इसे पढ़कर प्रसन्न होंगे।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२५)

कानपुर
१०–६–०६

बहुविध प्रणाम

आपकी भेजी हुई अतीचारादिनिर्णय नामक चार पुस्तकें मिलीं। अनेक धन्यवाद। शतक का उत्तरार्द्ध देख लिया। बहुत उत्तम है। तबीयत लगे तो और भी कुछ लिखिए।

विनत
महावीर

(२६)

कानपुर
१३–६–०६

प्रिय पंडित जी

११ ता० का कृपाकार्ड आया। २१ जून को घर जाने का इरादा है। प्रार्थना-शतक का संशोधन आने पर कर दिया जायगा। वीरांगना काव्य के लिए हम श्रीमान् के बहुत कृतज्ञ हैं! जान पड़ता है, श्रीमान् ने यह अनुवाद जल्दी में किया है। यदि श्रीमान् कोई गद्य लेख भी किसी अच्छे विषय पर भेजें तो कृपा हो।

विनत
महावीरप्रसाद

(२७)

दौलतपुर
३–७–०६

प्रिय पंडित जी

कृपाकार्ड मिला। यहां आये हमें कई दिन हुए। रोज सायंकाल गंगातट पर व्यतीत होता है। पानी खूब बरस रहा है। आम खाने का बड़ा आनन्द है। आशा है, आप भी सुख से कालयापन करते होंगे। प्रार्थना का पूर्वार्द्ध मिल गया। आज्ञानुसार परिवर्तन जरूर कर देंगे। जरा वृहत् लेख का नाम तो बतलाइए। 'सरस्वती' के लिए तो छोटे ही छोटे लेख अच्छे होंगे जिसमें एक लेख एक ही अंक में—या अधिक से अधिक दो में—समाप्त हो जाय। श्रीमान् को ईश्वर शीघ्र नीरोग करे।

भवदीय
महावीरप्रसाद

(२८)

दौलतपुर
२१–७–०६

प्रिय पंडित जी

प्रणाम। एलेक्शन पर जो कविता आपने भेजी, बड़ी मजेदार है। यह राजनैतिक विषय है। इससे 'सरस्वती' के नियमों के अनुसार इसके प्रकाशन में हम अक्षम है। इसे किसी और पत्र में छपवाइए, पर छपवाइए जरूर। पांच-चार दिन से हम अस्वस्थ हैं। कई फोड़े हो गए हैं। एक के कारण चल-फिर तक नहीं सकते।

भवदीय
म० प्र०

(२९)

दौलतपुर, डाकघर भोजपुर, रायबरेली
२७–७–०६

प्रिय पंडित जी

हम आजकल अपने जन्मग्राम आए हुए हैं। आपके उधर भी बहुत आम होता है और हमारे इधर भी। हम लुईकुने के अनुयायी हैं। फलों के हम भक्त हैं।

इसलिए कुछ दिनों के लिए हम यहां आम खाने चले आए हैं। ७ अगस्त तक कानपुर वापस जायंगे।

आपका पत्र कल मिला। बहुत अच्छा, उत्तरार्द्ध आ जाने पर हम आपकी प्रार्थना प्रकाशित करना आरम्भ करेंगे। माफ कीजिए, आपके पहले २५ पद्य जितने सरस हैं उतने दूसरे २५ नहीं हैं। व्यग्रता में शायद इनको आपने लिखा होगा। आपके घर की बीमारी का हाल सुनकर रंज हुआ। ईश्वर आपके कुटुम्बियों को सदैव नीरोग रक्खे।

प्रसन्नता और अप्रसन्नता के विषय में आपने जो लिखा उसका उत्तर हम इस पत्र में देना उचित नहीं समझते। हम सिर्फ आपको (१) 'दानार्थिनी मधुकरा यदि कर्णतालैः'—अथवा—(२) 'अस्मान् विचित्र वपुषश्चिरपृष्टलग्नान्' का स्मरण दिलाकर ही चुप रहते हैं।

हमारे पास एक ग्रामोफोन है। पर उसके रेकार्ड्स (चूड़ियां) अच्छी नहीं। उनके गीत हमें पसंद नहीं। यदि आप किसी ऐसी सड़क पर घूमने जायं जहां ग्रामोफोन की कोई बड़ी दूकान हो तो दो-चार रेकार्ड्स सुनिएगा और जो आपको पसंद हों उनका नाम, नम्बर और यदि संभव हो तो पूरा गीत हमें लिखिएगा तो हम मंगा लेंगे। रेकार्ड्स हिंदी, उर्दू या संस्कृत के हों, ७ इंचवाले। उर्दू में थियेटर की कोई अच्छी अच्छी गजलें हो तो हम लें लेंगे। संस्कृत में (१) 'बाल्ये दुःखातिरेकात्", (२) 'वेदानुद्धरते', (३) 'नमस्ते पतितजनभयहारी" हमारे पास है। अधिक कष्ट न उठाएगा। बड़ी जरूरत नहीं है।

श्रीमदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(३०)

कानपुर
७–१२–०६

प्रिय पंडित जी

२७ का पत्र मिला। हम छतरपुर चले गए थे। इससे उत्तर में विलंब हुआ। 'माधवनी' की बात से बड़ा कुतूहल हुआ।

आपने खूब कहा। मेडल हमारे लिए सर्वथा अयोग्य बात है। हम दिन भर यों ही कलम रगड़ा करते हैं। हम श्रीमान् की कृपा ही को हजार मेडल समझते हैं। मेडल देने का अभिप्राय शायद श्रीमान् का यह है कि लेखकों को उत्साह

मिले। हमें पहले ही से श्रीमान् ने काफी तौर पर उत्साहित कर दिया है। हमको छोड़कर और लोगों में से जिसका लेख श्रीमान् को पसंद हो उसे मेडल मिलना चाहिए। एडिटर को मेडल देना यों भी सुननेवालों के कान को खटकेगा। आप अपने लेख में यह कह सकते हैं कि किन कारणों से मेडल लेना अनुचित समझा। मेडल कलकत्ते में आप ही बनवाइए। उसके एक तरफ पानेवाले का नाम और '१९०५ की 'सरस्वती' में सबसे अच्छा लेख लिखने के उपलक्ष्य में' या ऐसा ही और कोई वाक्य रहे। दूसरी तरफ श्रीमान का मोनोग्राम इत्यादि।

यदि आपको यह पत्र मकान पर मिले तो इसका आशय आप श्रीमान् को लिख भेजिएगा या इसीको भेज दीजिएगा।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(३१)

दौलतपुर
७-३-०७

अनेक प्रणाम

कृपापत्र मिला। वृत्त विदित हुआ। प्रार्थनाशतक के विषय में हम जरूर अपराधी हैं। उसे और राजा साहब की एक कविता को अपनी ही चीज समझकर हमने अभी तक नहीं छापा। जहां हमारे अनेक लेख बरसों से पड़े हैं वहां उन्हें भी हमने डाल रक्खा। औरों के छापते रहे, क्योंकि औरों के मिजाज संभालने की अधिक जरूरत समझी। 'दशरथ के प्रति कैकेयी' तो हमने मार्च में छपने भेज दिया। प्रार्थनाशतक भी अब महीने दो महीने में शुरू करेंगे। कोई परिवर्तन दरकार नहीं। एक आध जगह था सो पहले ही हो गया है। ११ मार्च को कानपुर के लिए प्रस्थान है।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(३२)

जुही, कानपुर
१२–३–०७

बहुविध प्रणाम

कृपाकार्ड मिला। आपके पत्र का उत्तर हम दे चुके हैं। बड़ी कृपा है जो 'स्वाधीनता' आप श्रीमान् को सुना रहे हैं। दूसरे पत्र में सविस्तार समाचार भेजने का जो आपने वादा किया है सो शीघ्र पूरा कीजिए। स्वाधीनता इसी महीने छप चुकेगी।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(३३)

कानपुर
२८–३–०७

प्रियवर

प्रणाम। कृपापत्र मिला। श्रीमान् 'स्वाधीनता' का समर्पण स्वीकार करते हैं, यह हमारा अहोभाग्य है।

हमने देखा कि बंगाली लोग तक श्रीमान् को पुस्तकें समर्पण करते हैं और हम पर क्या सारी हिंदी भाषा पर श्रीमान की इतनी कृपा है, अतएव यदि हम उनकी इस कृपा—इस साहित्यप्रेम का—बदला एक आध पुस्तक समर्पण करके उन्हें न दें तो हम पर कृतघ्नता का दोष आता है। यही हमारा मुख्य अभिप्राय है।

पुरस्कार की बात न पूछिए। श्रीमान को अपने मान-सम्भ्रम की तरफ देखना चाहिए—हमारे नहीं। हमें यदि वे अपनी कृपा का पात्र बनाना चाहेंगे, तो हमें बनना ही पड़ेगा, क्योंकि वैसा न होने से श्रीमान् को क्या कम दुःख होगा? भाई बात यह है—

वसु यच्छतु वा न वा नरेशो
यदि कर्णेऽपि च भारतीं करोतु

यदि श्रीमान् 'राजारानी' का संशोधन हमसे करावेंगे तो हम क्या इन्कार कर सकेंगे? क्या यह भी संभव है? करना ही पड़ेगा—हम खुशी से करेंगे। हमने सम्पत्तिशास्त्र लिखना शुरू किया है। उसे कुछ दिन के लिए बंद कर देंगे। राजारानी

की कापी की सतरें दूर दूर हों, हाशिया भी हो, और लिपि साफ हो तो अच्छा, जिसमें संशोधन में सुभीता हो। साथ मूल पुस्तक भी भेजी जाय। कितनी बड़ी पुस्तक है? शब्द भी जरा दूर दूर हों तो और अच्छा हो।

आपने स्वाधीनता की भाषा को पसंद किया, यह सुनकर हमें परम संतोष हुआ। यह हमारे लिए बड़े उत्साह की बात है।

स्वाधीनता छप गई। भूमिका छप रही है। समर्पणपत्र लिखकर कल परसों तक छपने भेजेंगे। चिट्ठी देखते ही आप राजा साहब का पूरा नाम लिख भेजिए। कुमार कमलानंद सिंह ठीक है न? आपकी अस्वस्थता और आपके बहनोई के घर जलने का हाल सुनकर दुःख हुआ। हमें आप अपने दुख से दुखी समझिए।

विनत
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(३४)

जुही, कानपुर
१५–११–०७

प्रियवर पंडित जी

१२ नवम्बर का कृपापत्र मिला। नवम्बर की 'सरस्वती' को निकले १०-१२ दिन हुए। न मालूम क्यों श्रीमान् को नहीं मिली। कहीं खो तो नहीं गई?

३-४ दिन हुए एक पत्र और एक सचित्र 'स्वाधीनता' श्रीमान को मुंगेर के पते से भेजी है। आशा है वहां से वह श्रीनगर भेज दी गई होगी और श्रीमान को मिल गई होगी।

श्रीमान की तबीयत का हाल कृपा करके देते जाइए। हमें विश्वास है, आप सर्वथा हमारे हितचिन्तक हैं। हमसे अधिक आपको हमारा खयाल है।

विनीत
महावीर

(३५)

जुही, कानपुर
२७–११–०७

प्रियवर पंडित जी

ई० आई० आर० में हड़ताल होने के कारण आपका १८ नवम्बर का कृपा-पत्र हमें २५ को मिला। पढ़कर कृतार्थ हुए। स्वाधीनता की एक कापी आज हम आपको भेजते हैं। कृपा करके पहुंच लिखिएगा। यदि आपको इसमें कोई ऐसी त्रुटियां मिलें जिनके कारण भावार्थ समझने में बाधा आती हो तो कृपा करके, सूचित कीजिएगा। इसका दूसरा संस्करण भी निकलनेवाला है, उसमें उनका संशोधन हो जायगा। पहले संस्करण की ५०० कापियों में, सप्रेजी लिखते हैं थोड़ी ही रह गई है। इससे १००० कापियां और इसकी छापी जायंगी। श्रीमान के नाम का संयोग इसके साथ हो जाने से बुरी चीज भी अच्छी हो गई जान पड़ती है। श्रीमान को इसकी खबर दे दीजिएगा।

आपकी इस अनन्य कृपा के लिए हम चिरऋणी रहेंगे। जहां मंगलमय 'जनार्दन' हैं वहां विघ्न बाधाओं का नाम न लीजिए।

आपने अपने यहां की विवाह-प्रथा की जो बातें लिखीं वे हमारे लिए बिलकुल ही नई हैं। परन्तु इस प्रथा के कारण बहुत कुछ असुविधाएँ जरूर होती होंगी। इसमें परिवर्तन दरकार मालूम होता है। कन्या के लिए वर बहुत देख सुनकर और अनेक आगे-पीछे की बातों का विचार करके निश्चित करना चाहिए।

छोटी चिट्ठी लिखने के लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं। हमारा 'सम्पत्तिशास्त्र' समाप्तप्राय है। तीन चार परिच्छेद लिखना बाकी है। उसी में हम अपना अधिक समय लगाते हैं।

विनीत
महावीरप्रसाद

(३६)

दौलतपुर, डाकघर, भोजपुर, रायबरेली
३०–६–०८

प्रिय पंडित जी

१९ ता० का कृपापत्र मिला। आजकल हम अपने मकान पर हैं। अभी महीना पंद्रह रोज यहीं रहने का विचार है।

श्रीमान राजा साहब ने जो कुछ फरमाया उसके लिए हमारा कृतज्ञता-प्रकाशन उनपर प्रकट कर दीजिएगा।

झालरापाटन के महाराज बड़े ही विद्यारसिक हैं और उनके दीवान पं० परमानन्द चतुर्वेदी भी उन्हीं की तरह विद्याव्यसनी हैं। महाराज साहब ने अपनी राजधानी में एक विशाल पुस्तकालय अपने विद्वान दीवान के नाम से खोला है। हजार बारह सौ की पुस्तकें उसमें हर महीने नई मंगाई जाती हैं। बहुत अच्छा, संपत्ति शास्त्र छप जाने पर और महाराज के पास पहुँच जाने पर आपको सूचना देंगे।

उस चित्र को जाने दीजिए, और चित्रों में से जिसपर आपका जी चाहे फुरसत मिलने पर कविता भेजिएगा। आपसे सहायता की हमें बहुत कुछ आशा है।

अच्छी बात है, 'वक्तव्य' की नकल कर लीजिए। उत्तम तो तब होता जब श्रीमान उसे छपा डालते और एक आध कापी हमें भी भेज देते। पब्लिक के लिए नहीं, प्राइवेट तौर पर छपाने से हानि न थी। आपकी नकल पूरी हो जाय तो हमें खबर दीजिएगा।

भवदीय
महावीरप्रसाद

(३७)

जुही, कानपुर
३–८–०८

प्रियवर पंडित जी महाशय

२७ का कृपापत्र मिला। 'सरस्वती' की पुरानी जिल्दें प्रेस में एक भी नहीं रह गईं। कई लोगों ने हमें लिखा, पर नहीं मिली। हमारा इरादा प्रयाग जाने का है। वहां जाकर हम खुद ढूँढ़ेंगे और जो दूसरा तीसरा भाग फालतू मिला तो फौरन श्रीमान को भेज देंगे।

आपको बुखार आ गया, यह सुनकर दुख हुआ। आशा है, अब आप प्रकृतिस्थ होंगे।

विनीत
महावीरप्रसाद

(३८)

जुही, कानपुर
३१–१–०९

प्रणाम

कृपापत्र मिला। हमारी तबीयत अभी तक नहीं सुधरी। कोई डेढ़ वर्ष सख्त मेहनत करके संपत्तिशास्त्र लिखा। उसी का यह फल है। और कोई फल तो दूर रहा, यही पहले मिला। दिमाग खराब हो रहा है। रात को नींद नहीं आती। डाक्टरों ने कहा है, कुछ काम न करो, खूब हँसो, खेलो, गावो, बजावो। पर यहां जंगल में ये बातें कहां। कभी-कभी ग्रामोफोन बजाकर मनोरंजन किया करते हैं।

श्रीमान की कन्या का प्राणिग्रहण सुनकर बड़ी खुशी हुई। ईश्वर करे जोड़ी चिरायु रहे, खूब आनन्द से रहे।

बहुत ही अच्छा किया जो श्रीमान ने 'देवनागर' की सहायता की। श्रीमान की उदारता की कहां तक प्रशंसा की जाय। क्या ही अच्छा होता जो श्रीमान हैदराबाद या बरौदा की तरह किसी बड़े राज्य के अधीश्वर होते। पं० उमापतिदत्त को हमने कोई पुस्तक अभी क्या शायद कभी नहीं भेजी। उनके योग्य हमारे पास ऐसी पुस्तक है ही कौन। जो पुस्तकें कलकत्ते वालों को देखने को मिल सकती हैं वे हम अरण्यवासियों के लिए दुर्लभ हैं। उनका पत्र हमारे पास आया था। उन्होंने लेख आदि से सहायता मांगी थी। उसका हमने उत्तर तो अवश्य दिया था। पुस्तक कोई नहीं मिली। आप श्रीमान से पूछकर पुस्तक का नाम बतलाइए। हिंदी भाषा की उत्पत्ति और विक्रमांकदेवचरित चर्चा जो इंडियन प्रेस ने कुछ समय हुआ छापी थीं वे आपने देखी ही होंगी। यदि उनसे मतलब हो तो हम तत्काल भेजें। वह बहुत ही छोटी और तुच्छ पुस्तकें हैं, इसी से हमने श्रीमान को नहीं भेजीं। पर औरों को भी नहीं भेजीं। यह संभव नहीं कि कोई पुस्तक श्रीमान के पढ़ने योग्य हो और हम न भेजें। ये दोनों पुस्तकें हम आपके पास श्रीमान के लिए भेजते हैं। पहुँच लिखिएगा।

'सरस्वती' जान-बूझकर इस महीने में देरी से निकाली गई है। उसका मूल्य ४) कर दिया गया है। इससे ग्राहकों के उत्तर की अपेक्षा थी। कई दिन से वह भी जा रही है। इंडियन प्रेस को आज हम मुलायम नहीं सख्त चिट्ठी लिखते हैं कि क्यों अभी तक श्रीमान को नहीं भेजी गई।

'कविताकलाप' के लिए कविता जिस छंद में चाहिए कीजिए। १५ पद्य से अधिक न हों। पर खूब सरस और सरल हों। नमूने की कविता होनी चाहिए।

बोलचाल की भाषा ठीक होगी। पर जो आपको पसन्द हो। 'मोहिनी' को जाने दीजिए, आप कृपा करके ४ चित्रों पर लिखिए- (१) कृष्णविरहिणी राधिका, (२) गंगावतरण, (३) परशुराम (४) अहल्या। पिछले २ चित्र इसके साथ भेजते हैं। कविता के साथ लौटा दीजिएगा। गंगावरतण 'सरस्वती' में छप चुका है। उस पर किशोरीलाल गोस्वामी की कविता भी छप चुकी है। चित्र आपने देखा होगा। रविवर्मा के अंगरेजी चरित में कृष्णविरहिणी राधिका का चित्र चरित्र है। एक स्त्री शोक में बैठी है। सखी उसकी पास है। उसी पर लिखिए।

विनत
महा०

(३९)

दौलतपुर
९-२-०९

प्रियवर पंडित जी

कृपाकार्ड मिला। यह जानकर खुशी हुई कि आप अब नीरोग हैं। हमारा वही हाल है। होली के लिए घर आए हैं। १०-५ दिन में कानपुर लौट जायंगे। वहां से २-२ मास के लिए विश्रामार्थ अल्मोड़ा या हरद्वार जाने का विचार है। आपके लेख में आज्ञानुसार आवश्यकता होने पर उचित संशोधन कर दिया जायगा। आप खातिर जमा रखें। यथावकाश अन्यान्य उपयोगी लेख भेजने की कृपा करें।

विनीत
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(४०)

बनारस
१-२-०९

प्रणाम

कृपाकार्ड मिला। आपकी तबीयत पहले से अच्छी है, यह जानकर खुशी हुई। आपने जो नुस्खे भेजे तदर्थ धन्यवाद। भंग से हमें स्वाभाविक नफरत है। उसके नशे से और भी नींद नहीं आती। यहां जलवायु बदलने आए थे। पर भीड़-भड़का

इतना अधिक है कि और नहीं रह सकते। परसों कानपुर लौट जायंगे। एक महीने तक कुछ दिन के लिए अल्मोड़ा जाने का विचार है। आपका लेख शीघ्र निकालने की चेष्टा करेंगे।

विनीत
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(४१)

इंडियन प्रेस, प्रयाग
१८–१२–१९०९

प्रणाम

बहुत दिनों से आपके कुशल समाचार नहीं मिले। आशा है आप प्रसन्न और स्वस्थ हैं। हमारा स्वास्थ्य अच्छा नहीं। उन्निद्र रोग पीछा नहीं छोड़ता। जनवरी से कुछ समय के लिए 'सरस्वती' से छुट्टी लेने का विचार है। डाक्टरों की राय है कि हमारे लिए पूर्ण रीति से विश्राम लेना बहुत जरूरी है।

कहिए इस समय आप कहां हैं—क्या करते हैं। जीविका का क्या प्रबंध है? पौराणिक वृत्ति से जी तो नहीं ऊबा?

एक बार आपने कहा था कि हम कहीं किसी रजवाड़े में आपके लिए प्रबंध कर दें। रजवाड़ों की नौकरी कैसी होती है, इसका तो आपको अनुभव हो ही चुका है। हमारी राय में यदि आप कुछ काम करना चाहें तो इंडियन प्रेस में करें। प्रबंध हम कर देंगे। आप इधर उधर की दौड़धूप से बचेंगे। आराम से एक जगह रहेंगे। काम सिर्फ १० बजे से ५ बजे तक करना पड़ेगा। काम भी ऐसा जो आप पसंद करेंगे। अर्थात् सरस्वती-संबंधी कुछ काम तथा हिंदी और संस्कृत में प्रेस का और भी कुछ काम जो मिले। इसके सिवा यदि आप घर पर भी कुछ काम करना पसंद करेंगे तो यथासंभव उसका भी प्रबंध हो जायगा। उसका पुरस्कार आपको अलग मिलेगा। प्रेस के मालिक बड़े ही उदाराशय, सज्जन, दयालु और उत्साही हैं। आपको किसी तरह का कष्ट न होगा। कहिए कितने वेतन पर आप यहां आना पसंद करेंगे। हमारी सलाह है कि आप जरूर यहां आवें। आप यहां रहकर खुश होंगे।

यह मौका बहुत दिन में हाथ आया है पत्रोत्तर के आ० पोस्ट मास्टर,[1] मिरजापुर के पते से भेजिएगा।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(४२)

जुही, कानपुर
८–१–१०

प्रणाम

२ जनवरी का आपका कृपापत्र मिला। आपकी संस्कृत कविता बड़ी ही मनोहारिणी है। आपकी सारटीफिकेट हमने इंडियन प्रेस को भेज दी है। आप फौरन प्रयाग चले जाइए। हमने प्रेस के मालिक को लिख दिया है और खुद सब बातें कह भी आए हैं। पहुँचते ही आपको जगह मिल जाएगी। मिर्जापुर से हम आपको प्रयाग जाने के लिए लिख चुके हैं।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(४३)

जुही, कानपुर
१३–२–१०

प्रणाम

कृपाकार्ड मिला। 'राजर्षि' को छपने दीजिए। देखने की कोई वैसी जरूरत नहीं। मैं बहुत ही थोड़ा बंगला जानता हूं। स्वास्थ्य की वर्तमान अवस्था में कापी देखने में तकलीफ भी होगी। अतः क्षमा कीजिए।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

---

१. मूल पत्र में यह अंश अंग्रेजी में है। —सं०

(४४)

जुही, कानपुर
११–४–१०

प्रणाम

कृपापत्र मिला। इसी बृहस्पति या शुक्रवार को सुबह हम प्रयाग आवेंगे। बारह बजे तक प्रेस में ठहरेंगे। दर्शन दीजिएगा। बड़े बाबू को सूचना दे दीजिएगा।

भवदीय
महावीर प्र० द्विवेदी

(४५)

मिर्जापुर
२०–४–१०

प्रणाम

राजा साहब का शरीरान्त वृत्तान्त सुनकर बड़ा रंज हुआ। हिंदी के वे बड़े भारी हितचिन्तक और सहायक थे।

हमारे ऊपर तो उनकी विशेष रूप से कृपा थी। उनके स्थान की पूर्ति होना असंभव-सा जान पड़ता है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(४६)

जुही, कानपुर
–५–१०

प्रणाम

आशा है आपकी तबीयत अब अच्छी होगी।

आप निस्संदेह, निर्भय और निश्चल भाव से काम किए जाइए। बड़े बाबू के हृदय की महत्ता, उनकी सुजनता, उनकी न्यायशीलता, आश्रितजनों पर उनकी कृपा पर विश्वास रखिए। सब काम बनता ही चला जाएगा। बिगड़ने का डर नहीं।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(४७)

कमर्शल प्रेस, कानपुर
४–११–२८

सादर प्रणाम

बहुत मुद्दत के बाद आपका पत्र मिला। पुराना स्नेह नया हो उठा। परमानन्द हुआ। बड़ी कृपा की जो मेरा स्मरण किया।

आपके कुटुम्ब का हाल मालूम हुआ। ईश्वर करे आप और आपके पुत्रकलत्र प्रसन्न रहें। आपही की तरह मैं भी मकान पर कृषक हो गया हूँ। पर अवर्षण के कारण इस वर्ष यहां दुर्भिक्ष-सा है।

शरीर मेरा अत्यन्त जीर्ण है। कुछ समय से फिर उन्निद्र रोग हो गया है। निर्बलता की तो सीमा ही नहीं। यहां चिकित्सार्थ आया हूँ। एक मास शायद रहना पड़े।

स्नेहभाजन
म० प्र० द्विवेदी

(४८)

दौलतपुर (रायबरेली)
५–३–३१

श्रीमान् पंडित जी को प्रणाम

१ मार्च का पो० का० मिला। आप कासश्वास से तंग रहे हैं, यह सुनकर दु:ख हुआ। भाई, यह बार्धक्य व्याधियों का घर है। मेरी उन्निद्रता फिर उभड़ी है। बहुत कष्ट दे रही है।

मैं अब लिखने-पढ़ने योग्य नहीं रहा। बरसों से कुछ नहीं लिखा। बहुत तंग किए जाने पर ही कभी दस-पांच सतर खींचखांच देता हूँ। मौका मिलने पर आपकी आज्ञा का जरूर पालन करूंगा। खेद है, आपने कभी पहले उसकी याद नहीं दिलाई।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

मिल जाती है। यहां आने में तकलीफों की सीमा नहीं। और कोई होता तो मैं ऐसा न लिखता। आपके विषय में मेरा भाव और तरह का है। इसलिए सब बातें साफ साफ लिख दीं।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(५)

डाकखाना दौलतपुर (रायबरेली)
२७–५–१४

श्रीमान्

२३ का कृपाकार्ड मिला। नहीं, आपके आने से मुझे तकलीफ न होगी। तकलीफ तो आप ही को होगी। जैसे मैं रहता हूँ, आपको भी रहना पड़ेगा। आप सब तकलीफें बर्दाश्त कर सकें तो, खुशी से आ सकते हैं।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(६)

डाकखाना दौलतपुर (रायबरेली)
९–६–१४

प्रणाम

एक कृपा कीजिए। राजा राममोहन राय का जीवन चरित्र फुलिस्केप कागज के एक तरफ ४-५ पृष्ठों पर लिख भेजिए। यथासंभव शीघ्र। उनका रंगीन चित्र हाथ लग गया है। अगस्त में उसे निकालना है। एतदर्थ ही यह प्रार्थना है। उत्तर दीजिए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(७)

जुही, कानपुर
२–९–१४

नमस्कार

लखनऊ में अपने किसी मित्र को लिखिए राय श्री रामबहादुर का फोटो तलाश कर दें। मैंने डी० माल को लिखा था। उत्तर मिला—नहीं है। अब सी० मुल और लादी को लिखता हूँ। संभव है वहां से भी नकारोत्तर आवे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(८)

दौलतपुर
७–९–१४

नमस्कर

दोनों लेख मिल गए। इस कृपा के लिए धन्यवाद। गालिब पर आपका लेख अच्छा है। और उदाहरण जोड़ने की कोई वैसी आवश्यकता नहीं। आत्मतत्त्व प्रकाश के विषय में आप इंडियन प्रेस से पूछिए। मुझे आशा है, वे ले लेंगे। पुस्तक भेजने पर मुझे सूचना दीजिएगा। मैं भी लिख दूंगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(९)

जुही, कानपुर
१४–९–१४

नमस्कार

१२ का कार्ड मिला। भगवान् करे आपकी पत्नी शीघ्र ही नीरोग हो जायं। लिखिएगा अब कुछ १९–२० है।

घर रह कर तो आप काम करते ही हैं। कुछ समय से मैं आपको निःसंकोच लिख दिया करता हूँ और आप मेरी सहायता कर दिया करते हैं। बात यह है कि

अब मैं इस काम से ऊब गया हूँ। मैं चाहता हूँ कोई और इस काम को संभाले और मुझे कुछ विश्राम मिले। मेरे घर चले जाने पर यहां डाक लेना और संभालना पड़ेगा। इस कारण यहां रहने की जरूरत है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(१०)

जुही, कानपुर
६–१०–१४

प्रणाम

नैनीताल से भेजे हुए आपके दोनों कार्ड मिल गए। फोटो आ जाने पर लेख भेज दीजिएगा। बड़ी कृपा होगी।

और सब कुशल है।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(११)

जुही, कानपुर
३१–१–१५

नमस्कार

२९ का कार्ड मिला।

जंगीशाह ने फोटो भेजने को कहा है। अब आप इस विषय में अधिक कष्ट न उठाइए।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(१२)

जुही, कानपुर
१४–३–१६

नमस्कार

अब तो आप पूरे शास्त्री हो गए। शास्त्र के तीन तीन वचन लिखने लगे। पर शास्त्रों में मेरी भक्ति नहीं। इस निवेदन को भी ध्यान में रखिएगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(१३)

जुही, कानपुर
६–११–१६

श्रीमन्

कृपाकार्ड मिला। आइए, दर्शन दीजिए, कृपा होगी।

आप शायद जानते ही होंगे कि मैं शहर से ३-४ मील दूर देहात में क्या जंगल में रहता हूँ। पहले मैं यहाँ आराम से था। पर कई कारणों से अब तकलीफ में हूँ। यदि आप अपने हाथ से भोजन बना सकें और माफ कीजिए बर्तन चौका भी कर सकें तो आप यहीं चले आइए, अन्यथा नहीं। क्योंकि यहाँ अहाते भर में इस समय एक भी ऐसा आदमी नहीं जो चौका बर्तन कर सकता हो। इसी से शिष्टता के विरुद्ध मैंने यह बात साफ साफ लिख दी कि ऐसा न हो जो आपको तकलीफ दे।

भवदीय
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(१४)

जुही, कानपुर
२३–११–१६

नमस्ते

पंचदशी मिली। पसंद आई। समालोचना लिख ली।

गल्प शब्द बंगला में ही अधिक व्यवहृत होता है। हिंदी में क्यों लिया जाय? आख्यायिका या कहानी से क्या काम नहीं चल सकता?

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(१५)

दौलतपुर, रायबरेली
५–१–१७

प्रणाम

पत्र मिला। चकबस्त जी की कविता हिंदी वालों के लिए क्लिष्ट है। पर छाप दूँगा। शायद आपकी प्रार्थना पर वे कभी एक आध कविता सरल भी दे दें।

चादर एक आध दिन में भेजूँगा। पारसल बनाना है।

'नेशनल वीक' पर आप लिख सकते हैं। पर जनवरी की सरस्वती तो कंपोज हो चुकी। फरवरी के लिए बातें अगर पुरानी न हो जायं तो भेजिए।

प्रतिभा के लिए लेख लिखने की चेष्टा करूंगा। अभी ७, ८ रोज फुरसत नहीं। बाद को।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(१६)

दौलतपुर रायबरेली
१५–३–१८

प्रणाम

खेद है आप बीमार पड़ गए। संभाल कर रहा कीजिए।

मुझे एक नया रोग सता रहा है। कभी कभी गश आ जाता है। उस दिन

बिंदकी रोड स्टेशन पर एक घंटा बेहोश रहा। तीन दौरे हो चुके। मानसिक कमजोरी बढ़ गई है। कहानी मिली। धन्यवाद, बहुत अच्छी तो नहीं, पर छाप दूँगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(१७)

दौलतपुर
२४–४–१८

प्रणाम

कहानी मिली। बहुत पसंद।

भानजी का व्याह यहीं से ७ मई को होगा। मैं बड़ा अभागा, आप बड़े पुण्य-वान, छोटी भानजी को न्यूमोनिया है। घर में स्त्री नहीं। सिर्फ एक है दूर के रिश्ते की। कौन बिटिया की सेवा करे कौन व्याह का सामान जुटावे। 'स्वरूपस्तुते—का ही व्यथित —

म० प्र० द्विवेदी

(१८)

दौलतपुर, रायबरेली
१६–१२–१९१८

प्रणाम

९ का पो० का० आज मिला। एक हफ्ते से मैं यहां की धूल फाँक रहा हूँ। खेत यो हीं पड़े हैं। उन्हीं से धूल उड़ती है, तबीयत कुछ अच्छी है। जान पड़ता है विश्राम से आराम मिलेगा।

शुकुल जी बड़े सज्जन, बड़े सरस हृदय और हास्य के पूरे अवतार हैं। कहानी मिल गई होगी। जवाब १००, ५० चिट्ठियां जमा हो जाने पर वे देते हैं। मैं उन्हें कुछ न लिखूंगा। मेरी प्रार्थना है कि आप खुद उन्हें लिखें। उसमें डांट भी हो (फट-कार भी हो) हास्य भी हो, परिहास भी हो, काहिनी की संहिता भी हो और थोड़ा सा काव्य रस भी हो। बहुत प्रसन्न होंगे। आपसे घनिष्टता करने लगेंगे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(१९)

दौलतपुर, रायबरेली
२५–४–१९

प्रणाम

२२ का पोस्टकार्ड मिला। बड़ी बहन के न रहने का अशुभ समाचार सुनकर बड़ा दुःख हुआ। बड़ी बहन मां के बराबर होती है। मैं इस दुख का भुक्तभोगी हूँ। आपके दुख से दुखी हूँ।

यह दुष्टता किसने की। क्यों भारतमित्र को ऐसी खबर भेजी। इससे आपका लाभ ही होगा। आपकी उम्र बढ़ेगी। ईश्वर आपको शतायु करे।

कल कानपुर जाऊँगा।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(२०)

जुही, कानपुर
२१–२–२०

प्रणाम

पो० का० मिला। दुख है, आपके घर में एक न एक पड़ा ही रहता है। ईश्वर सबको आरोग्य दे।

२ दिन बाद प्रयाग से कल लौटा। आज दिसंबर की प्रतिभा पढ़ी। स्वार्थ की समालोचना पढ़कर बड़ा आनन्द आया। रास्ते की थकावट दूर हो गई। कई दफे हँसी रोके न रुकी। पद्मसिंह जी की कृति मालूम होती है। शायद गरज कर ज्ञानमंडल की गुहा छोड़ दी। सिंह ही ठहरे।

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

श्री पं० कामताप्रसाद गुरुजी के नाम

(१)

दौलतपुर, रायबरेली
१८–७–२७

नमोनमः

सेठ गोविन्ददास जी की आप पर बड़ी कृपा थी। शायद अब भी है। आपही की सलाह से मैंने उनका गुणगान सरस्वती में होने दिया था। आप ही की सिफारिश और सेठ जी ही की उदारता के भरोसे अपनी ३ पुस्तकें शारदा पुस्तकमाला को मैंने दी थीं। आशा तो यह थी कि सभी पुस्तकें मैं दूँ, पर तीन ही कठिनता से छप सकीं। यह छः सात वर्ष की बात है। मुझे इन पुस्तकों के हिसाब में ४०० रु० मिल चुके हैं। लगभग इतने ही और चाहिए। परन्तु देना लेना और पुस्तकें बेचना तो दूर, अब तो मेरे पत्रों का उत्तर देने वाला भी कोई नहीं। मैं इस बात का उलाहना बाबू गोविन्ददास को दे चुका हूँ। उन्होंने इस मामले का निपटारा कर देने का वचन भी दिया है। महाबलेश्वर से शायद वे अबतक लौट आये हों। कृपा करके उनसे मिलिए और यथासमय मेरा बकाया मुझे भिजवाने का प्रबन्ध करा दीजिए। मुझे रुपये की इस समय बड़ी जरूरत है। बाबू साहब चाहें तो मेरी इतनी पूर्ति सहज-ही कर सकते हैं। पुस्तकें अन्यत्र छपाने की भी अनुमति दिलाइए। उत्तर देने की कृपा कीजिए।

पंडित कामताप्रसाद गुरू
असिस्टेंट मास्टर, ट्रेनिंग कालेज,
जबलपुर सिटी

भावाक
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२)

दौलतपुर, रायबरेली
२६–७–२७

प्रणाम

२१ का पोस्टकार्ड मिला। कृतज्ञ हुआ।

मालूम नहीं, कबतक सेठ गोविन्ददास जी कलकत्ते से लौटें। बताइए। उनके लौटते ही कृपा करके मेरा काम करा दीजिये। वे बड़े दीर्घसूत्री मालूम होते हैं।

बिना आपके अंकुश लगाये काम न होगा । वे चाहें तो बात की बात में मेरी कार्य्य-पूर्ति कर सकते हैं। १० हजार अभी उनके कुटुम्ब ने परोपकार में दिये हैं। मेरे लिये तो इसके दशांश से भी कम का प्रबन्ध करना है। इस काम को मैं आप ही पर छोड़ता हूँ।

श्रीयुत पंडित कामताप्रसाद जी गुरू
"अध्यापक ट्रेनिंग कालेज"
गढ़ा-फाटक, जबलपुर

भावाक
म० प्र० द्विवेदी

(३)

दौलतपुर, रायबरेली
६-८-२७

नमोनमः

२ अगस्त का पत्र मिला। बहुत कुछ सान्त्वना हुई। सेठ साहब की चित्तवृत्ति पहले कुछ और तरह की थी अब कुछ और तरह की हो गई है। पहले उनमें मातृ-भाषा भक्ति प्रधान थी, अब देशभक्ति। यदि आप इस मामले में दिलचस्पी न दिखावेंगे तो कुछ होने का नहीं। सेठ साहब का परिचय और गुणगान आपही ने कराया था। अब आप ही मेरी सहायता कीजिये। इनके लिए दो चार सौ रुपये कोई चीज नहीं। मेरे लिये बहुत कुछ है। कृपा करके जैसे हो वैसे यह काम करा दीजिए। मुझे अब आपही का भरोसा है। एक हफ्ते बाद लिखिएगा क्या हुआ।

पंडित कामताप्रसाद जी गुरू
गढ़ा-फाटक, जबलपुर

आपका
म० प्र० द्विवेदी

(४)

दौलतपुर, रायबरेली
१३-८-२७

प्रणाम

बाबू गोविन्ददास का जो जवाब आया वह बिलकुल ही निराशाजनक है। हिसाब जो उन्होंने लिखा है वह भी गलत है। मैंने जो चिट्ठी आज उनको भेजी है उसकी नकल इसी लिफाफे के अन्दर आपके अवलोकनार्थ भेजता हूँ।

मुझे पुस्तक-प्रकाशकों से नफरत सी होती जाती है। पर यह जबलपुर का मामला तो बहुत ही खेद जनक है। आप जो जानते कि यह दशा होगी तो मुझे कभी न फंसाते। अब क्या करना चाहिए लिखिए। बाबू साहब को भेजी गई मेरी चिट्ठी की नकल मुझे लौटा दीजियेगा, अपनी फाइल पर रक्खूँगा।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

पुनश्च—मेरी इस चिट्ठी को पढ़कर बाबू साहब से जरा मिलिए। मन्दिर को कर्ज न सही मुझी को ४०० रु० कर्ज दें और मेरी रायल्टी से, मन्दिर से, वसूल करते रहें।

पं० कामताप्रसाद जी गुरू के नाम

(५)

दौलतपुर, रायबरेली
२३–१–२९

नमस्कार

मेरी पुस्तकों के सम्बन्ध में आपका पत्र आये मुद्दत हुई। आपकी सलाह के मुताबिक मैं अब तक चुपचाप बैठा रहा। कृपा करके सेठ गोयिन्ददासजी को फिर याद दिलाइए। बड़ी कृपा हो जो वे मेरा अविशिष्ट प्राप्य अंश किसी तरह दें या दिला दें और पुस्तकें अन्यत्र छपाने की अनुमति भी दे दें। मैं विशेष रुग्ण हो रहा हूँ। शरीर का कुछ ठिकाना नहीं। कुछ दान करना चाहता हूँ। यह रुपया मिल जाय तो इसे भी हिन्दू विश्वविद्यालय या और किसी संस्था को अर्पण कर दूँ। यदि सेठ साहब कुछ न कर सकें तो कृपा करके वैसा उत्तर ही दे दें। मैं किसी पत्र में एक छोटा सा लेख देकर तद्द्वारा अवशिष्ट रुपया और पुस्तकें गोविन्दार्पण कर दूँगा। वह भी एक प्रकार का दान ही होगा।

पं० कामताप्रसाद गुरू जी के नाम

कृपैषी
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(६)

दौलतपुर, रायबरेली
१७-३-३३

प्रणाम

राष्ट्रीय हिन्दी-मन्दिर और शारदा पुस्तकमाला का क्या हाल है? मुद्दतों से हिसाब तक मेरी पुस्तकों का मुझे नहीं भेजा गया। आप मुझे दे सकते हों तो शरणदान दीजिये। कुछ मुझे मिलना हो तो भिजवाइए। मैं तो यह भी नहीं जानता कि किससे इस विषय में पूछ पांछ करूं। रसज्ञरंजन की मांग की चिट्ठियां कभी कभी मेरे पास आती हैं। आज्ञा मिले तो उसे अन्यत्र छपवा दूँ।

आशा है, आप अच्छी तरह हैं। मैं तो बहुत ही क्षीणप्राण हो रहा हूँ।

पंडित कामताप्रसाद जी गुरु
गढ़ा फाटक, जबलपुर

कृपापात्र
म० प्र० द्विवेदी

(७)

दौलतपुर, रायबरेली
२३-५-३०

नमस्कार

हिन्दुस्तानी अकादमी १००० रु० देकर मुझसे ३ लेक्चर हिन्दी विषय में दिलाना चाहती है। मैं यह काम नहीं कर सकता। मैंने आपका और बाबू श्याम-सुन्दरदास का नाम दे दिया है। सूचनार्थ निवेदन है।

पंडित कामताप्रसाद गुरू
गढ़ा-फाटक, जबलपुर सिटी

आपका
म० प्र० द्विवेदी

(८)

दौलतपुर, रायबरेली
६-४-३३

नमस्कार

चिट्ठी मिली। उत्तर यह है कि कोई १२, १४ वर्ष से सेठ निहालसिंह से मेरा पत्रव्यवहार नहीं। जब था तब सिर्फ सरस्वती के लेखक की हैसियत से।

वे लेख भेजते थे, मैं पुरस्कार। कभी खानगी या निजी बातों के सम्बन्ध में एक अक्षर तक नहीं लिखा गया न उनसे, न मुझसे। मुझे उनका कुछ भी हाल मालूम नहीं। उनका वर्तमान पता तक ज्ञात नहीं। फिर भी यदि आप समझते हों कि मेरे लिखने से यागेश्वर का काम हो जायगा तो सिंह जी का पता लिखिए और जैसी चिट्ठी आप लिखना चाहते हों वैसी का मसविदा भी, अंगरेजी में। मैं उसीकी नकल आपको भेज दूँगा। आप ही उसे पोस्ट कर दें। मेरी दिमागी हालत दयनीय है। थोडी बहुत अंगरेजी जो जानता था वह भी भूल सी गई है। आवश्यक शब्द ही ढूँढ़े नहीं मिलते। इस कारण मसविदा माँगता हूँ।

पं० कामता प्रसाद गुरू जी के नाम

आपका
म० प्र० द्विवेदी

श्री मंत्री ना० प्र० सभा और श्री डॉ० श्यामसुन्दरदास जी के नाम

(१)

जुही-कलां, कानपुर

श्रीयुत मंत्री जी, ना० प्र० सभा, काशी १९–१०–२३

महाशय

मेरी पुस्तकों का जो संग्रह यहाँ कानपुर में है उसे आपने देखा ही है। वह पड़ा-पड़ा यहाँ बरबाद हो रहा है। मैं उसे ना० प्र० सभा, काशी को दे डालना चाहता हूँ। उसकी इच्छा हो तो ले ले, शर्तें कोई नहीं। जो शर्तें वह करे वही मंजूर। पुस्तकें यों हीं सरपट है। मगर जो कुछ हैं हाजिर हैं। दौलतपुर में भी संग्रह है। वह इतना ही या इससे कुछ अधिक ही होगा। पुराणादि वहीं हैं। उसे भी देने का विचार कुछ समय बाद करूँगा।

मैं कानपुर में शायद ही महीना भर रहूँ। पुस्तकें ग्रहण करना मंजूर हो तो किसी को भेज दीजिए। वह फिहरिस्त बना डाले। एक कापी मुझे दे दे, एक ले जाय। रहे शहर में, काम करने जुही आवे। क्योंकि यहाँ रहने की जगह नहीं। मेरे खपरैल में सिर्फ २ कमरे हैं, एक पुस्तकों के लिए एक भीतर।

पुस्तकें चीड़ के बक्सों में बंद करके या बंडल बनाकर बोरियों में भरकर जिस तरह सुभीता हो ले जाय।

मेरे यहाँ न रहने के कारण बहुत पुस्तकें बरबाद गईं। कुछ उठ गईं, कुछ की जिल्दें चूहों ने कुतर डालीं। उससे जल्द उठाना चाहिए।

जिस लड़के को मैंने अपनी छोटी भानजी दी है वह म्यूर कालेज के फोर्थ इयर में है। संस्कृत भी उसके कोर्स में है। दस-बीस संस्कृत की पुस्तकें उसके लिए रख लूँगा।

मेरे समय की सरस्वती की १७ वर्ष की हस्तलिखित कापियां मेरे पास हैं। किसी समय भविष्यत् में वे शायद मूल्यवान् समझी जायं। उनको देखने से पता लगेगा कि आज कल के हिंदी के अनेक धुरंधर लेखक किस तरह राह पर लाये गये थे। वे भी दे डालूँगा। सभा चाहे तो जिल्द बंधाकर रख छोड़े। कुछ पत्रव्यवहार भी रखने को दे दूँगा। अपनी कई पुस्तकों की भी हस्तलिखित कापियां दूँगा।

मेरी अनेक पुस्तकों की कापियां सभा में मौजूद हों, पर बहुत सी न भी होंगी।

मासिक पुस्तकों की जिल्दें बहुत हैं। अंगरेजी, हिंदी, उर्दू, संस्कृत, मराठी, बंगला, गुजराती की भी पुस्तकों का संग्रह है। सब खिचड़ी है। सूची कोई नहीं।

आपका
म० प्र० द्विवेदी

(२)

जुही-कलां, कानपुर
२-११-२३

श्रीमन्

मिती १४ कार्तिक का पत्र १३२६।३९ मिला। सभा का 'निश्चय' जाना, मंजूर है। जहाँ तक हो सके आदमी जल्द भेजिए। दस ही बारह दिन बाद मैं यहाँ से चला जाना चाहता हूँ। जितनी पुस्तकें उठ सकें उतनी ही सही। बाकी फिर मेरे आने पर उठवा लीजिएगा।

अलमारियों का प्रबंध कर रखिए। दौलतपुर की भी पुस्तकें यदि मैंने दीं तो आठ-दस अलमारियां कम से कम दरकार होंगी।

पत्रव्यवहार छांटना है। दे सकूँगा तो कुछ अभी दे दूँगा। बाकी फिर। ये पत्र बंद रहें। ताले कुंजी में रहें। चाभी मंत्री के पास रहे। इनका उपयोग यदि कभी किया जाय तो, मेरे नामशेष हो जाने पर। यह कहीं लिख रखिए। कार्ड की पहुंच लिखिए।

श्रीयुत मंत्री जी,
नागरीप्रचारिणी सभा,
बनारस

आपका
म० प्र० द्विवेदी

कानफिडेंसियल

(३)

जुही-कलां, कानपुर
७–११–२३

आशीष

परसों दिन के १२ बजे बाबू वासुदेव पधारे। परसों और कल कुछ काम किया है। चार पांच सौ पुस्तकें निकाली होंगी। अभी एक अलमारी भी खाली नहीं हुई। कोई ३ बक्स भर गए। आज भी शायद आते होंगे और काम करें। रात की गाड़ी से अपने घर दीवाली करने जाने वाले हैं। ३ दिन बाद आने को कहते हैं। मैं १५ या १६ ता० को चला जाऊँगा। लौटकर आयें तो शायद ४ रोज और काम कर सकें। पुस्तक सूची भी सटपट बना रहे हैं। मेरे चले जाने पर काम बंद हो जाएगा। लौटकर फिर आना पड़ेगा। लाचारी है, शायद फागुन में लौट सकूँगा। तब फिर आदमी भेजिएगा। अभी तक महत्वहीन छोटी से छोटी पुस्तकें निकाली हैं।

राय कृष्णदास को किसी ने खबर कर दी। वे कला और प्रत्नतत्व की किताबें अपनी कलाशाला में रखने को मांग रहे हैं। पहले भी मांगी थीं। लिख दिया था कि उन्हें मैं अभी पास ही रखना चाहता हूँ। कला की तो कोई पुस्तकें पास नहीं, Drfenl of Wrch की सालाना रिपोर्ट कुछ हैं। कुछ उनके Supdh की भी हैं। यहाँ एक ही साथ है, घर पर बाकी सब हैं। रायसाहब को क्या जवाब दूँ। आपके यहां तो Drfenl की रिपोर्ट आती ही होंगी। संग्रह बँट जाना अच्छा नहीं। पर इनकी इच्छा भंग करने को जी भी नहीं चाहता। कहिए तो Drfenl की रिपोर्ट देने का वचन दे दूँ।

श्यामसुन्दरदास

आपका
म० प्र० द्विवेदी

जुही-कलां, कानपुर
११–११–२३

शुभाशीष

७ का पोस्टकार्ड मिल गया। पुस्तकें मिल गई हों तो पहुँच लिखिए। मुझे चिंता है।

बाबू वासुदेवसहाय अभी १० बजे तक आज नहीं लौटे। गये चौथा दिन है। जितनी पुस्तकें निकाली हैं छोटे-छोटे तीन बक्सों में आ गई हैं। छुट्टी पर न जाते तो काम हो जाता। देखूँ कब लौटते हैं। आने को तो आज ही को कहा था। बृहस्पति तक जितनी पुस्तकें और निकाल सकेंगे निकालेंगे। बाकी दो तीन महीने बाद निकल सकेंगी, क्योंकि मैं १६ ता० को गांव चला जाऊंगा।

संस्कृत में जो शब्द जिस लिंग का है हिंदी में वह लिंग हमेशा नहीं रहता। व्यक्ति शब्द को यदि अधिकांश या सभी लेखक हिंदी में पुँलिंग मानते हों तो वही लिंग उसका होगा। मेरा मतलब यह कि इसका लिंग अभी निश्चित नहीं। इससे समय पर विचार कर लिया जाय।

बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए०,
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आपका
म० प्र० द्विवेदी
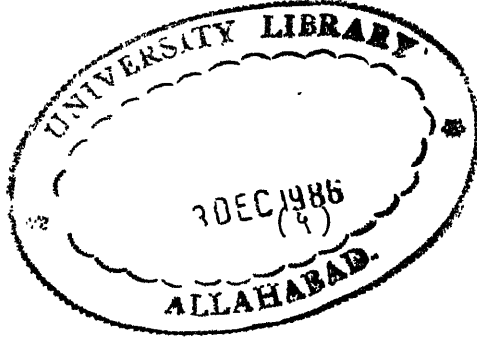
जुही-कलां, कानपुर
११-११-२३

आशीष

नंबर (१) पो० का० लिख चुकने पर आपका ५ नवंबर का पत्र नं० १३६९।३१ मिला। बैरंग भेजा गया, इससे देर से मिला। पाठक जी को न भेजिएगा। मुझमें जोर से बोलने की शक्ति नहीं।

पत्रव्यवहार अब पीछे दूँगा। अभी तो शायद सब पुस्तकें भी न दी जा सकें।

आपकी चिट्ठी का लिफाफा बाबू गोपालदास का लिखा जान पड़ता है। अगर वे टिकट लगाना भूल गये हों तो मेरे =) के आधे -) के पान सभा के कर्मचारियों को खिलावें। जान बूझ कर बैरंग भेजा तो कुछ बात नहीं।

बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए०,
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

आपका
म० प्र० द्विवेदी

(६)

जुही-कलां, कानपुर
१२–११–२३

महाशय

४ रोज की छुट्टी लेकर और दीवाली मनाकर बाबू वासुदेवसहाय आज सुबह ७-३० बजे आए। २½ घंटे काम करके फिर कहीं चले गए हैं। मालूम नहीं कहां? शायद खाना खाने गए होंगे। सूचनार्थ निवेदन है।

श्रीयुत मंत्री,
नागरीप्रचारिणी सभा,
काशी.

भवदीय
म० प्र० द्विवेदी

(७)

जुही-कलां, कानपुर
१४–११–२३

आशीष

गोपनीय चिट्ठी का जवाब मिला। ३ दिन से मैं बहुत तंग हूं। नींद बिलकुल नहीं पड़ी। नरक भोग रहा हूँ पर किसी तरह जवाब दिये देता हूं।

मेरे जिले रायबरेली में बेली पाठशाला का एक पुस्तकालय है। कई तअल्लुकेदार पीछे पड़े रहे। मैंने उनको पुस्तकें नहीं दी। यहां कानपुर में छोटेलाल गया प्रसाद ट्रस्ट है। कोई १½ लाख की इमारत बनी है। पुस्तकालय उसमें शीघ्र ही खुलेगा। अनेक बड़े बड़े आदमी चाहते थे कि मैं वहीं अपना संग्रह रख दूँ। मैंने नहीं माना। बहुत लोग नाराज हो गए। सभा का मेरा तअल्लुक पुराना है। उसीको मैंने पात्र समझा वह चाहे रखे, चाहे नष्ट कर दे। मैं बांट नहीं देना चाहता। पर रायकृष्णदास का प्रणय भंग भी नहीं करना चाहता। उन्होंने बहुत पहले से कुछ पुस्तकें मांग रखी हैं। एक archeological पुस्तक मैंने विवश होकर पर साल भेजी भी थी। उन्हें मैं Director Gnl. की amunal Reports कुछ भेज दूंगा। पर अभी पैं उनको पास ही रखूँगा दो तीन यहां हैं चार पांच गांव पर। मेरे पास भी इधर ही कुछ सालों से आने लगी हैं, गवर्नमेंट आफ इंडिया से बहुत लड़ने पर।

यहाँ का संग्रह कुछ अच्छा नहीं। अधिकांश रद्दी है। पर जो है, हाजिर है। बहुत पुस्तकों के पुट्ठे टूट गए हैं। बहुतों को चूहे खा गए हैं। आप चाहें तो मरम्मत करा लीजिएगा। अब तक ७ बक्स भरे गए हैं। अभी तीन चार अलमारियां और भरी पड़ी हैं। हस्तलिखित सामग्री तो सभी पड़ी है, यह सब अब मेरे लौटने पर उठवाइएगा। मैं परसों चला जाऊँगा जो जाने लायक हुआ। सूची ठीक ठीक नहीं बनी। हिंदी में मराठी, और संस्कृत में हिंदी आदि की किताबें मिल गई हैं। किसी बहुज्ञ से किताबें देख देख कर फिर बनवाइएगा और एक कापी मुझे भी भेजिएगा। हिंदी-संस्कृत में हो सके तो विषय के अनुसार पुस्तकें अलग कर दीजिएगा। पं० गौरीशंकर ओझा जी की पुस्तक प्राचीन लिपिमाला कहीं थी। सूची में नहीं मिलती। देख लीजिएगा, वहाँ पहुँचती है या नहीं। पुस्तकें यहां बाहर बरांडे में रात को पड़ी रहती रही हैं। अब तक ११६७ पुस्तकें निकाली गई हैं। उनमें से सौ डेढ़ सौ मासिक पुस्तकों की फाइलें ही होंगी। हिसाब—हिंदी ६५८, अंगरेजी २८१, संस्कृत ८६, उर्दू ५९ बंगला ५१, मराठी २४, गुजराती ८। शायद सौ पचास और निकाली जा सकें। जो रेल वाले माल लेंगे तो कल रवाना हो जायगा नहीं वा० सहाय को ठहरना पड़ेगा। उन्हें वहां बुलाकर उनसे पुस्तकें संभाल लीजिएगा।

दौलतपुर का संग्रह इससे अच्छा है। पुस्तकें सुन्दर सजाने लायक हैं। उन्हें अभी वहीं रहने दीजिए। मुझ अनाथ की नाथ वही हैं। वहाँ यदि किसी से प्रेम है तो उन्हीं से है। उन्हीं को देखकर किसी तरह कालयापन कर देता हूँ। कुछ काम भी निकलना है। पुराणादि पढ़ता हूं। फिर भी कुछ और बढ़ने पर उन्हें भी भेज दूँगा। वसीयतनामें में लिख भी दिया है कि संग्रह किसी सर्वसाधारण संस्था को दे दिया जाय। अब आप ही का हक है। और कोई न पावेगा।

आपका

बाबू श्यामसुन्दरदास — म० प्र० द्विवेदी

(८)

जुही-कलां, कानपुर
१५–११–२३

आशीष

कल चिट्ठी भेज चुका हूँ। रात को वीरोनल खाने से कुछ नींद आई। आज तबीयत हलकी है।

कल एक बक्स पुस्तकों से और भरा गया। कोई २०० पुस्तकें और रखी गई हैं। अब बस इतनी ही जा सकेंगी, ८ बक्स हुए। बाकी दूसरी दफे। पारसल से भेजने में बहुत खर्च पड़ेगा। मेरी समझ में माल से ही यह माल भेजा जाय। २० ता० को लैन खुलेगी। तबतक बाबू वा० स० यहीं रहें।

मैं कल गांव चला जाऊंगा। पुस्तकों की पहुंच वहीं लिखिएगा।

मुझे डर लगा कि राय कृष्णदास कहीं नाखुश न हो जायं। यहाँ उनके लायक सिर्फ ३ पुस्तकें थीं :—

(१) जेनरल रिपोर्ट आन कंट्री १९११-१२
(२) ,, ,, १९१२-१३
(३) लोन ऐंटीक्युटीज इन कोनोरेसन्स दरहर।

इनको मैंने बाबू वा० स० को दे दिया है। साथ लावेंगे। आप रायकृष्णदास को दे दीजिएगा।

बाबू श्यामसुन्दरदास, बी० ए०,
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी.

आपका
म० प्र० द्विवेदी

(९)

जुही-कलां, कानपुर
९-११-२४

आशीष

बहुत समय से आपकी चिट्ठी नहीं आई। आप अच्छे तो हैं ? अर्शरोग जाड़ों में अधिक दुख देता है। वह कैसा है ? कभी कभी अपने समाचार लिख भेजा कीजिए।

आपके बीमार हो जाने के कारण मैं यहाँ चला आया। अब कुछ अच्छा हूँ। पांच सात रोज बाद गांव लौट जाने का विचार है।

अपने वसीयतनामें में मैंने बची हुई पुस्तकें भी सभा को दे डालने की बात लिख दी है। कुछ थोड़ी-सी छोड़कर। उतने अंश की नकल मैं किसी दिन सभा को भेज दूंगा।

बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०
प्रो० हिंदी साहित्य,
बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी,
बनारस.

आपका
म० प्र० द्विवेदी

(१०)

प्रधान मंत्री
ना० प्र० सभा,

दौलतपुर (रायबरेली)
३०-५-३८

श्रीमन्

सभा के पैंतालीसवें वार्षिक विवरण की कापी मिली। धन्यवाद।

मैंने कुछ तुच्छ पुस्तकें सभा को संभाल कर रखने के लिए दी थीं। कई साल हुए इस विवरण में उनका कहीं भी उल्लेख नहीं। है या नष्ट हो गई।

प्रार्थी
म० प्र० द्विवेदी

श्री डॉ० बलदेवप्रसाद मिश्र जी के नाम

(१)

हर कुज़ा चश्मये बुवद शीरीं
मुर्दमां मुर्गो मोर गिर्द आयन्द।

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२)

दौलतपुर (रायबरेली)

नमो नमस्ते विबुधोत्तमाय ९ मार्च १९३५

आपका जो महाकाव्य सुकवि में क्रमशः प्रकाशित होता है उसे देखकर मुझे परमानन्द होता है। मेरे पड़ोस में एक मौजा ढूँढी है उसमें पं० कालीचरण द्विवेदी रहते हैं। वे मुझ पर कृपा करते हैं। कभी-कभी दर्शन दे जाते हैं। आपको अपना मामा बताते हैं। उनसे भी आपकी प्रशंसा सुनकर आप में मेरी श्रद्धा खूब बढ़ गई है।

मैं बहुत बूढ़ा हुआ। ७२ वर्ष का होने को आया पर स्वागत के लिए मेरी तैयारी देखकर भी मेरा महाप्रस्थान अब भी दूर ही मालूम होता है। हाथ पैर बहुत ही कम काम करते हैं। बाईं आंख बेकार-सी हो रही है, उस पर मोतिया बिन्द ने चढ़ाई बोल दी है। दाहिनी भी बहुत कमजोर है। इस दिशा में बिना परिश्रम कुछ काम बनता नहीं। हाँ, इंडियन प्रेस की थोड़ी सी कृपा की बदौलत किसी तरह प्राणरक्षा हो रही है।

संसार में कितने ही लूले, लंगड़े, अंधे, अपाहिज जन भी हैं। जिनका अवलम्ब अन्य ही सज्जन शिरोमणि या बदान्य प्रवर हैं। रायगढ़ के राजा साहब की कल्याण कामना करने और उनके खाते में जमा होने के लिये राम नाम जपने वाले कुछ ऐसे भी अपाहिज हैं जिनके नाम आपके दफ्तर की किसी फर्द या रजिस्टर में दर्ज हो और जिनको उनके इस काम के एवज में कुछ मासिक वृत्ति मिलती हो। यदि हों और उनमें एक-आध और भी नाम लिखे जाने की गुंजाइश हो तो मुझ प्रार्थी का भी नाम दर्ज कर दीजिए।

इस विषय में बहुत करके राजा साहब रायगढ़ की मंजूरी दरकार होगी। अनुकूल मौका देखकर ही आप उनसे इस प्रार्थना का उत्थान कीजिएगा।

धरातुरासाहिमदर्थ याञ्चा, कार्या न कार्यांतरचुम्बिचित्ते।
वित्तेन दूने रसने सितापि तिक्तायते दिव्य दयानिधान॥

प्रार्थी
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(३)

नमो नमस्ते विबुधावराय

कृपा पत्र मिला। ५०) वृत्ति नियत कराकर आपने बड़ा उपकार किया। जिन्दगी बहुत थोड़ी बाकी है। वह अब आपकी कृपा से बहुत अच्छी तरह कट जायगी। राजा साहब का नाम वगैरह तो मुझे मालूम नहीं। हिज हाइनेस राजा साहब लिखकर मैं कृतज्ञता ज्ञापक पत्र उनके नाम पोस्ट कर रहा हूँ। ऐसा प्रबन्ध कर दीजिए कि हर अंग्रेजी महीने की पहिली या किसी और ही निश्चित तारीख को रुपया भेज दिया जाया करे। अनिश्चित समय में नहीं। इससे मुझे अपने खर्च का विभाजन या नियंत्रण करने में सुभीता होगा। राजा साहब को मैंने लिख दिया है —

ऋतु वसन्त याचक भयो, सब तरु दीन्हें पात।
याही सो नूतन मिले, दीबो बृथा न जात॥

यह सब एकमात्र आप ही की कृपा का फल है मैं आपका कृतज्ञ हूँ।
कल्याणमस्तु भवतां हरि भक्तिरस्तु।

प्रणत
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(४)

दौलतपुर (जिला रायबरेली)
२६ फरवरी, ३६

भाई मेरे

शाही कागज पर आपका २२ फरवरी का पत्र मिला। मेरा नतमस्तक अभिवादन स्वीकार कीजिए। आपने जो कुछ लिखा तदर्थ मैंने अपने को धन्य समझा

धन्योस्मि कृतकृत्योऽस्मि कृतार्थोऽस्मि दयानिधे ।।

मेरा शरीर जर्जर है। चल फिर कम सकता हूँ। आंखें भी दूर की चीज नहीं देख पातीं, दिमाग खाली है।

उन्निद्रता (इन्साम्निआ) किसी तरह पिंड नहीं छोड़ती। रात को चारपाई पर ही हाजतें रफा करनी पड़ती हैं। कई रोज नींद न आने पर मेडिनल नाम की एक विषाक्त औषधि खानी पड़ती है। मैं अब कहीं बाहर जाने योग्य नहीं रहा। मेरी आत्मा अन्यत्र जाने की तैयारी में है। ईश्वर से मेरे लिये प्रार्थना कर दीजिए कि अब अधिक यातनाएँ न भोगनी पड़ें। कई मित्रों का आग्रह है कि मैं कुछ दिनों के लिये स्थान परिवर्तन कर दूँ। वे मोटर पर मुझे कानपुर या लखनऊ ले जाना चाहते हैं। पर मैं घर छोड़ने का साहस नहीं कर सकता।

मैं आपका और आपके प्रांत के साहित्यप्रेमियों का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। पर मुझमें अब उस पद को ग्रहण करने की शक्ति नहीं। अतएव मेरी प्रार्थना है कि मैं क्षमा किया जाऊँ।

सुकवि में प्रकाशित आपके काव्य के कई अंश मैंने देखे हैं। बड़ी सुन्दर और सरस रचना है, काव्य के गुणों से यथेष्ट अलंकृत है। भगवान करे आपकी प्रतिभा का विकास अधिकाधिक होता जाय।

श्रीमान राजा साहब पर मेरी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट कर दीजिएगा। यह श्लोक भी उन्हें सुना दीजिएगा —

लक्ष्मीस्ते पंकजाक्षी निवसतु भवने, शारदा कण्ठदेशे
बर्धन्तां बन्धुवर्गाः सकलरिपुगणा यान्तु पातालमूले।
देश-देशे च कीर्तिः प्रभवतु भवतां कुन्दपूर्णेन्दुशुभ्रा।
जीव त्वं पुत्रपौत्रैः परिजनसहितैः पूर्णमायुः शताब्दम् ।।

कृपापात्र
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(५)

दौलतपुर, रायबरेली
१६–८–३६

श्रीमान् मिश्रजी महाराज नमो नमस्ते

आपके श्यामशतक के कई पद्य पढ़कर मुझे रोमांस हो आया और आंखें साश्रु हो गईं। श्रीमद्भागवत में यम, इंद्र, मुचकुन्द, नागपत्नियां, उद्धव, प्रह्लाद आदि कृत स्तुतियां आपने पढ़ी ही होंगी। प्रह्लाद का कहना है :—

विप्राद् द्विषद्गुणयुतादरबिन्दनाम, पादारविन्दविमुखाच्छ्वपचं वरिष्ठम्।
मन्ये तदर्पितमनो वचने हितार्थं, प्राणं पुनाति सकुलं न तु भूरि मानः॥

यह सब तो आप में है ही। गुस्ताखी माफ हो, लोक कल्याण भी कुछ कीजिए आप सत्कवि हैं। बोलचाल की भाषा में एक काव्य लिखिए। उसका नाम रखिए रामराज्य; 'उटोपिया' के सदृश। काव्य का नायक कल्पित हो। उसके सुप्रबंध का वर्णन कीजिए। हर महकमे या हर विषय के लिये एक-एक सर्ग अलग हो। वर्तमान गवर्नमेंट के प्रबंध पर कहीं व्यंग्य से भी आक्षेप न हो, सारी कथा कल्पित हो। उससे सिर्फ यह सिद्ध हो कि सुराज्य ऐसा होता है। ऐसे काव्य से जनसमुदाय का कल्याण होगा, हिंदी का सौभाग्य बढ़ेगा और आपकी कीर्तिकौमुदी दिगन्त न सही भारत में तो अवश्य ही दूर-दूर तक फैल जायगी।

मैं उस दिन फिसल कर गिर पड़ा। बाएँ पैर की गांठ में चोट लगी। चल फिर कम सकता हूँ। दाहने हाथ की अनामिका उंगली भी बेकार हो गई। मुश्किल से लिख सकता हूँ।

कृतज्ञ
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(६)

भाई मेरे

तुलसी दर्शन की कापी आपने क्या भेजी मुझे संजीवनी का दान दे डाला। मैंने उसका कुछ ही अंश अबतक पढ़ा कर सुना है विशेष कर भक्ति विषयक। मैं मुग्ध हो गया। आप धन्य हैं। ऐसी पुस्तक लिखी जैसी तुलसी पर आज तक किसी ने न लिखी थी और न यही आशा है कि आगे कोई लिखेगा।

आपने अनेक दृष्टियों से रामचरित मानस पर विचार किया है। समन्वय भी यथास्थान ठीक ठीक कर दिया है। आपने इस विषय में जो विद्वत्ता प्रदर्शित की है वह दुर्लभ है। मेरे मन में आया था कि शांडिल्य और नारद के भक्ति सूत्रों की याद आपको दिलाऊं। पर पुस्तकांत में जो सूची देखी तो लज्जित हो गया। मुझे ज्ञात हुआ कि आप इस विषय में मुझसे हजार गुना अधिक जानते हैं।

भैया मिश्र जी, मैं रामायण का भक्त हूं रोज सुबह उठ कर कहता हूँ—

मो सम दीन न, दीनहित, तुम समान रघुबीर

भागवत के भी कुछ स्थल मुझे कंठ हैं। उनका भी पाठ करके कभी कभी अश्रु मोचन करता हूँ। मुझे मेरे मन की दिव्य पुस्तक लिखकर भेजी धन्यवाद। भगवान आपका कल्याण करे।

विनीत
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(७)

रम्य रास के कविवर से मुझ कवि किंकर का निवेदन

मैं ७० वर्ष का बूढ़ा हूं जरा जीर्ण हूँ। मस्तिष्क शीर्ण है। उन्निद्र रोग से पीड़ित हूं। मेरा यह समय राम राम रटने और विश्राम करने का है। साहित्य सम्बन्धी काम करने का नहीं। मुझसे सौगुना अधिक समर्थ मैथिली परिणय नामक महा-काव्य के कर्ता वहीं रायगढ़ में मौजूद हैं। यदि उनके हृदय स्थान में सहृदयता की सखी दया को भी स्थान मिला हो तो उसकी प्रेरणा से वे मुझे संशोधन और समालोचना के काम से बचा लेने की उदारता दिखावें।

मनुष्य का हृदय नाना प्रकार के विकारों का आकर है। यही विकार भाव भी कहे जा सकते हैं। ये प्रस्तुत रहते हैं। अनुकूल सामग्री उपस्थित होने पर ये उद्दीप्त हो जाते, जग उठते हैं। जिस कविता के आकलन से इनकी उद्दीप्ति होती है वही उत्तम काव्य है। उदाहरण—

(१) परम प्रेम मय मृदु मसि कीन्हीं। चारु चित्त भीती लिखि लीन्हीं।
(२) अहह तात दारुण हठ ठानी। समुझत नहिं कछु लाभ न हानी।
(३) जौ रण हमहिं प्रचारइ कोऊ। लरहिं सुखेन काल कि न होऊ।

(४) दर्भांकुरेण चरणक्षत इत्यकाण्डे
तन्वीस्थिता कतिचिदेव पदानि गत्वा,
आसीद् विवृत्तवदना च विमोचयन्ती
शाखासु वल्कलमसक्तमपि द्रुमाणाम्।

मध्य कविता वह है जिसके आस्वादन से विकार जागरण चाहे न हो चित्त चमत्कृत अवश्य हो उठे। अर्थात् उक्ति में चमत्कार या अनोखापन हो। उदाहरण—

मैं कवि नहीं इस कारण कहता हूँ—

१—जिस विष्णु भगवान ने राहु का सिर काट लिया उसे नमस्कार। इसे सुनकर कवि फटकार बतावेगा वह कहेगा इस बात को इस तरह कहो—

नमस्तस्मै कृतो येन सुधा राहुबधूकुचौ

अर्थात् जिस देवता ने राहु की बधू के स्तनद्वय व्यर्थ कर दिये उसे मेरा नमस्कार है।

२—वियोग बिधुरा स्त्रियों की कई दशायें होती हैं अन्तिम दशा होती है मौत। एक कवि और सब दशाओं का वर्णन कर चुका पर अन्तिम दशा मरने का नाम तक नहीं लेना चाहता। हाँ, यह जरूर कहना चाहता है कि ईश्वर करे वह जीती रहे। इस बात को वह सीधी तरह न कहकर इस तरह कहता है—

दशासु शेषा खलु तद्दशायां
तया नभः पुष्यतु कोरकेण

अर्थात् उसकी अन्तिमदशा के सूचक आकाश कुसुम वहीं अर्थात् आकाश में खिल उठें।

३—अगर कोई मुझसे पूछे तो मैं यही कहूँगा कि रायगढ़ के राजा या महाराजा साहब में कोई दोष नहीं। उनका एक भी काम अकीर्तिकर नहीं अर्थात् उनमें सब गुण ही गुण हैं उनके सभी काम कीर्तिकर हैं। कवि ऐसे कथन को कौड़ी काम का न समझेगा। वह कहेगा—

..........किलाकीर्त्तयः

गीयन्ते स्वरमष्टमं कलयता जातेन बन्ध्योदरान्
मूकानां प्रकरेण कूर्म्मरमणीदुग्धोदधे रोधसि।

अर्थात्—इस राजा की अपकीर्तियों का वर्णन कच्छपी के दूध के समुद्र के किनारे किया जाता है। अच्छा, करता कौन है? करते हैं बन्ध्याओं के पेट से पैदा हुए गूँगे मनुष्यों के समूह। अच्छा, किस स्वर में? आठवें स्वर में। अब चूँकि यह सब असम्भव है, अतएव जाना गया कि इस राजा में अकीर्तियों का लेश भी नहीं।

अधम कविता वह है जिसमें यदि और कुछ न हो तो वह कान को तो अच्छी लगे। उदाहरण—

(१) पिय हिय की सिय जाननि हारी।
मणि मुंदरी मन मुदित उतारी॥

(२) मृषार्पयन्तीमपथे पदं त्वां मरुल्लतापल्लवपाणिकम्पैः।
आलीव पश्य प्रतिषेधतीयं कपोतहुंकारगिरा बनालिः।

कविता वही विशेष आदर पाती है जिसमें और गुणों के सिवा प्रसाद गुण भी हो। अर्थात् वह अधिकांश लोगों की समझ में झट आ जाय। उदाहरणों की जरूरत नहीं उदाहरण दरकार ही हो तो महाकवि मिश्र का वह सवैया देख लिया जाय जिसकी अंतिम लाइन है—

ये उनके मुखपंकजभृंग तो वे इनके मुख चन्द्र चकोर ये।

यह सवैया अगस्त ३३ के सुकवि पृष्ठ ९ पर मिलेगा।

रम्यरास के कवि को चाहिए था कि वे कृपा करके मुझे लिखते कि उन्होंने अपनी पुस्तक की कापी मुझे किसलिये भेजी है। खैर, मुझ तुच्छ से यदि वे उसका संशोधन कराना चाहते हों तो यह काम मेरी शक्ति के बाहर का है। मैं लिखने-पढ़ने के सम्बन्ध में जीवन्मृत सा हो रहा हूँ, दिमाग काम नहीं देता, अतएव दया करके वे मुझे क्षमा करें। मेरी शरीर सम्पत्ति की हीन दशा से पं० कालीचरण अच्छी तरह परिचित हो गए हैं।

पुस्तक में कई अंश मैंने पढ़कर देखे। मालूम नहीं यह किसी अन्य रचना का अनुवाद है या कविवर की ही रचना है। इसमें यत्र तत्र बोलचाल की भाषा? ब्रज-भाषा का मिश्रण हो गया है। इसके सिवाय इसमें कहीं-कहीं दुर्बोधता भी है। उचित समझा जाय तो इन त्रुटियों का दूरीकरण कर दिया जाय। साथ ही अच्छी कविता के जो निर्देश मैंने ऊपर किये हैं उनके अनुसरण की भी चेष्टा की जाय।

यह इतना निवेदन लिखने के कारण आज रात को शायद ही मुझे नींद आवे। मेरा मस्तिष्क इतना भी परिश्रम बरदाश्त नहीं कर सकता। मुझे जो यह दंड अकारण ही दिया गया है उसके दोष परिहार के लिये रम्यरास के कविवर १०८ दफा राम नाम स्मरण करने या जपने का कष्ट उठावें।

दौलतपुर, रायबरेली
२४–१०–३३

म० प्र० द्विवेदी

(श्री कालीचरण त्रिवेदी जी के अनधिकृत आग्रह के कारण ही श्री द्विवेदी जी को यह खीझ-भरा पत्र लिखना पड़ा था। परन्तु यह पत्र भी अपने ढंग का निराला है अतः प्रकाशित किया जा रहा है। स्व० रायगढ़ नरेश की इच्छा कदापि न थी कि उनकी पुस्तक के सम्बन्ध में श्री द्विवेदी जी को किसी प्रकार का कष्ट दिया जाय।—संपादक)

श्री पं० श्रीराम शर्मा जी के नाम

(१)

दौलतपुर (रायबरेली)
४–९–३२

चिरंजीवी भूयाः

१ सितम्बर की चिट्ठी मिली। मुझे लिखने में कष्ट होता है। इससे संक्षेप ही से काम निकालूँगा। लेकिन मेरे थोड़े लेख को बहुत समझना।

मैं पहले ही आपकी तरफ आकृष्ट था। आपकी इस चिट्ठी ने मुझे और भी आपके नजदीक खींच लिया, विशेषकर आपके उस कार्य ने, जिसने उस मुदम्मिग डिप्टी को लगे हाथ सजा दे दी। मैं रेलवे में १५०) तनख्वाह ५०) अलौंस = २००) पाता था। एक मेरे साहब ने मुझसे अपने मातहत क्लर्कों पर जुल्म कराना चाहा। मैंने इनकार कर दिया। वह बोला—तुम्हारी जगह पर दूसरा आदमी रखूँगा। मैंने तत्क्षण ही इस्तीफा लिखकर उसकी मेजपर फेंक दिया और घर चला आया। फिर मनाने-पथाने पर भी इस्तीफा वापस न लिया। हाँ, कायदे के मुताबिक २९ दिन मुझे और काम करना पड़ा। मेरा अक्खड़पना आपके मुकाबले में कुछ भी नहीं। पर मेरा स्वभाव आपके स्वभाव से कुछ-कुछ मिलता जरूर है।

चतुर्वेदी जी को गणेश का जीवन-चरित लिखने दीजिए। वे अच्छा ही लिखेंगे। आप रहने दीजिए।

आप जहाँ हैं, अब वहीं रहिए। आपके वार्ड के बालिग होने पर आपको और काम मिल सकेगा। पर समय नष्ट न कीजिए। अपनी प्रतिभा का सदुपयोग कीजिए। कुछ न कुछ रोज लिखिए।

मेरा कौटुम्बिक जीवन दुःखदायी है। घबरा रहा हूँ। दशहरे के बाद कुछ दिन के लिए बाहर जाने का विचार है। बाबू कालिदास कपूर, हेड मास्टर कालीचरण हाई स्कूल, लखनऊ ने मुझे लाने के लिए मोटर भेजने का प्रबंध किया है। यहाँ से १४ मील पर एक जगह बीघापुर है वहां मैं पहुंच जाऊंगा। वहीं से मोटर पर लखनऊ आऊंगा। आपके साथ भी दो-चार दिन रहूंगा। न मिले हो तो आप कपूर जी से मिलिए। बड़े ही सज्जन हैं। यों आपका घर है, जब चाहें यहाँ आ सकते हैं।

शुभैषी
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(पं० श्रीरामशर्मा जी को हाई स्कूल की हेडमास्टरी इसलिये छोड़नी पड़ी थी कि स्वाभिमान की रक्षा के लिये उन्होंने एक डिप्टी कलक्टर को अदालत में ठोंक दिया। देशी रियासत का मामला था। डिप्टी कलक्टर ने गाली दी थी। आवेश में आकर शर्मा जी ने डिप्टी कलक्टर और उसके पेशकार को खूब पीटा। परिणाम स्वरूप उन्हें नौकरी से तो हाथ धोने ही पड़े, बड़े बड़े कानूँनदां लोगों और परिचित व्यक्तियों की नाराज़गी का शिकार भी बनना पड़ा। चारों ओर से दुत्कारे जाने पर शर्मा जी ने द्विवेदी जी को लिखा। उसका यह उत्तर है।)

(२)

दौलतपुर (रायबरेली)
२१–९–३३

नमोनमः

चिट्ठी मिली। 'सुधा' वालों ने मेरी सम्मति मांगी। उपाय भर मैं किसी को निराश नहीं करता। मैंने दे दी। उसका उन्होंने दुरुपयोग किया। दिल पर मेरे कड़ी चोट लगी पर क्या करूँ। जो अन्याय ही को न्याय समझता हो, उससे क्या आशा? चुप हो रहा। हजरत फिर मिलें, तो ज़रा शरमिन्दा तो करना।

जगन्नाथ के कष्टों की कथा पढ़कर में रो चुका हूं। मां की ममता पर मुझे मेरी मां याद आ चुकी है। अब न पढ़ूँगा। उसमें जो चित्र जमींदारों आदि का है, वह सजीव है। यही दशा इस तरफ भी है। खूब लिखिए—कोरियों, चमारों आदि गरीबों के चरित लिखकर आत्मा को उन्नत कीजिए। बड़े-बड़े के चरित लिखने वाले तो बहुत हैं, दीनदुखियों के जीवन का खाका खीचनेवाले कोई भी नहीं। अंगरेजों के मुल्क में तो कीट-पतंगों और पशु-पक्षियों तक के जीवन-चरित निकलते हैं।

महाराज टीकमगढ़ हिंदी की उन्नति के लिए कुछ रुपया देनेवाले हैं। उस दिन मैंने पंडित बनारसीदास से कहा था कि आप इस रुपए के एक अंश से प्रसिद्ध-प्रसिद्ध देहातियों के जीवन-चरित लिखाइए।

कृपापात्र
महावीरप्रसाद द्विवेदी

(३)

दौलतपुर (रायबरेली)
२०–१–३५

शुभाशिषःसंतु

चिट्ठी मिली। शास्त्री जी का लेख पढ़कर मैं तो उछल पड़ा। मेरे मुर्दादिल में जान आ गई। मुद्दतों बाद ऐसी खरी बातें सुनने को मिलीं। मेरी तरफ से शास्त्री जी को थैंक्स दे दीजिए। साल में एक-आध दफे तो भूले-भटकों को राह दिखा दिया करें। एक दफे अनन्त की खोज में मरने-खपने वालों की भी खबर ले लें तो बड़ी कृपा हो।

मेरी आंखों में मोतिया-बिंद शुरू हुआ है, डाक्टरों की बताई एक दवा (सुकुस सेनेरिआ मैरिटिमा) एक महीने से डालता हूँ। फायदा नहीं। पांच वर्ष पहले मेरी शिकायत इससे दूर हो गई थी। शास्त्री जी से कोई नुसखा पूछकर मुझे लिखिए या उनसे लेकर कोई दवा दीजिए।

अगर आपका रोग औषधोपचार आदि से दबा रहे, तो आपरेशन न कराइए। मेरी भी यही राय है।[1]

शुभैषी
महावीरप्रसाद द्विवेदी

---

१. 'विशाल भारत' में साहित्याचार्य पं० शालग्राम शास्त्री का सन् १९३४ का 'बौड़मपन' शीर्षक एक लेख निकला था। लेख में निराला जी के एक लेख की आलोचना थी श्री दुलारेलाल जी के दोहों को लेकर। लेख महत्वपूर्ण और विवादग्रस्त था, इसलिए आचार्य द्विवेदी जी के पास उस लेख की कतरन 'विशाल भारत' निकलने से पहले ही भेजी गई थी। उस पर द्विवेदी जी की यह प्रतिक्रया है।

श्री पं० हरिभाऊ उपाध्याय जी के नाम

(१)

डाकखाना दौलतपुर, रायबरेली
४ मार्च, १९२८

श्रीमत्सु सादरं निवेदनमिदम्

आप बहुत बड़े देशभक्त, मातृभाषा के हितैषी और परमोदार ही नहीं, परोपकार रत भी हैं। अतएव नीचे की कुछ सतरें पढ़ लेने की कृपा कीजिए। जब मैं कानपुर के बाहर जुही में रहता था तब एक बार आपने मुझ अकिंचन पर कृपा की थी। सम्भव है, आपको मेरा स्मरण बना हो। इसी से मुझे आपको कष्ट देने का साहस हुआ है, क्योंकि 'शाखिनो अन्ये विराजन्ते खंडयन्ते चन्दनप्रभाः' मैं ६५ वर्ष का हुआ। २० ही वर्ष की उम्र से मैंने हिन्दी लिखना शुरू किया था। वह काम अब तक जारी है। मेरी लिखी तथा अनुवादित पुस्तकों की संख्या ५० के लगभग है। कोई २० वर्ष तक सरस्वती का सम्पादन किया। उस काम को, वार्धक्य के कारण छोड़े पांच छः वर्ष हुए। इंडियन प्रेस से यद्यपि मुझे कुछ पेंशन मिलती है, तथापि उतने से काम न चलते देख मेरे कुछ मित्रों ने सलाह दी कि मैं अपने फुटकर लेखों के संग्रह पुस्तकाकार प्रकाशित कराऊँ। उनकी भिन्न-भिन्न विषयों की कोई ३० पुस्तकें हुईं। आशा है कि बाबू शिवप्रसाद जी गुप्त ने उनके नकल कराने का प्रवन्ध अपने खर्च से करा दिया। २५ पुस्तकें नकल हो गईं। पांच छः नकल हो रही है। इनमें से भिन्न भिन्न प्रकाशकों ने १४ पुस्तकें प्रकाशित भी कर दीं। ४ छपने को गई हैं। बारह तेरह छपने को हैं।

अजमेर का सस्ता साहित्य प्रेस आपकी और आपके मित्रों ही की उदारता का फल है। उसमें अथवा अन्यत्र कहीं इन अवशिष्ट पुस्तकों को छपने और प्रकाशन का प्रबन्ध कर दीजिए जिसमें मुझे मुनासिब उजरत भी मिल जाय और मेरी मृत्यु के पहले ये पुस्तकें छप भी जायं, अन्यथा इनका नाश अवश्यम्भावी है।

बस, और अधिक लम्बा पत्र लिखकर मैं आपका वक्त नहीं बरबाद करना चाहता।

कृपाकांक्षी
ह० महावीरप्रसाद द्विवेदी

(२)

दौलतपुर, रायबरेली
७–२–२८

नमोनमः

आपका पोस्टकार्ड आये आज कई रोज हुए। आँखें खराब थीं, इस कारण आज तक उत्तर न दे सका।

मेरी चार पुस्तकें तो इंडियन प्रेस में छप रही हैं। सात और नकल की जा चुकी और तैयार हैं। उनके नाम और परिचय इसी चिट्ठी के साथ भेजता हूं। अपनी मिहनत बचाने के लिए अभी सब की विषय सूची की नकल नहीं भेजी। जो परिचय भेज रहा हूँ उसीसे आपको उनके विषय ज्ञान का आभास हो जायगा। जो पुस्तकें पसन्द हों मंगा लीजिए। किसी की विषय सूची आप देखना चाहें तो बताइए, भेज दूँ।

आपके मंडल की आर्थिक अवस्था अच्छी है, यह जानकर सन्तोष हुआ। यह सब आपके उद्योग, कार्य्यकौशल, शांत स्वभाव और योग्यता का फल है। आयुष्मन् भव।

आपका
ह० महावीरप्रसाद द्विवेदी

१. विज्ञ विनोद

इसके २ भाग हैं। पहले में कवियों और महाजनों के सम्बन्ध की आख्यायिकायें हैं। दूसरे में मनोरंजक श्लोक। श्लोकों का अनुवाद भी है। ये आख्यायिकायें और श्लोक वही हैं जो सरस्वती में छपते रहे हैं। अधिक का सम्बन्ध कवियों, पंडितों और राजों से है। मनोरंजक हैं। १६ पेजी पृष्ठ संख्या लगभग १५०।

२. वाग्विलास

इसमें मेरी १४ आलोचनाएँ हैं। कड़ी कड़ी बातें हैं। प्रतिपक्षियों की दलीलों का खण्डन भी है। पृष्ठ संख्या ३०० के लगभग।

३. समालोचना समन्वय

इसमें २० समालोचनायें हैं। भागवत, महाकाव्य, मगधर की स्तुतिकुसुमांजलि, हिन्दी नवरत्न, आयुर्वेद महत्ता आदि की आलोचनायें इसमें शामिल हैं। पृष्ठ संख्या कोई ३००।

४. साहित्यसीकर

वेद, प्राकृतभाषा, संस्कृत साहित्य का महत्व, हिन्दी शब्दों के रूपान्तर, कापी-राइट ऐक्ट आदि पर मेरे २१ लेखों का संग्रह। पृष्ठ संख्या कोई २००।

५. साहित्यालाप

हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि विषयक मेरे १८ लेख। लिपि का उत्पत्तिकाल, हिन्दी का साहित्य, देशव्यापक भाषा, उर्दू और आज़ाद आदि लेख। पृष्ठ संख्या कोई ३५० ।

६. विशिष्ट वार्ता

कम्बोडिया, जावा, सुमात्रा, बाली, अफगानिस्तान, तुर्किस्तान आदि में प्राचीन हिन्दू राज्य और सभ्यता का वर्णन। कुछ जंगली जातियों का भी वर्णन। पृष्ठ संख्या १५०।

७. लेखांजलि

इसमें भिन्न भिन्न विषयों के १९ लेख हैं। कुछ कुतूहलवर्धक, कुछ वैज्ञानिक, कुछ ऐतिहासिक। भेड़ियों की मांद में पले हुए लड़के, सौर जगत् की उत्पत्ति, उत्तरी ध्रुव की यात्रा, गौतम बुद्ध का समय आदि। पृष्ठ संख्या २००।

(३)

दौलतपुर, रायबरेली
३१–७–२७

शुभाशिषः सन्तु

चिट्ठी मिली। आप सुकार्य में लगे हैं और जनहित कर रहे हैं, यह देखकर मुझे परम आनन्द और सन्तोष होता है। इधर उधर घूमने के कारण आपके भाइयों की शिक्षा में व्याघात न हो, इसका ख्याल रखिएगा।

मेरी आंखों का दोष बढ़ा नहीं। जितना था उतना ही रह गया। पर जरा अपना काम कर रही है। शक्ति कम हो रही है। लिख पढ़ अधिक नहीं सकता। यदि हो सका तो आपके नये पत्र के लिए दस पांच सतरें भेजने की चेष्टा करूंगा। इस समय मेरी उदर व्याधि बढ़ गई है।

दोनों लड़कियों को मैंने इस समय अपने ही पास बला लिया है। कमला किशोर लखनऊ में थे वे भी आ गये हैं। बीच में तबियत जियादह खराब हो गई थी, इससे ऐसा किया। क० कि० के एक ४ वर्ष की लड़की मनोरमा भी कुटुम्ब में बढ़ी है।

शुभैषी
ह० महावीरप्रसाद द्विवेदी

श्री भारतीय जी के नाम

(१)

दौलतपुर, रायबरेली
९–३–१९३६

श्रीमत्सु सादरं निवेदनम्

६ मार्च की चिट्ठी मिली, दो पुस्तकें भी। कृतज्ञ हुआ। आप मेरे मित्र बाबू जगन्मोहन जी वर्मा के पुत्र हैं, यह जानकर मुझे बड़ी खुशी हुई। मराठी की एक कहावत है 'बाप से बेटा सवाया'। यह आपमें पूर्णता से भी अत्यधिक चरितार्थ होती है। वर्धस्व, भगवान आपको चिरंजीवी और यशस्वी करें।

मैंने नाटक का कुछ अंश और दो एक कहानियां पढ़ कर सुनीं। बड़ा मनोरंजन हुआ। पुस्तकों का रूप रंग जैसा आकर्षक है, भीतरी सामग्री वैसी ही सरस और मोहक है। धन्योऽसि।

तीस वर्ष पहले हिंदी के साहित्य की जो दशा थी उसमें और आजकल की दशा में आकाश पाताल का अंतर है। मुझे स्वप्न में भी ख्याल न था कि मेरे जीते अपना साहित्य इतना उन्नति कर सकेगा। कितने ही पत्र पत्रिकाएँ और महत्व की पुस्तकें नई नई निकल रही हैं। यह सब आप ही के सदृश्य प्रयत्नशील और हिंदी प्रेमी विद्वानों के उद्योग का फल है।

मेरा दिमाग खाली है। दृष्टि मंद है। पांच मिनट भी कुछ सोचने से सिर चक्कर खाने लगता है। इस दशा में उपदेश तो क्या साधारण सूचनाएँ भी देने लायक नहीं।

इलाहाबाद जाने की जरूरत हुई तो आप से मिलूँगा। 'लेखक'—आपकी कृपा से मिलता है। आपका यह आयोजन बड़े काम का है। यह विषय ही कोई नई चीज है। उससे अनेक लाभ होने की संभावना है।

२००) महीने की मुलाजिमत छोड़कर मैंने २३) महीने पर सरस्वती का काम शुरू किया था। सचाई, श्रम, उद्योग और निस्पृहता की बदौलत वह चल गया। मुख्य आकर्षण अपनी भाषा से प्रेम था। उस प्रेम की बदौलत जो कुछ धन खर्च से बचा वह भी मैंने हिंदी की उन्नति के लिए ही दे डाला। यह खानगी बात के लिखने का आशय केवल इतना ही है कि निस्पृहता और स्वाभाविक प्रेम साहित्य की उन्नति में विशेष सहायक होते हैं।

कृपापात्र
महावीरप्रसाद द्विवेदी

श्री पं० बनारसीदास चतुर्वेदी जी के नाम

(स्व० द्विवेदी जी का एक महत्वपूर्ण पत्र)

[स्व० पूज्य द्विवेदी जी के निम्नलिखित पत्र का कुछ इतिहास है। एक दिन लोकोक्तिकोष के रचयिता श्री दामोदरदास जी खत्री 'विशाल भारत' कार्यालय में पधारे और बात-चीत के सिलसिले में उन्होंने कहा कि द्विवेदी जी के पास तो कई लाख रुपए हैं। मुझे उस समय एक धूर्तता सूझी यानी मैंने अपनी एक चिट्ठी में इस बात का जिक्र कर दिया। साथ ही एक बेवकूफी और भी की। द्विवेदी जी से आत्मचरित ५) की पृष्ठ पर लिखने का अनुरोध कर दिया। संपादन-कार्य करते हुए मुझे कुल जमा साढे नौ महीने हुए थे और अपनी अनुभवहीनता ही के कारण मैंने यह गलती की थी।

इसके सिवाय दो भूलें मुझसे और हो गईं। चिट्ठी बहुत लम्बी लिखी और प्रवासी भारतीयों के लिए जो कार्य मैंने किया था उस पर लिखी हुई सम्मतियां भी चिट्ठी के साथ भेज दीं। पूज्य द्विवेदी जी के स्वास्थ्य के विषय में मुझे पता नहीं था। अब बारह वर्ष बाद मुझे अपनी मूर्खताओं पर हँसी आती है और पश्चात्ताप भी होता है। पर संतोष इतना ही है कि इस प्रकार पूज्य द्विवेदी जी का एक महत्वपूर्ण पत्र मिल गया, जो हम लोगों के लिए विशेषतः हिंदी लेखकों के लिए एक संदेश रखता है।

इस पत्र को पढ़कर यदि पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ (उस महान् साहित्यिक तपस्वी की अनुपम साधना से कुछ भी शिक्षा मिली) तो उसके पुण्य से मेरे अपराध का कुछ तो प्रायश्चित्त हो ही जायगा।

टीकमगढ़ १–१०–४० बनारसीदास चतुर्वेदी]

(१)

दौलतपुर (रायबरेली)
२२–१०–१९२८

प्रियवर चतुर्वेदी जी

नमोनमः। १९ अक्तूबर की चिट्ठी मिली। उसकी लम्बाई देखकर ही डर गया। यह सोचकर कि मुझे उससे भी लम्बा जवाब लिखना पड़ेगा, मैं घबरा-सा गया। खैर, जो भोग भाग्य में बदा है, उसे भोगना ही पड़ेगा।

आपके सार्टिफिकेट पढ़कर परमानन्द हुआ। उनमें जो कुछ है, मैं आपको उससे भी अधिक पात्र प्रशंसा का समझता हूँ। दीर्घायुर्भूयात्।

जिस कुटुम्ब के साथ मैं रहता हूं वह कुटुम्ब, जिसमें तीन प्राणी हैं, एक महीना हुआ कानपुर चला गया। दो को कुछ बीमारी थी, उसी का इलाज कराने के लिए जाना पड़ा। वे लोग अब तक वहीं कमर्शल प्रेस में हैं। बहुत दूर के रिश्ते में मेरी एक भानजी है। वही यहाँ रह गई है। वही मुझे जिला रही है। छटांक भर गेहूं का दलिया, थोड़ी सी तरकारी (फल यहाँ मिलते नहीं) और सेर भर दूध, बस यही मेरी खुराक २४ घंटे में है। इसी से मैं अपनी शरीर-रक्षा कर रहा हूँ। जैसा कि मैंने आपको लिखा था मैं भी अबतक कानपुर चला गया होता मगर नहीं जा सका। कारण कुछ दुर्लभ संस्कृत पुस्तकें पंच भारती आदि मैंने हाल में मंगाई थीं। उन्हें दो-चार रोज थोड़ा-थोड़ा देखा। इतने ही मानसिक श्रम से मेरा दिमाग पकने सा लगा। पुराना उन्निद्र रोग फिर जी उठा। आज कई रोज से नींद नहीं। रात को आंखें बंद करता हूँ तो स्वप्न से देखा करता हूँ। तबीयत परेशान है। आराम कर रहा हूँ। लीडर तक नहीं पढ़ता। जी होमकर आपको यह पत्र लिख रहा हूँ। यह तो मेरी हालत है। इस पर आप मुझसे मेमरिज या आत्मचरित लिखाना चाहते हैं। मैं अब बहुत ही कम मानसिक परिश्रम करने योग्य हूं। मेरे पिछले जीवन से संबंध रखने वाले कोई नोट्स भी मेरे पास नहीं। फिर पुरानी बातों को याद करना मेरे लिए बहुत ही कष्टदायक है, क्षमा कीजिए। अभी आप मुझसे मिलने का कष्ट न उठाइएगा। ऐसा लिखना सदाचार का विघात करना है। पर मैं साफ़दिल और सच कहनेवाला हूँ, इससे कोई बात छिपाना नहीं चाहता।

अपनी याददाश्त लिखने के लिए आप मुझे ५) पृष्ठ देने को तैयार हैं, एतदर्थ धन्यवाद। आप शायद नहीं जानते कि सरस्वती, सुधा और माधुरी वाले मुझे मेरे साधारण नोटों के लिए भी करीब करीब इतना ही देते हैं। अभी उस दिन बिड़ला पार्क मेगज़ीन वालों ने मेरे कोई दो कालम के एक नोट की उजरत २५) भेजे हैं। सो यदि मैं कभी कुछ लिख भी सका तो ५) के लोभ में फंसकर मैं न लिखूँगा। हाँ, यदि कोई ५) कालम दे और ५०००) पर कापीराइट भी, दस्तावेज लिखकर, देने को तैयार हो जाय, तो सामर्थ्य होने पर शायद मैं उसकी इच्छा पूर्ति कर सकूँ। सो भी ५०००) अपने लिए न लूँगा। खैरात कर डालने के लिए लूँगा। मेरे पीछे रायल्टी लेनेवाला कोई नहीं, यह शर्त मैं क्यों करूँगा? मई १९२५ की स्टैंड मैगजीन देखिए। उसमें एक आदमी ने अपना हाल लिखा है। इंडियन प्रेस ने उसे, दो वर्ष हुए, मेरे पास भेजा था। उसकी इच्छा थी कि मैं भी अपना हाल वैसा ही लिखूँ।

पर नहीं लिख सका। इससे आप जान जायंगे कि आपकी तरह और लोग भी मुझ से वैसा काम कराना चाहते हैं।

हिंदी लेखकों की दशा अच्छी नहीं। प्रकाशक उनसे भी बदतर हैं। रद्दी कहानियां ये लोग दौड़ दौड़ छापते हैं। मेरे फुटकर लेखों की कोई ३२ पुस्तकें हुईं। बाबू शिवप्रसाद जी गुप्त ने सबकी नकल करा दी। उनमें से कोई १० पुस्तकें पड़ी हुई हैं। कोई पूछता ही नहीं। ऐसे लोगों के लिए आत्मचरित लिखकर बेचने की इच्छा नहीं होती। हों भी तो लिखने की शक्ति नहीं।

आपने अपनी चिट्ठी में कुछ खानगी बातें लिखी हैं। इससे आपका निष्कपट भाव और हृदय-सारल्य प्रकट होता है। अतएव मैं भी आपका अनुसरण करने को तैयार हूँ, क्योंकि सज्जनों के साथ साथ बातें हो जाने से भी वे मैत्रीसूत्र में बद्ध-से हो जाते हैं। "यतः सतां हे बुधवर्य संगतं मनीषिमिः साप्तपदीनमुच्यते।" लोकोक्ति-कोष वाले खत्री जी (शायद दामोदरदास) को यह चिट्ठी दिखाइए और उनसे कहिए कि मैं उनसे, मुर्शिदाबादवाले नवाबी जगत्सेठों से तथा कारनेगी और राकफेलर से भी अधिक अमीर हूँ। अमीर किसे कहते हैं, यह शायद वे नहीं जानते। शंकराचार्य जानते थे। उनका कहना है कि जो जितना अधिक संतोषशील है, वह उतना ही अधिक अमीर है। और जो जितना ही तृष्णालु है, वह उतना ही दरिद्र। मैं तो दुनियाभर के अमीरों को लक्षाधीशों ही को नहीं, कोट्याधीशों को भी अपने सामने तृणवत् समझता हूँ। क्योंकि, "निस्पृहस्य तृणं जगत्" इसे वे अपने कोष के दूसरे संस्करण में रख सकते हैं। ये लोग दूसरों के माल मत्ते की नाप-तौल अपने मानदंड से तो करते हैं, पर यह नहीं कभी सोचते कि इनसे पूछें किसी चीज की इन्हें कमी तो नहीं, और हो तो उसे दूर करने की कोशिश करें।

१७ वर्ष की उम्र में मैंने रेलवे में मुलाजिमत शुरू की। सिर्फ १५०) +परसनल अलौएन्स ५०) = २००) मिलते थे। १८ वर्ष तक सरस्वती का काम किया। छोड़ने के वक्त सिर्फ १५०) मिलते थे। तब से सिर्फ ५०) मासिक पेंशन। कभी एक पैसा भी किसी से हराम का नहीं लिया। मेरी रहन-सहन, घर द्वार सब आपका देखा हुआ है। कानपुर का कुटीर भी आप देख चुके हैं। इस तरह रहकर जो कुछ बचाया वह सब प्रायः खैरात कर दिया। यथा —

कई लड़कों को अपने खर्च से पढ़ा दिया। उनमें से कुछ एम० ए०, बी० ए० भी हैं। रिश्ते में अपनी तीन भानजियों की शादियां और गौने किए। औरों की भी दो लड़कियां व्याहीं। गांव में कई गरीब घरों की लड़कियों की शादियों में मदद दी। कई विधावाओं का पालन किया। दो एक अब भी वृत्तियां पाती हैं। पिता की इच्छाएँ पूर्ण कीं, गया-श्राद्ध, ब्राह्मण-भोजन, दान-पुण्य, मकान और कूप आदि

निर्माण के रूप में।

गत वर्ष मेरे कुटुम्ब की अंतिम स्त्री मरी। तब मैंने अन्त्येष्टि-कर्म करने के सिवा १०००) रु० दीन दुखियों को बांट दिया। कानपुर का पुस्तक संग्रह ना० प्र० सभा को पहले ही दे चुका था। एक गाड़ी पुस्तकें छै महीने हुए यहां से उसे और भेजीं। दो गाड़ियां अभी और भेजना है। १०००) रु० इस सभा को अभी अभी जो दिए हैं सो आप जानते ही हैं। अब भी लोकोक्तिकार के अनुमित लाख डेढ़ लाख या करोड़ दो करोड़ जो बच रहे हैं, वे प्रायः सब के सब हिन्दू विश्वविद्यालय को देनेवाला हूँ। पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ, जनवरी-फरवरी में शायद आप और खत्री जी भी सुन लें कि कितने लाख हैं।

यह सब मैंने लिख तो दियां, पर डर है कि मेरे मरने पर कहीं आप ये बातें छपवाने न दौड़ पड़ें। मैं इसकी जरूरत नहीं समझता। लाख दो लाख का स्वप्न देखनेवालों का स्वप्न मैं भंग नहीं करना चाहता।

आपका
महावीरप्रसाद द्विवेदी

श्री पं० पद्मसिंह शर्मा जी के पत्र
श्री आचार्य महाबीर प्रसाद द्विवेदी जी के नाम

(१)

एस० डी० पी० प्रेस
जलंधर सिटी
२८-४-०५

श्रीमन्तो विबुधवराः प्रणम्यन्ते

कृपापत्र मिला, कृतार्थ किया।

हाली कृत कुछ कवितायें आज की डाक द्वारा भेजता हूं। इनमें से एक तो नागराक्षरों में ही है, उसकी भाषा भी हिन्दी है, जैसे आप उचित समझें (चाहे सम्पूर्ण या अंशतः) 'सरस्वती' में प्रकाशित कर दें। 'मजमूए नजमें हाली' में १४ कवितायें हैं जो बड़ी सरस और शिक्षाप्रद हैं। उनमें से 'वर्षाऋतु' तो 'सरस्वती' में अविकल प्रकाशित होने योग्य है, उसकी भाषा सरल है। और भी कई ऐसी हैं जो क्लिष्ट शब्दों पर टिप्पणी देकर छापी जा सकती हैं।

'शिकवे हिन्द' और 'मसनवी हकूके औलाद' की कविता बड़ी उत्कृष्ट है। आप एक बार इस सब संग्रह को पढ़ जाइए, फिर उनमें से जो 'सरस्वती' के योग्य जचें, और उन्हें नागराक्षरों में लिखने और टिप्पणी चढ़ाने की आवश्यकता हो तो मुझे आज्ञा दें (यदि आपको अवकाश न हो)। 'दीवाने हाली' भी मेरे पास है, उसकी भूमिका बड़े काम की चीज है। भूमिका क्या उर्दू कविता का 'साहित्य दर्पण' समझिए। उसमें से एक निबन्ध का अनुवाद करके मैं 'सरस्वती' के लिए भेजूँगा।

'विधवा की प्रार्थना' का संस्कृत पद्यमय अनुवाद आपकी सेवा में भेजता हूँ। यह एक मेरे मित्र ने किया है उनकी और मेरी भी यही इच्छा है कि यदि आपकी सम्मति में यह छपाने योग्य जंचे तो छापा जाय अन्यथा नहीं। कृपया इसे भी देख जाइए।

'हिन्दी शिक्षावली' की समालोचना मैंने ला० मुँशीराम जी (जो इधर की आर्यसमाजों के नेता और योग्य पुरुष हैं) को दिखलाई। वे उसे पढ़कर बड़े ही प्रसन्न हुए, और कहने लगे कि "ऐसे विद्वान् और योग्य पुरुष हमें नहीं मिलते।"

उनकी प्रेरणा से कुछ हिन्दी की पुस्तकें आपकी सेवा में समोलचनार्थ भेजी जाती हैं। उनकी इच्छा है कि 'हिन्दी शिक्षावली' की तरह इनकी समालोचना

पुस्तकाकार लिखी जाय। पण्डित जी! बड़ा अनर्थ हो रहा है। ये पुस्तकें यहां के 'कन्या महाविद्यालय' में पढ़ाई जाती हैं, और यहां की देखादेखी आर्यसमाजों के आधीन जितनी कन्या पाठशालायें हैं, उनमें भी इनका प्रचार है। हाँ, इस अन्याय का कुछ ठिकाना है ! जिन लोगों को शुद्ध नाम तक लिखना नहीं आता वे ग्रन्थकर्त्ता बने बैठे हैं। जब कि आपको छोटे छोटे लड़कों पर इतनी दया आई कि उनका पीछा भ्रष्ट पुस्तकों से छुड़ाकर छोड़ा, तो क्या अबोध अबलाओं पर आपको करुणा न आयेगी ? हमें विश्वास है कि आपका दयालु अन्तःकरण अवश्य द्रवीभूत हो जायगा, क्योंकि "तामाभ्यगच्छद्रुदि तानु सारी कविः कुशोध्माहरणाय यातः निषाद विद्धाण्डज दर्शनोत्थः श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः" आप भी तो 'कवि' हैं, और दयनीय भी अबला ही हैं! त्राहि भगवन्! त्राहि ! ! !

फिर लड़कों को तो ऊंची कक्षाओं में पहुंचकर अच्छी अच्छी पुस्तकें भी पढ़ने को मिल जाती हैं, परन्तु लड़कियों की शिक्षा की तो ये ही पुस्तकें पराकाष्ठा हैं। हिन्दी शिक्षावली तो देहाती मदरसों में ही पढ़ाई जाती है परन्तु ये "महा-विद्यालय" में पढ़ाई जाती हैं ? आपसे प्रार्थना है इस पर ध्यान दीजिए।

'मथुरामास्टर' से प्रशंसित 'तरुणोपदेश' हमें कब सुनने को मिलेगा ? क्या जब हम वृद्ध हो जायंगे उस समय ?

पण्डित जी! मैं तो यहां जंगल में बैठा हूँ, कोई पुस्तकालय नहीं। न कोई विद्वान् ही है जिससे कोई पुस्तक देखने को मिल जाय, यहाँ तो ऐसी ही पुस्तकें मिलती हैं, जैसी आपकी सेवा में समालोचनार्थ भेजता हूँ, और विद्वान भी ऐसे ही हैं, जैसे इनके कर्त्ता ला० देवराज हैं। फिर 'सरस्वती' के लिये कथा कहाँ से लिखूँ ? किसी पुस्तक का नाम बतलाइए तो मंगा ही लूँ। मेघदूत के विषय में म० म० प० हरिदास शास्त्री से ही पूछिए, वे ही पता देंगे कि कहां मिलता है। शिबाबे लखनऊ को देखकर मुझे भी लिखिए कि क्या[1]

पद्मसिंह

---

१. पत्र पूरा नहीं है—सं०

(२)

ओम

एस० डी० पी० प्रेस
जलंधर सिटी
जुलाई ६, ०५

श्रीमत्सु विबुधवरेषु मुमूर्ष्ववस्थापन्न हिन्दीभाषायै जीवनदानायगृहीतावतारेष्वि स्ववैंघेषु प्रणतिपूर्वकमावेदनम्।

कृपापत्र मिला, आनन्दित और अनुगृहीत किया। 'एजूकेशन' के अनुवाद का श्रीमान् को पूर्व से ही ध्यान है, यह मालूम करके जो हर्ष हुआ, वह वर्णनातीत है। सच तो यह है कि आप अकेले हिन्दी भाषा के लिये जो काम कर रहे हैं, वह काम भारतवर्ष के सारे हिन्दी हितैषी भी नहीं कर रहे। आपकी 'सरस्वती' हिन्दी साहित्य की वही सेवा कर रही है जो उर्दू की 'अलीगढ़ साइन्टिफिक सोसाइटी गजट' ने की है।

'एजूकेशन' का उर्दू अनुवाद मैं आजकल देख रहा हूँ, अनुवाद बड़ा उत्कृष्ट है, अनुवादक ने कई बातें अपने अनुवाद में मूल से भी अधिक बढ़ा दी हैं, तथा ग्रन्थ-कर्त्ता की जीवनी, पुस्तकस्थ विषयों का संक्षिप्त और विस्तृत सूचीपत्र, मार्जनल नोट, फुटनोट आदि आदि। पुस्तक के अन्त में बड़े बड़े प्रसिद्ध विद्वानों की सम्मति छपी है, जिसमें अनुवाद की इतनी प्रशंसा की है कि जितनी किसी अच्छे से अच्छे अनुवाद की की जा सकती है। आप उसे अवश्य देखिए, और यदि उचित समझिए तो उसी रीति का अनुसरण कीजिए। अनुवाद पानीपत निवासी मौ० अलताफ हुसेन हाली के एक सम्बन्धी ग्रेजुएट ने किया है, 'रिफाहे आप' स्टीम प्रेस, लाहौर में छपा है। परन्तु कहाँ से और कितने को मिलता है, यह पुस्तक पर नहीं लिखा (जिस पुस्तक को मैं देख रहा हूँ, वह मुझे एक मित्र से मिली है, और उनकी भी वह अपनी नहीं है)। जिस प्रेस में वह छपी है उसके अध्यक्ष से मैंने उसका मूल्य और मिलने का पता पूछा है। उत्तर आने पर आपको लिखूँगा। पुस्तक की भाषा बहुत कठिन नहीं है।

संस्कृत अनुवाद का पता यदि आपको चल जाय तो मुझे भी सूचित करें।

उस 'मेघदूत' का वृत्तांत मैंने 'विद्योदय' संस्कृत पत्र में पढ़ा था। कलकत्ता संस्कृत कालेज के प्रिन्सिपल महामहोपाध्याय पं० हरिदास शास्त्री ने उसका अनुवाद किया है, कदाचित उनसे ही मिलता होगा।

'शिक्षा' और 'सबएजूकेशन आफ वम्यन' का अनुवाद करके आप हिन्दी साहित्य पर इतना उपकार करेंगे कि जिससे वह कभी उऋण नहीं हो सकेगा।

आपने बहुत ही अच्छा किया जो 'लिबर्टी' का अनुवाद कर दिया, उसका अनुवाद उर्दू में तो (सुना है) हो चुका है। बेचारी दुखिया हिन्दी को उर्दू के सामने मुँह दिखाने योग्य आप ही का शुभोद्योग बना दे तो बना दे, और लोगों का तो इधर ध्यान ही नहीं।

परमात्मा आपको पुरुषायुष जीविता से भी अधिक आयुः प्रदान करे। पं० जी ! इस समय उर्दू के पक्षपाती बड़े घोर परिश्रम के साथ काम कर रहे हैं। उन्होंन उर्दू को बड़े ऊंचे आसन पर बिठला दिया है, कोई आवश्यकीय विषय ऐसा नहीं जिसकी दो चार पुस्तकें उर्दू में न हों, पर हिन्दी में क्या है ? वही रद्दी उपन्यास या और कुछ भी। न मालूम हिन्दी हितैषियों का ध्यान किधर है, जो अपने औचित्य को नहीं समझते। उर्दू को मुकाबले का चैलेन्ज और यह बेपरवाई ! "विधाय वैरं सामर्षे नरोऽरौ य उदासते। प्रक्षिप्योदर्चिषंकक्षेशेरतेऽभिमारुतम् ।।"

कृपया अपने रचित, अनूदित और संकलित सब पुस्तकों का एक सूचीपत्र भेजने की कृपा कीजिए।

"अर्थाहरणकौशल्यं किं स्तुमः शास्त्रवादिनां।
अव्ययेभ्योपि ये चार्थान् निष्कर्षन्ति सहस्रशः।"

श्रीमद्दयाभाजनम्
पद्मसिंह श०

(३)

ओम्

एस० डी० पी० प्रेस
जलंधर सिटी
१२ जुलाई ०५

श्रीमत्सु अलौकिक प्रतिभासंपन्नकविकुंजरेषु सांजलिबन्धे प्रणतिकदम्बाः।
भगवन् !

आपके पुस्तक रत्न पहुंचे। मैं इस अवसर पर सचमुच किंकर्तव्यविमूढ़ हूँ। अर्थात् नहीं जानता कि पहिले आपकी इस निर्व्याज अहेतुक कृपा का धन्यवाद दूँ या इन अपूर्व पुस्तकों की प्रशंसा करूँ, अथवा अपने भाग्य को सराहूँ। मुझे आपका समालोचनप्रकार बड़ा रुचता है। इसलिये प्रथम मैंने उसे ही देखना प्रारंभ किया। बहुत दिनों पीछे ऐसी पुस्तक देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, जिसे मैंने मनोभि-

निवेश पूर्वक रात्रि के ३ बजे तक पढ़ा, पुस्तक पढ़ते समय कहीं कहीं हँसते हँसते पेट में बल पड़ गये, किसी जगह हिन्दी की दुर्दशा पर रोना आया, और कभी बा० सीताराम की हालत पर करुणा आई, कि उन्होंने क्यों ऐसी पुस्तक रचकर हिन्दी की और साथ ही अपनी दुर्दशा कराई?

पं० जी! आपकी समालोचना शैली तो अपूर्व ही है। इस विषय में तो आपने निस्संदेह 'चित्र मीमांसाखण्डनकार' पण्डितराज जगन्नाथ को भी पीछे छोड़ दिया!

यदि इस समालोचना-संग्रह के पीछे किन्हीं पुस्तकों की समालोचना आपकी लेखनी से और निकली हो तो मेरी सानुरोध-प्रार्थना है कि उसे भी पृथक् पुस्तकाकार छपवा दीजिए। "नैषध चरित चर्चा" के विषय में सुदर्शन के सम्पादक से जो विचार हुआ था उसे न० चर्चा के २य संस्करण के साथ छपाना चाहिए।

एक प्रार्थना है, असभ्यता को माफ करके स्वीकार कीजिए। इन पुस्तकों की न्यौछावर में मैं कुछ भेंट करना चाहता हूँ, आज्ञा दीजिए कि क्या भेज दूँ? पुस्तकों पर तो कुछ लिखा नहीं, नहीं तो आज्ञा लेने की आवश्यकता न होती। कृपया इस आद्य प्रणय-प्रार्थना को भंग न कीजिए, अवश्य लिखिए। क्या 'एजूकेशन' के अनुवाद को आपने वी० पी० द्वारा मंगाया है? मेरी इच्छा थी कि उस पुस्तक को मैं आपको भेंट करूं, इसी अभिप्राय से मैंने उसका मूल्य आदि पूछा था, कल उत्तर आया है, वह लाहौर से २।) को मिलता है। यदि आपने न मंगाया हो तो मैं मंगा कर भेज दूँ।

मेघाच्छन्नआकाश विषयक-उत्प्रेक्षा—

"शीतलादिवसंत्रस्तं प्रवृक्षेण्यान्नभस्वतः।
नभो बभार नीरन्ध्रं जीमूतकुलकम्बलम्॥"

भवद्दया
पद्मसिंह

(४)

ओम्

एस० डी० पी० प्रेस
जलंधर सिटी
१९—७—०५

श्रीमत्सु कविताकामिनीगृहीतयवृशेशयेषु धन्यजनुः प्रणतिततयः सन्तुतराम्।

कृपापत्र मिला, आनन्दित और अनुगृहीत किया।

पण्डित जी! आप मुझे व्यर्थ में अतिशयोक्ति करने का उपालम्भ देते हैं।

सच जानिये मैंने आपके या आपकी कविता के विषय में कोई अत्युक्ति नहीं की है। किंतु जैसा अन्तःकरण ने लिखाया है, वैसा अविकल, लिख भर दिया है। चाहे मुझे अतिशयोक्ति का इलजाम फिर सुनना पड़े, परन्तु मैं 'काव्यमंजूषा' को देखकर यह कहे बिना कदापि नहीं रह सकता, कि 'आप संस्कृत के भी अद्‌भुत कवि हैं' जैसे जचे तुले, सीधे सादे, भावगर्भित और सरल शब्दों द्वारा अपने भाव अभिव्यक्त करने की शक्ति आप में है, वह अन्य आधुनिक कविमन्यों में नहीं देखी जाती। 'कान्यकुब्ज लीलामृत' आपकी उदारमनस्कता, जातिहितैषिता और उत्कृष्टकविता का कैसा अच्छा उदाहरण है! 'कथमहंनास्तिकः!" को पढ़कर हृदय भर आता है। मन में अनेक भाव जागृत हो उठते हैं! 'समाचार पत्र सम्पादक स्तव' को सुनकर हँसी नहीं रुकती। 'त्राहिनाथ! त्राहि!' 'बाल विधवाविलाप" आदि करुणारसंपूरित हिंदी कविताओं को पढ़कर "अपिग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्' यह स्मरण होने लगता है। सचमुच आपकी कविता के विषय में यह पद चरितार्थ होता है—

> "ज्योत्स्नेव हृदयानन्दः सुरेव मद कारणम्।
> प्रभुतेव समाकृष्ट———कवियितुः कृतिः।"

पण्डित जी! क्या आपकी समुचित समालोचना के निकलने पर भी लाला साहब की 'रद्दी तुकबन्दी पाठ्य पुस्तकों से अभी तक पृथक् नहीं की गई?' 'हिन्दी शिक्षावली' ज्यों की त्यों बनी है? इस पर किसी ने कुछ ध्यान ही नहीं दिया? भवत्कृत कुमार सम्भवसार को देखकर भी लोगों ने ऊँच नीच में कुछ तारतम्य नहीं जाना?

हा अविशेषसते और अविवेकिते। तेरा तेरा बुरा हो!—

> "पिकंहिमूकीवुरु धूमयोने! भेकंचं सैकेर्मुखरी कुरुष्व।
> किन्तुत्वमिन्दोः प्रपिधाय! बिम्बं खद्योतमुद्‌घोतयसीत्यसह्यम्॥"

यह आपका अनुग्रह है जो मुझ अगण्य और अधन्य को भी इतना मान देते हैं। ठीक है—

> "साम्याहसर्वत्र सतांदयायानी चेरच्चंताया गणना न तत्र।
> किं नाम छायां प्रति संहरन्ति पादाश्चिले नीचतमेपि शालाः?"

विद्वद्‌जनादृत 'सरस्वती' में कुछ लिखने के लिये मुझे मजबूर करके श्रीमान् बहुमूल्य कौशेयवस्त्र पर शण की सिलाई कराना चाहते हैं, अस्तु, "आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया" किसी विषय पर कुछ लिखने का प्रयत्न करूंगा। प्रथम तो अवकाश ही

नहीं मिलता, द्वितीय यह स्थान अच्छा नहीं, न यहां कोई पुस्तकालय है, न कोई विद्वान् ही है, इसलिये उत्साह भंग सा रहता है। गत वर्ष मैंने 'राजतरंगिणी' से दो मनोहर कथायें उद्धृत करके एक समाचार पत्र में प्रकाशित की थीं, साप्ताहिक समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए लेख प्रायः रद्दी में जाया करते हैं, इसलिये कुछ सज्जन उन्हें पुनः प्रकाशित करने का अनुरोध करते हैं, क्या उनके लिये 'सरस्वती' में आश्रय मिल जायगा? क्या वास्तव में 'सरस्वती' के योग्य हैं? भाषानुवाद की त्रुटियों का शोधन आप कर ही देंगे। आपने पढ़ी है। मेरे एक मित्र ने संस्कृत में उसका अनुवाद किया है। छपने से प्रथम उसे आपके पास भेजता हूँ।

पद्मसिंह

(५)

ओम्

जालंधर सिटी
६–८–०५

श्रीमत्सु प्रणतिपुरःसरं विनिवेदनम्

कृपापत्र मिला। अच्छा, यदि नियमविरुद्ध है तो विधवाविषयक कविता को न छपाइए। निःसन्देह 'वर्षा' आदि कवितायें बड़ी बड़ी हैं। इसलिये मैं भी इन्हें छोड़कर 'दीवाने हाली' में से कुछ कविता चुनकर भेजता हूँ। निबन्ध का अनुवाद भी पीछे से भेजूंगा। यहाँ एक जगह राजतरंगिणी है। किसी सुन्दर कथा के लिये उसे देखूंगा। यदि कोई हाथ आ गई तो लिख भेजूँगा। कथासरित्सागर भी मैंने देखा, पर वह यहां है नहीं। उसका अनुवाद भी हो रहा है।

मैं अभी वृद्ध नहीं हुआ। वात्स्यायन कामसूत्र मैंने पढ़े हैं और कई बार पढ़े हैं। वे मेरे पास हैं भी। परन्तु आपके तरुणोपदेश में निरा वही विषय तो नहीं होगा। उसमें तो और भी बहुत सी बहुमूल्य और उपयोगी शिक्षायें होंगी। अस्तु, यदि उसके छपाने में किसी विपत्ति की आशंका है तो रहने दीजिए। परमात्मा न करे कि आप किसी बाधा में फंस जायँ। आजकल का कानून बड़ा कुटिल है।

विद्यालय के मन्त्री को आपने लिखा अच्छा किया। यही समुचित और नीति-संगत था। परन्तु वहाँ से कुछ अच्छा परिणाम निकलने की आशा नहीं। कमेटी के दो एक आदमियों को छोड़कर बाकी की बिलकुल यही दशा है कि—

"उष्ट्राणां विवाहे हि गर्दभा गीत गायकाः।
परस्परं प्रशंसन्ति अहोरूपमहोध्वनिः॥"

कमेटी के सब मेम्बर ला० देवराज जी के मित्र हैं। वे उनकी हां में हो मिलाना ही अपना औचित्य समझते हैं। इसके अतिरिक्त एक आध को छोड़कर कोई मेम्बर हिन्दी नहीं जानता। फिर उनसे क्या आशा की जा सकती है।

ला० मुँशीराम जी ने पुस्तकों की भ्रष्टता पर कमेटी का ध्यान कई बार दिलाया। परन्तु कोई नतीजा न निकला। पण्डित जी! आपकी आलोचना व्यर्थ नहीं जायगी। वह अपना काम करके रहेगी। आपकी आलोचना-हृदयग्राहिणी आलोचना, पबलिक के दिल हिलाकर छोड़ेगी, और फिर पबलिक लालाजी को मजबूर करेगी कि वह इन पुस्तकों को उठा लें। जिन लोगों की सहायता पर विद्यालय के अस्तित्व निर्भर हैं, जिनकी पुत्रियां और स्त्रियां इसमें पढ़ती हैं, उन्हें यह बात स्पष्टतया मालूम होनी चाहिये कि विद्यालय में कैसी पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं, फिर वे लोग लाला जी का ध्यान इस ओर जरूर दिलायेंगे।

यदि समालोचना के छपाने आदि के बखेड़े से आप बचना चाहें तो ला० मुँशीराम अपने प्रेस में छपाने को उद्यत हैं। बल्कि यही उचित भी होगा। उनकी तरफ से ही समालोचना का प्रचार होना अधिक लाभदायक होगा। विद्यालय के अधिकारियों (आपकी समालोचना के निकलने पर) ने यदि इन पुस्तकों को न भी उठाया तो और जिन पचासों पुत्री पाठशालाओं में इनका रिवाज है वहाँ से तो उठ जायंगी, यह क्या थोड़ा लाभ है?

आपकी कविताओं को उद्धृत करके जहाँ कहीं (संरस्वती) यह लिख भी दिया है, उसमें भी एक उस्तादी है। विद्यालय की एक छात्रा है, जिसका नाम 'सरस्वती' है। उसके नाम से प्रायः लेख 'पांचाल पण्डिता' में निकला करते हैं। बस, पढ़नेवाले समझें कि यह भी उसी सरस्वती की कविता है!! खूब!

मैंने अपने एक मित्र के पास जो व्याकरण, वेदान्त, न्याय और साहित्य के अच्छे पण्डित हैं। आपकी 'काव्यमंजूषा', 'कालिदास-समालोचना' आदि पुस्तकें भेजी थीं। वे उन्हें पढ़कर इतने प्रसन्न हुए कि आपके साथ २ मुझे सैकड़ों धन्यवाद दे डाले। आपके विषय में उन्होंने जो कुछ लिखा है, वह लिखता हूँ—

"आलोक्य तत्पुस्तकजातमद्य जातं च मे हर्षभरं च चित्तम्।
नाहं प्रशस्तिं प्रभवामिकर्तुं श्री ग्रन्थकर्तुर्ध्रुवसत्यमेतत्॥"
श्रीमत्कृपावापित पुस्तकानि दृष्ट्वा निसर्गान्मिम निःसरन्ति।
श्लोका इमे मद्वदनात्तदेतत्सत्यं वदामीतिविनिश्चितुत्वम्॥"

लोकम्पृणगुणोत्कर्षभूमिः काव्यविदांवरः।
सरस्वती समुत्पत्तिः कृता येन नवानवा॥१॥

यदीयाक्षरविन्यास चातुरीं चतुरो नरः।
स्वशिरः कम्पयन्नास्ते दृष्ट्वा मोदभराकुलः॥२॥

कलावयं कालिदासो नव्य इत्येव भाति मे।
शुद्धारसवती वाणी ह्युभयत्र प्रदृश्यते॥३॥

द्विवेदिश्रीमहावीरप्रसाद इतिनाम भाक्।
सोऽयं परार्थसम्पत्यै शतं वर्षाणि जीवतात्॥४॥

(६)

ओम्

जालन्धर शहर
१४-८-०५

श्रीयुत् मान्यवर महोदयेषु सविनयं प्रणतयः

भगवन्

कृपापत्र मिला और पुस्तक भी। नितान्त अनुगृहीत किया। इस अहेतुक कृपा के बदले धन्यवाद के सिवाय आपकी सेवा में क्या समर्पित करूं? ला० बदरीदास एम० ए० का पत्र वापस भेजता हूँ। पुस्तक जिल्द बांधने के लिए दफ्तरी को दे दी है। कलेवर ठीक होने पर ही उसे पढ़ूँगा।

जिस पालिसी से पं० दुर्गाप्रसाद जी ने वात्स्यायन कामसूत्र छपा डाले, क्या उसी के सहारे तरुणोपदेश नहीं छप सकता? जो पुस्तक यौवनमदान्धों के दुराचरण छुड़ाने में कामयाब हुई है वह तो जरूर ही छपनी चाहिए। आजकल के युवकों को इस प्रकार की अत्यन्त उपयोगी शिक्षा न मिलने से न मालूम कितने घराने तबाह और बरबाद हो गए और कितने युवक अपने धन-यौवन को खो बैठे। इनके बचने का यदि कोई उपाय निकल आवे तो अच्छा ही है। पण्डित जी! मैं आपकी समालोचना-विषयक स्पष्ट भाषिता से बड़ा ही खुश हुआ। आपका बहुमूल्य समय व्यर्थ गंवाना तो मैं भी नहीं चाहता। मैं सोचता हूँ कि इस विषय में क्या किया जाय? ला० मुँशीराम की वर्तमान आर्थिक दशा देखते हुए आशा नहीं कि वे आपकी योग्यता और परिश्रम के अनुरूप कुछ दे सकें। परन्तु विद्यालय का पीछा इन भ्रष्ट पुस्तकों से जरूर ही छुड़ाना चाहिए। यदि कमेटी में आपके पत्र का अच्छा परिणाम न हुआ

तो मैं इस विषय में ऐसे मनुष्यों से प्रस्ताव करूँगा जो चाहते हैं कि ऐसी रद्दी पुस्तकें विद्यालय में न पढ़ाई जाँय।

अच्छा महाराज! "विषवृक्षोपि संवर्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम्" आप इसी नीति का पालन कीजिए। वास्तव में आपकी सज्जनता और भद्रता अनुकरणीय है। क्या आप बतला सकते हैं कि लगभग कितना रुपया इस काम के लिए अपेक्षित है।

सरस्वती द्वारा न मालूम आपने कितने पुरुषों के दर्शन करा दिए। परन्तु स्वयं सृष्टिकर्त्ता की तरह 'अलक्ष्यरूपता' में ही स्थित हैं?

यदि सरस्वती में नहीं तो वैसे ही एक अपना 'फोटो' इनायत कीजिए।

भवदलौकिकगुणवशीकृतस्वान्ती

भवतांदिदृक्षु—
पद्मसिंह श०

(७)

ओम्

जालन्धर शहर
१०—९—०५

श्रीमत्सु श्रद्धाभाजनेषु सादरं नमस्कृतिः

५ ता० का कृपापत्र मिला। अत्यन्त अनुगृहीत किया। विक्रमांक चर्चा का सरस्वती में निकलना 'एकाक्रिया द्व्यर्थंकरी प्रशस्ता' के अनुसार होगा तो ठीक, परन्तु एक तो सरस्वती के पाठक उसे फिर न खरीदेंगे दूसरे साइज बड़ा हो जायगा। नैषध चर्चा से बड़ा उसका साइज न होना चाहिए। आपके सब पुस्तकों का एक ही साइज होता तो अच्छा था अस्तु, किसी प्रकार वह निकलनी चाहिए। संस्कृत चन्द्रिका में मैंने कालिदास विषयक लेख नहीं पढ़ा। (एकबार जब मैं अजमेर में था, चन्द्रिका का मूल्य भेजकर मैनेजर से प्रार्थना की थी चन्द्रिका मेरे नाम जारी कर दें, परन्तु वे मूल्य हजम कर गये और चन्द्रिका न भेजी) 'नव साहसांकचरिता' मैंने नहीं पढ़ा। मैं आपकी पुस्तकें मंगाने के लिये किसी से अनुरोध इसलिए नहीं करता कि इससे आपकी आर्थिक सहायता हो नहीं किन्तु इसलिए कि लोग उन अपूर्व पुस्तकों को देखें और अपने जाड्य का परिमार्जन करें। वैद्य को रोगियों की इतनी आवश्यकता नहीं होती जितनी जरूरत की रोगियों को वैद्य की होती है।

व्याकरण बनाने के लिये जिन बातों की आवश्यकता है, वे सब आपमें हैं। सामग्री और अवकाश की कमी अलबत्ता हो सकती है। यह ठीक है कि आपसे बहुत से कामों के लिये प्रार्थना की जाती है और निस्सन्देह आप कर भी बहुत कुछ रहे हैं। परन्तु फिर भी आपके सिवा और कहें किससे? अभागे हिन्दी साहित्य को तो केवल एक आपका ही सहारा है और बस। 'भाषा और व्याकरण' विषयक प्रबन्ध को अवश्य लिखिए। हमें आशा है कि वह हिन्दी व्याकरण की भूमिका होगी। और जब भूमिका बन गई तब व्याकरण भी किसी न किसी दिन बन ही जायगा। परमात्मा से प्रार्थना है कि इस काम में आपको पूरी सफलता प्राप्त हो।

ला० बदरीदास आजकल काश्मीर यात्रा के लिये गये हैं। मुझे ला० देवराज जी से कोई खास जाती अदावत नहीं है। हां, उनकी रद्दी पुस्तकों को साहित्य के गले पर छुरी फेरते देखकर जी जरूर जलता है। यदि लाला साहब अपनी पुस्तकों को उठाकर या उनका उचित रीति से संशोधन कराकर अपने आपका प्रायश्चित कर लें, तो अच्छा हो, यही मेरा अभिप्राय है। देखिए ला० बदरीदास आपकी चिट्ठी पर क्या कारवाई करते हैं। इसको और देखलें, फिर सोचेंगे कि क्या करें।

आपसे एक सम्मति लेनी है। मेरी एक रिश्तेदार लड़की मेरे पास रहकर विद्यालय में पढ़ने के लिए तीन चार दिन से यहाँ आई है। हिन्दी पढ़ लिख लेती है। बुद्धि अच्छी है और पढ़ने की प्रबल उत्कण्ठा है। विद्यालय की पढ़ाई का अनुमान तो उसकी पुस्तकों से ही आपने कर लिया होगा। ऐसी दशा में उसे कौन सी पुस्तकें पढ़ानी उपयोगी होगी? हिन्दी में कौन सा व्याकरण पढ़ाया जाय? और हिन्दी साहित्य में क्या पढ़ावें? प्रत्येक उपयुक्त विषय के एक एक दो दो पुस्तकों का नाम और पता बताने की कृपा कीजिए।

आपने एक छोटी सी खिदतम मेरे सुपुर्द की है। इससे मैं बहुत ही खुश हुआ। मैं यथाशक्ति प्रयत्न करूंगा कि रावलपिण्डी से एक अच्छी पट्टी आपके लिये मंगा कर भेजूं। यदि वहां से न मंगा सका तो फिर लाहौर तो पास ही है। टोपी का नमूना आप पहले से भेज दें। रुपयों की जरूरत नहीं। फिर देखा जायगा।

विक्रम चर्चा के सुभाषितों का संग्रह अभी बाकी रहता है। इस कारण न भेज सका।

दयाकांक्षी
पद्मसिंह

(८)

ओम्

जालन्धर शहर

श्रीमत्सु परमश्रद्धास्पद-सुगृहीतनामधेयेषु प्रणतयः

समस्तीपुरवाला कृपापत्र मिला। अनुगृहीत किया। ठीक है, पं० दुर्गाप्रसाद जी ने जिन सहारों से कामसूत्र छपा डाला वे आपको साध्य नहीं। परन्तु लाहौर में एक गुलामनबी हकीम हैं। उन्होंने इस विषय पर उर्दू में ८–१० पुस्तकें लिखी हैं। उनमें जननेन्द्रिय आदि के चित्र भी दिये हैं। उनमें बहुत सी ऐसी बातें भी हैं जो सामान्य दृष्टि में अश्लील प्रतीत होती हैं। सर्वसाधारण में उनका प्रचार है। अब तक उनकी कई आवृत्तियाँ निकल चुकी हैं। यदि आप उन्हें देख कर इस बारे में कुछ निश्चय करना चाहें तो मैं अपने एक मित्र से वे पुस्तकें आपके पास भिजवा दूँ? इससे मेरा यह अभिप्राय नहीं कि आप तरुणोपदेश को अभी छपा डालें। किंतु कभी न कभी वह छपना अवश्य चाहिए। जब उर्दू तक में इस प्रकार की एक नहीं अनेक पुस्तकें हैं तब हिन्दी का इस विषय से शून्य रहना ठीक नहीं।

अगस्त की सरस्वती में 'कुमुदसुन्दरी' आपकी ही अलौकिक प्रतिभा का फल प्रतीत होती है। और किसी को काहे को यह दूर की सूझने लगी है:—

"इसके भृकुटी भय का मारा, लोप शरासन है बेचारा।"

अहा! क्या विचित्र उक्ति है? कैसा सरस काव्य है?

इन्द्रधनुः तो इस भृकुटी भय से छिपा ही रहता है परन्तु कहीं भारतवर्ष से धनुर्विद्या इसी के भय से तो लुप्त नहीं हो गई? कदाचित् आजकल धनुः इसीलिए दिखलाई नहीं देते, पहाड़ों में भीलों के पास मुँह छिपाये पड़े हैं!!! धन्य हो कवे!

'माघ' वाले लेख में मुझे एक शिकायत है। वह यह कि आपके नोटों को छोड़ कर प्रायः सब लेख म० म० पं० दुर्गाप्रसाद जी के लेख का (जो निर्णय सागर वाले माघ की भूमिका से छपा है) अनुवाद मात्र है। परन्तु सेठ जी ने उनका नाम नहीं दिया। इसके सिवा 'तावद्भा भारवेः" पद्य पर तारानाथ के 'इत्युद्भटः' कथन पर जो क्लाट साहब की शंका है, उसका समाधान पं० दुर्गाप्रसादजी ने वाचस्पति कोश के ही प्रमाण से यह किया है कि यहाँ पर उद्भट शब्द कविविशेष का बोधक नहीं। किंतु 'अज्ञातकर्तृनामा श्लोक' से तात्पर्य है, अर्थात् 'स्फुट' श्लोक

से, यह लिखकर उन्होंने लिखा है कि 'इत्यालोच्य समवेता शार्मण्यपण्डितेन सन्तोष्टव्यम्' परन्तु सेठ जी ने शंका मात्र लिखी है, उसका समाधान छोड़ दिया।

पण्डित जी! संस्कृत कवियों के जीवनचरित्रविषयक जिस 'प्रबन्ध कोष' का उल्लेख पं० दुर्गाप्रसाद जी ने कई स्थलों पर किया है, क्या वह आपने देखा है? कहीं वह छपा भी है?

'स्वाधीनता की भूमिका' पढ़कर हर्ष हुआ। परन्तु साथ ही यह पढ़कर खेद भी हुआ कि—

"बहुत सम्भव है कि हमारी यह पुस्तकें 'बे छपी ही रह जायं,'—हाँ! अपने देश के धनिकों की विद्या विषय में बद्धमुष्ठिता देखकर महात्मा विदुर की यह उक्ति स्मरण हो आती है—"द्वावाम्भसिनिवेष्टव्यौ गले बद्ध्वा दृढा शिलाम्। धनवन्तमदातारं दरिद्रं चातपस्विनम्॥"
क्या सचमुच ही पुस्तक न छपेगी? बेकनविचार—की तरह किसी पुस्तक विक्रेता को ही उसे दे डालिए। छपाइए अवश्य।

अत्यन्त विनीत शिष्य भाव से एक जिज्ञासा है, यदि इसमें किसी प्रकार धृष्टता की गन्ध भी हो तो हम क्षमा प्रार्थी हैं।

आपका मत है कि 'जब' के साथ 'तब' का प्रयोग होना चाहिए' 'तो' का नहीं। परन्तु उर्दू के प्रसिद्ध कवि गालिब ने इसका प्रयोग इस प्रकार किया है—

"यह कह सकते हो हम दिल में नहीं है? पर यह बतलावो।
कि जब दिल में तुम्हीं तुम हो तो आंखों से निहां क्यों हो?"

और इस प्रकार के महाविरे हिन्दी और उर्दू में यकसां ही होने चाहिए॥

जुलाई की सरस्वती में (पं० मथुराप्रसाद जी की जीवनी में) कई स्थान पर पाठशाला शब्द का प्रयोग पुँल्लिग में किया गया है। इस पर सरस्वती के एक पाठक जो (क० महाविद्यालय के मुख्याध्यापक हैं) पूछते हैं कि ऐसा क्यों किया गया उन्हें क्या उत्तर दिया जाय?

आपकी चिट्ठी अभी विद्यालय की कमेटी में पेश नहीं हुई। उसकी चर्चा तो मेम्बरों में हो गई है, आगामी अधिवेशन में शायद वह पेश होगी। यह बात मुझे कमेटी के दो सभ्यों से विदित हुई है, जिनसे मेरा विशेष परिचय है, वे यह भी कहते हैं इसका कुछ सन्तोषजनक फल नहीं होगा। अस्तु, जो कुछ हो। प्रतीक्षा तो करनी ही चाहिए।

श्रीमत्कृपापात्रम्
पद्मसिंह

(१)

ओम्

जालन्धर शहर
१—१०—०५

श्रीमत्सु प्रणतिपुरःसरं निवेदनम्

श्रीमान् का कृपापत्र मिला, और पुस्तकें भी मिलीं। इस अनुग्रहातिशय और कृपातिरेक के लिए कोटिशः धन्यवाद। भाषा और व्याकरण को मैंने कई बार पढ़ा, ध्यान से पढ़ा। आपकी आज्ञापालन के अर्थ मैंने प्रयत्न किया कि उसमें विशेष स्थल पर कुछ अपनी सम्मति दूँ। परन्तु मैंने उसकी प्रत्येक बात अपने मत के अनुकूल पाई। यही नहीं किन्तु आपके लेख का प्रत्यक्ष मुझे कुछ ऐसा मोहित कर लेता है कि उसके प्रतिकूल कुछ सूझता ही नहीं। उसमें कही गई बात मुझे अपनी ही बात मालूम देने लगती है। सचमुच आपकी लेखनी में एक अपूर्व और अद्भुत शक्ति है। गालिब का यह शेर आपके ही लेखों पर चरितार्थ होता है—

"देखना तकदीर की लज्जत कि जो उसने कहा,
मैंने यह जाना कि गोया यह भी मेरे दिल में है।"

व्याकरण और भाषा में दो तीन जगह मैंने कुछ चापल्य किया है। एक तो 'अथ शब्दानुशासनम्। यह प्रतिज्ञासूत्र नहीं किन्तु अधिकार सूत्र है। इस सूत्र पर महाभाष्य में लिखा है—

"अथेत्ययंशब्दो धिकारार्थः प्रयुज्यते, शब्दानुशासनं नामशास्त्रमधिकृतं वेदितव्यम्।"

"संज्ञा[१] च परिभाषाच[२] विधि[३] नियम[४] एवच।
अति[५] देशोऽधिकारश्च[६] षड्विधं सूत्रमुच्यते॥"

इस कारिका में भी 'परिभाषितैनियम सूत्र' नहीं आया है। द्वितीय एक स्थान पर "ऐश्वरीय" शब्द है। वहाँ "ईश्वरीय" चाहिए, क्योंकि 'छ' प्रत्यय होने पर वृद्धि नहीं होती। यथा—स्वर्गीय, देवदत्तीय इत्यादि। तीसरा शब्द अनुग्रहीत है, वह अनुगृहीत चाहिए। बस।

एक प्रार्थना और है। इस निबन्ध में किसी स्थान पर इस विषय पर और लिख दीजिए कि बहुत से लेखक संस्कृत व्याकरण के अनुसार दूसरी भाषा के शब्दों में भी पर सवर्ण, षत्व और 'णत्व'का विधान कर देते हैं, जो अनुचित है। यथा—'अन्जुमन,' की जगह 'अञ्जुमन्' इन्जील की जगह इञ्जील इत्यादि लिखते हैं।

'पास्टमास्टर' के स्थान में 'पाष्टमास्टर' और 'गवर्नमेन्ट' की जगह 'गवर्णमेण्ट' आदि लिख देते हैं, जो सर्वथा अशुद्ध होता है।

निबन्ध में जहाँ कथित भाषा के लिए व्याकरण की अनावश्यकता दिखलाई है वहाँ यदि श्री हर्ष के इस श्लोक का सन्निवेश हो जाय तो अच्छा हो—

"भंक्तुं प्रभुर्व्याकरणस्य दर्पं पदप्रयोगाध्वनि लोक एषः। शशोयदस्यास्ति "शशी" ततो यमेवं मृगो स्यास्ति 'मृगी' तिन्नोक्तम्! ॥"

लेख बहुत ही उपयोगी और हृदयग्राही है, अवश्य छपाइए। इस प्रकार के लेख ही हिन्दी को उन्नत करेंगे। मत्सरी लोगों की बात पर ध्यान न दिया कीजिए। जो बात साहित्य का और लोगों का उपकार करे उसे प्रकाशित करने में किसी के आक्षेपों की परवाह न किया कीजिए। हाली ने कहा है—

"क्या पूछते हो क्यों कर सब नुक्ताचीं हुवे चुप।
सब कुछ कहा उन्होंने, पर हमने दम् न मारा॥"

हिन्दी भाषा के सच्चे शुभचिन्तकों को और स्वयं हिन्दी साहित्य को आपसे बड़ी बड़ी आशायें हैं। परमात्मा करे कि वे पूरी हों। आप सदा इसी प्रकार उसे उन्नत करते रहें। सरस्वती में 'रघुवंश तिलक' वाले कविमन्य की जो खबर आपने ली है, उसे पढ़कर बड़ा ही हर्ष हुआ। ऐसी ऐसी अनधिकार चेष्टा करने वालों की 'गोशमाली' जरूर करते रहा कीजिए।

पण्डित जी! अविवेकी लोक की गुणपरांमुखता को क्या कहूं! यदि आप कृपाकर के हमें 'शिक्षा सरोज' और रीडर्स न दिखलाते तो हम उनके विषय में नितान्त अनभिज्ञ ही बने रहते। कितने पश्चाताप और खेद का विषय है कि ऐसी अमूल्य पुस्तकों के प्रचार की कौन कहै नाम तक से लोक अपरिचित हैं। हा हतसिगुणज्ञते। सचमुच आपने जिस विषय पर लेखनी उठा दी है, उस विषय पर फिर किसी दूसरे लेखक को लिखने की आवश्यकता नहीं रही। मेरे चित्त में कई बार यह बात आई कि हिन्दी सीखने वालों बालकों के लिए कुछ पुस्तकें तैयार करने को आपको लिखूं। परन्तु अब मालूम हुआ कि आप इस काम को पहले ही कर चुके हैं। इससे बड़ा ही हर्ष हुआ। ला० बदरीदास अब काश्मीर से लौट आए हैं। शायद अब आपके पत्र का उत्तर दें। कदाचित् आपकी चिट्ठी से ही प्रेरित होकर ला० बदरीदास ने ला० मुन्शीराम को लिखा है कि आप कन्या म० वि० के लिए कुछ पाठ्य पुस्तकें तजवीज कीजिए। ला० मुन्शीराम आजकल बाहर गए हुए हैं। शायद उस विषय में वे मुझ से भी कुछ पूछें। इसलिए उन्हें दिखलाने के अर्थ शिक्षा सरोज और रीडर्स रख ली हैं। शिक्षा सरोज और रीडर्स क्या इंडियन प्रेस से मिलती हैं? शायद उनके मंगाने

की आवश्यकता पड़े। हिन्दी व्याकरण रख लिया है। उन्हें दिखाकर १५ दिन के पश्चात् आपके पास भेजूँगा। १ भाषा और व्याकरण, २ विक्रमांकदेव, ३ शिक्षण मीमांसा रजिस्टरी कराके भेजता हूँ।

नितान्त अनुगृहीत–
पद्मसिंह

(१०)

ओम्

जालन्धर शहर
९–१०–०५

भगवन्नमस्ते

कृपापत्र, टोपी की माप और १० रु० का मनीआर्डर ये सब मिले। पट्टी भेजने के लिए जिन साहब को पहले से कह रक्खा था न जाने किस कारण उन्होंने न अबतक पट्टी भेजी और न कुछ उत्तर ही दिया। इसलिए आज फिर ला० मुन्शीराम जी से एक अन्य महाशय को पट्टी भेजने के लिये लिखवाया है, आशा है ८-१० दिन में आ जायगी। विलम्ब के लिए क्षमा कीजिए, मजबूरी है।

आप यह क्या कहते हैं। मैं तो अपना परम सौभाग्य समझता हूँ कि आप मुझसे ऐसी ऐसी सेवा कराते रहें। आपने रुपये यों ही भेज दिये। कुछ आवश्यकता न थी। अच्छा फिर देखा जायगा। जहाँ को आपने लिखा है, यदि वहाँ से 'शिक्षण मीमांसा' मिलै तो आप उसे अभी वापस न कीजिए। जबतक आवश्यकता हो उसे अपने पास रहने दीजिए।

विक्रमांक में जो दो श्लोक मैंने लिखकर रखे हैं उनमें से एक 'वामसौदिवसोन' तो निर्णयसागर वाले 'अमरूशतक' के परिशिष्ट में है, और दूसरा बल्लभदेव संगृहीत 'सुभाषितावलि' में है। वह वहाँ पर किसके नाम से उद्धृत हुआ है यह याद नहीं रहा। विक्रमांक में बिल्हण ने बाणभट्ट का अनुसरण कई स्थानों पर किया है। विक्रम के नगरप्रवेश करते समय जहाँ 'पौरांगना विभ्रमचेष्टा' का उल्लेख है, उसमें कादम्बरी वाले चन्द्रापीड की छाया स्पष्ट झलकती है तथा जहाँ विक्रम ने अपने पिता की मृत्यु पर शोक किया है 'कथं वासंधरिष्यन्ते ता दशाः परमाणवः।' इत्यादि वहां 'हर्षचरित' के इस स्थल का साफ साफ अनुकरण किया गया है जहां कि हर्ष-

वर्द्धन के पिता की मृत्यु पर विलाप का वर्णन है। यदि उचित समझिए तो विक्रमा० चर्चा में इसका भी उल्लेख कर दीजिए।

पं० जी ! मैं कुछ संस्कृत, मामूली हिंदी और उर्दू और थोड़ी सी फारसी के अतिरिक्त और कोई भाषा नहीं जानता, इसलिए अफसोस है कि मराठी की उन पुस्तकों से जिनका उल्लेख आपने पत्र में किया है लाभ नहीं उठा सकता।

यदि आप अनुग्रहपूर्वक किसी समय हस्तलिखित तरुणोपदेश का साक्षात्कार करा दें तो मैं अपने को अति अनुगृहीत समझूँ। (यदि आप ऐसा करने में कुछ हानि न समझें तो)।

शिक्षासरोज और रीडर्स की बात ने मुझे सन्देह में डाल दिया। तो क्या छओं भाग शिक्षा सरोज, और वे दोनों रीडर्स ये दोनों ही पुस्तकें विक्रम के लिए इंडियन प्रेस में उपस्थित नहीं हैं ? यदि कोई उन्हें लेना चाहे तो कहाँ से ले ? क्या आपकी खास सिफारिश से भी 'शिक्षा सरोज' और रीडर्स की एक एक प्रति इंडियन प्रेस से नहीं मिल सकती ? यदि वे किसी प्रकार मिल सकें तो उनके लिए मैं आपको अवश्य कष्ट दूँगा कि उक्त पुस्तकें मुझे इंडियन प्रेस से दिलवावें। मुझे वे बड़ी ही पसन्द आई हैं। चाहे उनका प्रचार हो वा न हो। मैं अपनी सन्तान को उनके द्वारा ही हिन्दी सिखलाना चाहता हूँ। यदि इंडियन प्रेस हिम्मत करके उनकी कुछ कापियां छाप डाले तो बहुत से लोग उन्हें खरीदें और लाभ उठावें। अविवेकी गवर्नमेंट के मन-जूर न करने से उनकी कीमत कम नहीं हो गई। वे तो बड़ी काम की किताबें हैं। उनका प्रचार तो अवश्य होना चाहिए।

कृपापात्र
पद्मसिंह

यह पत्र लिख चुकने पर मुझे ठाकुर शिवरत्नसिंह जी मिले। वे कहते हैं कि 'शिक्षण मीमांसा' अब शायद नहीं मिलता। इसलिए पं० जी उसे ही अपने पास रहने दें। यदि मिलता हो तो भी न मंगावें। ठाकुर साहब यह भी कहते हैं कि 'आत्म विद्या' और 'ज्योतिर्विलास' भी हमारे पास हैं। यदि हमें पहले से मालूम हो जाता तो हम उन्हें भेज देते। वे यह भी कहते हैं कि पण्डित जी मराठी भाषा की कोई पुस्तक जब मंगाना चाहें तब पहले हमसे पूछ लिया करें। हमारे पास मराठी की प्रायः सब पुस्तकें हैं। उनके लिए दाम खर्चने की जरूरत नहीं। वे कहते हैं कि 'ज्योतिर्विदा' की जोड़ की एक दूसरी पुस्तक 'अन्तरीक्षातील चमत्कार' हमारे पास है। इन दोनों पुस्तकों के आधार पर यदि कोई पुस्तक लिखी जाय तो अच्छा

हो। 'संसार सुख' और 'जीवित कर्त्तव्य' नामक दो पुस्तकों का अनुवाद ठाकुर साहब दाम देकर कराना चाहते हैं, क्या आपके पास इसके लिए समय है? ठाकुर साहब आपको 'नमस्ते' भी कहते हैं।

पद्मसिंह

(११)

ओम्

जालन्धर शहर
१५-१०-०५

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

कृपापत्र मिला। आशा है अब श्रीमान् की तबीयत अच्छी हो गई होगी।

अनुग्रहपूर्वक वह श्रृंगार रस का नवनीत अवश्य चखाइए। उसे देखकर आपसे विरक्ति नहीं होगी। किंतु और अत्यधिक अनुरक्ति हो जायगी। आपसे और विरक्ति? और फिर मुझे? शिव शिव।

यद्यपि सभी रस अपने अपने मौके पर मेरे चित्त को अधिकृत कर लेते हैं। परन्तु उनमें से श्रृंगार और करुणा ये दो मुझे अधिक प्रिय हैं। 'तरुणोपदेश' में अबके सा भाषा लालित्य चाहे न हो, कुछ त्रुटियां भी भले ही रह गई हों, परन्तु वह कई कारणों से द्रष्टव्य है। आप उसे वैसा ही रहने दीजिए जैसा कि लिखा गया है। कदाचित् कोई महाशय आपका जीवनचरित संकलन करें तो उन्हें भाषा के तारतम्य दिखलाने के समय उससे कुछ सहायता मिले। उर्दू और फारसी के सुप्रसिद्ध कवि 'अमीरखुसरो' ने अपनी कविता को तीन भागों में विभक्त किया है, अर्थात् एक दीवान में बचपन की दूसरे में जवानी की और तीसरे में बुढ़ापे की कविता का सन्निवेश किया है। जिससे पढ़नेवाले, कविता की क्रमशः उन्नति के विषय में अपनी राय कायम कर सकें। यदि हिन्दी भाषा जिन्दा रही तो एक समय आएगा और जरूर आएगा जबकि विद्वान् लोग आपकी कविता और आपके जीवन पर निबन्ध लिखेंगे। परन्तु उनके लिए कुछ सामग्री पहले से ही प्रस्तुत होनी चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि वे लोग भी आपको वैसा ही उपालम्भ दें जैसा कि आप संस्कृत के प्राचीन कवियों को आत्मविषयक परिचय न देने के विषय में दिया करते हैं।

इसलिए आपसे सानुरोध प्रार्थना है कि निज चरित विषयक कुछ नोट लिखते जाइए जिससे भावी लेखकों को भटकना न पड़े।

ठाकुर शिवरत्नसिंह वर्मा विदर्भ देशान्तर्गत पातूर नामक स्थान के निवासी हैं। यहां कई साल से अपनी पत्नी, विमाता और एक मात्र अपत्य पुत्री के साथ रहते हैं। ये सबके सब कन्या विद्यालय में आनरेरी काम करते हैं। आर्यसमाज से उनका सम्बन्ध है। स्वतन्त्र प्रकृति के मनुष्य हैं। अभी दो मास बीते अपनी पुत्री का विवाह उन्होंने एक काश्मीरी ग्रेजुएट ब्राह्मण से किया है। कुछ जायदाद और रुपया पास है। उससे निर्वाह करते हैं। मराठी के अच्छे अच्छे पुस्तकों का इनके पास अच्छा संग्रह है। मराठी के कई दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र इनके पास आया करते हैं। कुछ दिन हुए मैंने आपकी पुस्तकें इन्हें दिखलाई थीं। तब से ये आपके भक्त बन गये हैं। सरस्वती के भी ग्राहक हैं। उसे अपनी पुत्री के नाम मंगाते हैं। ला० देवराज की पुस्तकों के ये भी विरुद्ध हैं। चाहते हैं कि इनका खंडन हो तो अच्छा है।

आपकी रीडर्स के विषय में मैं इंडियन प्रेस से पूछूँगा, यदि वहाँ से किसी प्रकार न मिल सकीं तब आपको कष्ट दिया जायगा। मैं प्रयत्न तो करूंगा कि रीडर्स और शिक्षा सरोज की १००-५० कापियां लेनेवाला कोई पैदा हो जाय। परन्तु लोगों की मूर्खता को क्या किया जाय ?'—

"यथा किराती करिकुम्भ जाता मुक्ता परित्यज्य विभर्ति गुंजा" वाली बात हो रही है। जैसी गवर्नमेन्ट वैसी ही प्रजा।

पट्टियां रावलपिण्डी से अच्छी मिलती हैं। इसलिए वहाँ को ही लिख दिया गया है।

दो चार दिन में ठाकुर साहब से वे किताबें लेकर भेज दूँगा। अपना स्वास्थ्य समाचार लिखिए।

कृपापात्र
पद्मसिंह

(१२)

ओम्

जालन्धर शहर
२२—१०—०५

श्रीमत्सु सादरं प्रणामा:

पारसल और कृपापत्र मिला। अनुगृहीत किया।

आपके इस अनुपम औदार्य और दयाभाव का धन्यवाद किस प्रकार दिया

जाय। मुझे अपने जीवन में यह साल भी याद रहेगा। आपने अनेक ग्रन्थरत्न दिखला कर मुझे आप्यायित कर दिया है। और आपके इस अपूर्व अनुग्रह ने मुझे अपना क्रीतदास बना लिया है।

आपके जीवनचरित में वही कुछ रक्खा है, जिसके लिए जीवनचरित लिखे जाते हैं। यदि किसी अन्य सुयोग्य पुरुष ने इस ओर ध्यान न दिया तो मैं ही टूटे फूटे शब्दों में लोगों के पास तक उसे पहुंचाने का प्रयत्न करूंगा। पर आप उसके लिए कुछ सामग्री तो प्रस्तुत कीजिए। कृपया नोट्स लिखने के लिए कुछ समय निकालिए।

आपके कोई सन्तति नहीं, यह मालूम करके बड़ा खेद हुआ। क्या किया जाय। ईश्वर की इच्छा। परन्तु आपकी मनोहारिणी कविता हिन्दी का उपकृत साहित्य, आपके यशःशरीर की यादगार क्या कुछ कम है?

"जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकायं जरामरणजंभयम्॥"

जौक ने भी कहा है—

"रहता सुख नसें नाम कयामत तलक है जौक।
औलाद से तो है यही दो पुश्त चार पुश्त॥"

मराठी की जिन दो पुस्तकों के विषय में लिखा था, उनमें से एक आपकी सेवा में भेजता हूँ। उसे देखिए। इसका अनुवाद ठाकुर साहब कराना चाहते हैं। वे कहते हैं कि इसमें जो पद्य हैं उनका अनुवाद भी पद्य में ही हो। जिस अंग्रेजी ग्रन्थ का यह अनुवाद है यदि वह आपके पास न हो तो मंगा लीजिए। मूल्य ठाकुर साहब देंगे। दूसरे पुस्तक के लिए पूना को लिख दिया है आने पर वह भी भेज दी जायगी।

रीडर्स के लिए मैंने इंडियन प्रेस को लिखा था। परन्तु वहाँ नहीं मिलती। आप उनसे कहिए कि हिम्मत करके उनकी १००-२०० कापियां छाप डालें। पुस्तकें बिकने लायक हैं। जरूर बिकेंगी।

मराठी पुस्तक के साथ 'शिक्षा सरोज' का गुटका भी भेजता हूँ। रीडर्स की नज्मैं नकल करके पीछे से भेजूँगा।

पट्टी भेजने में बिलम्ब के लिए फिर क्षमा प्रार्थी हूँ। हम कई आदमियों ने मिलकर रावलपिण्डी से पट्टियां मंगाई थीं परन्तु अभी तक नहीं पहुंची। अब उनकी प्रतीक्षा न करके, अमृतसर से लाकर काम चलाएंगे। तीन चार दिन में स्वयं अमृतसर जाने का विचार कर रहे हैं। तभी पट्टी भेजी जायगी। रावलपिण्डी से पट्टियां

उत्तम और सस्ती मिलती हैं। इसलिए वहाँ से मंगाने की कोशिश की गई थी, खैर।

अक्टूबर की सरस्वती में ला० देवराज वाला नोट पढ़ा। 'जमाने' की खबर अच्छी ली है।

हाँ, उस ला० नारायणदास वाली 'शिक्षामणि' की समालोचना भी आगामी संख्या में (यदि हो सके) तो निकाल दीजिए। लाला साहब उत्सुक हैं।

आपका कृपाकांक्षी
पद्मसिंह

(१३)

ओम्

जालन्धर शहर
६–११–०५

श्रीमत्सु प्रणति कदम्बाः

दयादल मिला। अनुगृहीत किया।

अनुवाद के विषय में सब कुछ ठाकुर साहब से सुना दिया। वे जो कुछ उत्तर देंगे, कल परसों, मैं लिख भेजूँगा।

क्षमा प्रार्थना पुरःसर निवेदन है कि सुतरी रंग की पट्टियां यहां नहीं मिलतीं। रावलपिण्डी से कुछ उत्तर नहीं मिला। लाहौर में एक महाशय को लिखा था। उन्होंने सुतरी रंग का मलीदा भेज दिया। सो कल वापस करके उनसे पूछा है कि "क्या इस रंग की पट्टी वहाँ नहीं मिलती? यदि मिलती हो तो पट्टी भेज दो मलीदा नहीं चाहिए।" सो कल आज में वहाँ से पट्टी या उत्तर आनेवाला है। यदि पट्टी आ गई तो खैर, वरना मैं फिर स्वयं अमृतसर या लाहौर जाऊंगा। आप कृपया लौटती डाक से उत्तर दीजिए कि यदि सुतरी बादामी रंग की पट्टी न मिलै तो अपनी पसंद से किसी अन्य रंग की अच्छी पट्टी भेज दूँ? या क्या करूँ?

और उस रंग की टोपी भी यदि न मिलै तो किसी और रंग की भेज दूँ? यहाँ एक दूकानदार के यहाँ बादामी रंग की एक पट्टी है, पर वह पतली है, दबीज नहीं, और वह पट्टी 'धारीवाल' पंजाब की बनी हुई है। (खालिस है) पर काश्मीर या काबुल की नहीं। उसका सूट कोई ७॥) रु० में बैठता है।

मैं निहायत शर्मिन्दा हूँ कि आपके हुक्म की तामील अबतक नहीं कर सका। यद्यपि मैं प्रयत्न उसी समय से कर रहा हूँ। अब आप यह पत्र पाते ही जैसा उचित समझिए लिखिए। मैं आपका पत्र आने तक लाहौर जाने से रुका हुआ हूँ। पट्टी न पहुंचने से आपको अबतक इन्तजार करने में जो कष्ट हुआ है उसके लिये फिर क्षमा मांगता हूँ।

सरस्वती में न सही किसी अन्य पत्र में ही 'देशोपालम्भ' को प्रकाशित कराइए।

उत्तराभिलाषी
पद्मसिंह

(१४)

ओम्

जालन्धर शहर
१३–११–०५

श्रीमत्सु प्रणामाः

कृपाकार्ड मिला। आज बादामी रंग की पट्टी मिल गई। पट्टी धारीवाल की है। खालिस ऊन है और नई है। मुझे तो पसन्द आई। देखिए, आप पसन्द करते हैं कि नहीं। यदि पसन्द न आवे तो बिला तकल्लुफ लिखिए, चाहे वापस भेज दीजिए। जैसी (असली-काबुली) सुतरी पट्टी की तलाश में इतना सुदीर्घ विलम्ब हुआ। मालूम करने पर पता लगा कि वैसी पट्टियां लाहौर और अमृतसर में भी नहीं मिलती हैं। इसलिए इस पर ही कनाअत करनी पड़ी। टोपी अभी तक वैसी नहीं मिली। किश्तीनुमा मिलती हैं। उसके लिए कुछ और समय दीजिए। लाहौर या अमृतसर से लेकर भेजूँगा। पट्टी भेजने में बहुत अतिकाल हो गया है जिसके लिये मैं बहुत ही शर्मिन्दा हूँ। विलम्ब होने के ही कारण से टोपी का इन्तजार नहीं किया। यदि पट्टी पसन्द आ जाय तो आप इसका सूट तैयार कराइए। टोपी भी पहुँच जायगी।

पट्टी ३ गज २ गिरह है। आशा है आपके पूरे सूट के लिए काफी होगी।

बिल्टी पत्र के साथ भेजता हूं। पहुंच लिखिए।

ठाकुर साहब बाहर गये हैं। उनके आने पर अनुवाद के बारे में लिखूँगा। पण्डित जी! आप संस्कृत मासिक पत्र 'विद्यालय' को देखते रहे हैं? मेरे पास उसका

पुराना फाइल है। उसमें कई लेख बड़े उत्कृष्ट हैं। कहिए मकान से मंगाकर भेज दूँ ?

विद्यालय कमेटी की ओर से आपकी उस चिट्ठी का फिर कुछ उत्तर गया ?

भवत्कृपाकांक्षी
पद्मसिंह

(१५)

ओम्

जालन्धर शहर
१९–११–०५

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

कृपापत्र मिला। अनुगृहीत किया। यद्यपि मुझे यह मालूम नहीं था कि आप हाथ की बनी हुई ही पट्टी चाहते हैं। परन्तु मैंने यथासाध्य प्रयत्न वैसी ही पट्टी के लिये किया था, परन्तु वैसे रंग की और बारीक पट्टी न मिल सकी। लाचार मिल की बनी लेनी पड़ी।

मुझे अफसोस है कि मैं आपकी इच्छानुसार, आपकी आज्ञा के पालन में असमर्थ रहा, यह—"प्रथमग्रासे मक्षिकापातः' हुआ।

मैं २५ नवंबर को लाहौर जाऊंगा, वहाँ से आपके लिये टोपी भेजूँगा।

पट्टी के हिसाब में आप और कुछ न भेजिए। कुछ आने ही और खर्च हुए हैं। 'हिसाबे दोस्तां दरदिल'।

ठाकुर शिवरत्नसिंह जी अनुवाद की उतनी कीमत देने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं और कहते हैं कि उन पुस्तकों के प्रचार से मेरा प्रयोजन धन कमाना नहीं है। यदि नागपुर वाले उन पुस्तकों का अनुवाद कराना पसन्द करें तो ठाकुर साहब भी कुछ सहायता दे देंगे। आपका समय बहुमूल्य नहीं किन्तु अमूल्य है। और ठाकुर साहब इतना रुपया नहीं दे सकते। इस दशा में क्या किया जाय ? आपसे कुछ कमी के लिये प्रार्थना करना भी नितान्त असभ्यता है। मुझे अफसोस है कि मैंने इस विषय में आपको व्यर्थ तकलीफ देकर अपनी मूर्खता का परिचय दिया अस्तु, क्षमा कीजिए।

विद्यालय कमिटी ने आपको न कुछ उत्तर दिया और न दे। ला० देवराज बड़ा दुरभिमानी, दुराग्रही और अर्थगृघ्न है। अजब तमाशा है जिस आदमी को जिस

भाषा में शुद्ध नाम तक लिखना नहीं आता, वह उस भाषा में पाठ्यपुस्तकें तैय्यार करैं। लक्षाधिप होने पर भी अपनी तमाम किताबों और 'पण्डिता' अखबार का रुपया विद्यालय फण्ड में नहीं देते, इन सबका कापीराइट उन्होंने अपने ही अधीन रक्खा है। इतने पर भी विद्यालय कमिटी ऐसी रद्दी पुस्तकों का उठाना पसन्द नहीं करती। यही नहीं किन्तु 'पाठावली प्रथम भाग—'बालोद्यान संगीत' (?) और 'पण्डिता' अखबार को पंजाब गवर्नमेंट ने मंजूर किया है।

अब ला० देवराज ने ला० मुन्शीराम से सन्धि कर ली है और अपनी पुस्तकों को और पत्र को इसी प्रेस में छपाना प्रारम्भ किया है। अब कुछ उनकी शुद्धि पर भी ध्यान होने लगा है। मेरी आपसे सानुरोध और सविनय प्रार्थना है कि इन पुस्तकों की समालोचना शीघ्र ही निकालिए और वह कम से कम इतनी तो हो जितनी हिन्दी शिक्षावली तृतीय भाग की है।

समालोचना कृपाकर आप ही लिखिए। समालोचना लिखना केवल आपके ही हिस्से में आया है। कुछ डर नहीं यदि आपका अमूल्य समय इस महोपकारक काम में खर्च हो जाय। कृपया अबोध बालिकाओं का पीछा इन दुष्ट पुस्तकों से छुड़ाइए।

अच्छी तरह खबर लीजिए। यदि आप शिष्टाचार और पूर्व परिचय के अनुरोध से अपना नाम न देना चाहें तो मेरा नाम दे दीजिए। मैं, इस बात की परवा नहीं करता। 'सरस्वती' में निकलने के पीछे समालोचना को पृथक् पुस्तकाकार छपवा कर वितीर्ण करने का प्रबंध मैं करूंगा। अब आप इसमें देर न कीजिए। समालोचना जनवरी तक निकल जानी चाहिए।

आपका दयाभिलाषी—
पद्मसिंह

(१६)

ओम्

जालन्धर शहर
४—१२—०५

श्रीमत्सु श्रास्पदेषु प्रणतयः

मैं २३—११— से ३० तक लाहौर रहा। वापस आकर आपका कृपापत्र मिला। ठाकुर शिवरत्नसिंह जी से अनुवाद के विषय में पूछा। वे कहते हैं कि हम

दोनों पुस्तकों के अनुवाद की सहायता में फी पुस्तक १००) रु० के हिसाब से २००) दे देंगे चाहे उन्हें कोई प्रकाशित करै।

अब आप अन्य किसी प्रकाशक यजमान को तलाश कीजिए। इन्हें पक्का समझिए।

ठाकुर साहब कांग्रेस के मौके पर बनारस जाते हुए आपसे मिलैंगे भी।

वे यह भी कहते थे कि हमने अपने जामाता को (जो अंग्रेजी में बी० ए० हैं) सरस्वती के लिए लेख लिखने को कहा है। यदि उनका कोई लेख पहुंचे तो आप उसे (यदि उचित हो) सरस्वती में स्थान दे दीजिए।

मैं ९-१२- के बाद १०-१२ दिन के लिए अपने जन्मस्थान (जिले बिजनौर) को जाऊंगा। विद्यालय के पुस्तकों के विषय में वहाँ से वापस आकर (यदि हो सका तो पहले ही) आपको सूचना दूँगा।

लाहौर से आपकी टोपी आ गई है। उसे कल या परसों आपकी पुस्तकों के साथ रवाना करूंगा।

पट्टी या टोपी के पैसों की बाबत में आपको कुछ न लिखूँगा। क्षमा कीजिए।

'भाषा और व्याकरण' के ऊपर यदि कोई कुछ (विपक्ष में) लिखें तो उसका पता मुझे भी दीजिए। सरस्वती की एक कविता में 'पंजाब' के लिए 'पांचाल' शब्द का प्रयोग हुआ है। यह ठीक नहीं। देवराज की 'पांचाल पण्डिता' पर बड़े ऐतराज हुए थे। 'पांचाल' फर्रुखाबाद और कन्नौज के पास की भूमि का नाम है। पंजाब 'पंचनद' हो सकता है 'पांचाल' नहीं। इस पर आपका नोट चाहिए था।

आशा है आप महाराजा छत्रपुर के यहाँ हो आए होंगे। आपके इस राज सम्मान से बड़ी प्रसन्नता हुई। परमात्मा भारत के राजाओं को सुमति दे कि वे आप जैसे विद्वानों के सत्संग से लाभ उठाना सीखें।

हस्तलिखित पुस्तकें पढ़ीं सच तो यह है कि आप भी बस अपने वक्त के एक ही हैं। आपका नवनीत वास्तव में नवनीत क्या सुधा है।

यदि कहीं आपकी यह कविता प्रकाशित हो सकती तो सहृदय-रसिक जान सकते कि "अभी कुछ लोग बाकी हैं जहां में"।

इस विषय पर इससे अधिक सरलता और सरसता से इतने विशद रूप में और कोई भला क्या लिखैगा ? धन्य हो कवे ! आपने तो इस गुण में अगले पिछले सब कवियों को मात कर दिया ! ! इस कविता को पढ़कर आपकी अद्भुत प्रतिभा और अपूर्व रसिकता की प्रशंसा के लिए शब्द ही नहीं मिलते। "भगवति कविते सौभाग्यवत्यसि, या सतोदृश कविवरेण समुपलालितासि।

आपका तरुणोपदेश नवयुवकों के लिए संजीवनी बूटी है। उसे पढ़कर खेद

हुआ कि अब तक प्रकाशित क्यों नहीं हो सका ? ऐसी अपूर्व और शिक्षाप्रद पुस्तक जितनी जल्दी प्रकाशित हो उतना ही अच्छा।

इस विषय में मैंने जितनी उर्दू की पुस्तकें पढ़ीं हैं, कई अंशों में उन सब से इसे अच्छा पाया, फिर उन्हें देखे, इसमें अश्लीलता की तो गन्ध भी नहीं। क्या कोई देशहितैषी और उदार पुरुष ऐसा नहीं मिल सकता जो उन सब आपत्तियों को जिनकी कि इसके प्रकाशित होने में आशंका है अपने ऊपर लेकर इसे प्रकाशित कर दे ? ऐसा करने से निःसन्देह आर्यजाति और हिन्दी भाषा का बड़ा ही उपकार हो।

अपनी तबीयत का हाल लिखिए अब कैसी है ? परमात्मा करै, यह पत्र आपको सर्वथा स्वस्थचित्त पावै।

दयनीय—

पद्मसिंह

यदि कभी इलाहाबाद जाने का इत्तफाक हो और यहाँ से रीडर्स मिल सकें तो ध्यान रखिए।

पद्मसिंह

(१७)

ओम्

नायकनगला
पो० चान्दपुर
२०—१—०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

श्रीमान् का ११—१ का कृपापत्र मिला। आनन्दित किया।

बहुत अच्छा। 'जवाबेजाहलां बाशद खमोशी' पर ही अमल कीजिए। पर 'भाषा और व्याकरण' के सिलसिले को अभी जारी रखिए। समालोचना विषयक कविताओं को अवश्य प्रकाशित कीजिए। वही इनका समुचित उत्तर होगा।

'वन्देमातरम्' वाले श्लोकों का निर्णय मुझे देखने को नहीं मिला। वह आपने किसके पास भेजा था ? ठाकुर साहब के उन पुस्तकों के अनुवाद का क्या हुआ ? क्या 'शिक्षणमीमांसा' शुरू कर दिया ?

मैं अब जालन्धर नहीं जाऊंगा। कारण यह हुआ कि मैं एक आवश्यक कार्य के लिए १०-१५ दिन के वास्ते आया था। उसके पीछे माता जी बीमार हो गईं तथा

अन्य कई ऐसे ही विघ्न आ पड़े कि मैं न जा सका। यन्त्रालय के कुछ लोग मुझसे गुप्त रूप से नाराज थे उन्होंने यह मौका पाकर मुझे जवाब दे दिया। अस्तु, मुझे नौकरी की कुछ ऐसी परवा भी नहीं।

हां, विद्यालय की पुस्तकों के बारे में क्या रहा ?

भवदीय—
पद्मसिंह

(१८)

ओम्

नायकनगला
पो० चान्दपुर
जिला-बिजनौर
३०—१—०६

श्रीमत्सु प्रणामाः

१६—१ का कृपाकार्ड और २२—१ का पत्र मिले। आनन्दित किया।

सरस्वती भी आज मिली। 'सरगौ नरक ठेकाना नाहिं' में कल्लू के रूप में शायद गुप्ता साहब अपना कच्चाचिट्ठा सुना रहे हैं। क्योंकि 'झंझराखेरा बनियई' 'दीनदयाल' आदि शब्द उनकी तरफ ही इशारा कर रहे हैं।

मसखरेपन का जवाब तो उन्हें अच्छा मिल गया। 'सौ सुनार की और एक लुहार की' इसी को कहते हैं। यह कविता भी शायद खुद बदौलत की ही है। 'ऊषा स्वप्न' भी अच्छा जमाने में फैजी के बयान में जो यह लिखा है कि—मलकुश्शोरा कालिदास का ड्रामा 'नलदमन' फैजी के सिवा कौन तर्जुमा कर सकता था—इस पर आपको नोट देना चाहिए था, महाकवि कालिदास का नलदमन नामक कोई ड्रामा ही नहीं, फिर तर्जुमा किसका किया।

रामचन्द्र के वनगमन मार्ग का जो नकशा दिया गया है उसमें भी पंचनह का नाम पांचाल ही लिखा है। पर यह ठीक मालूम नहीं देता। जब पंजाब से पांचालपण्डिता निकली थी तो उसके नाम पर सनातन गजट आदि अखबारों ने बड़ा आक्षेप किया था, और भी कई संस्कृत के पण्डितों से सुना है कि पांचाल फर्रुखाबाद और कन्नौज के पास था। उसकी राजधानी कम्पिल्ल के खंडहर अब तक फर्रुखाबाद के समीप हैं। उसे शायद अब कपिता कहते हैं। आप इस विषय पर तहकीकात करके कुछ अवश्य लिखिए।

अद्भुत इन्द्रजाल को पढ़कर हम चकित हो गये। यह हमने पढ़ा तो पहले था। शायद किसी उर्दू अखबार में था। पर विश्वास न आता था। अब सरस्वती में पढ़कर विश्वास करने को जी चाहने लगा। क्या ऐसी घटना सम्भव हो सकती है?

बहुत अच्छा, अभी कुछ दिन चुप रहिए। विद्यालय को न छेड़िए।

आपकी रीडर्स के दुरुपयोग का मौका मैं किसी को नहीं दूँगा। मैंने उन्हें अपने एक मित्र की मार्फत बिजनौर के पते से मंगाया था। वे उन्हें देखना चाहते थे। मालम नहीं हआ अभी आई या नहीं।

कृपापात्र—
पद्मसिंह

(१९)

ओम्

नायकनगला
पो० चान्दपुर
जिला-बिजनौर
११-४-०६

श्रीयुत् मान्यवर महोदयेषु सादरं प्रणामाः

एक मास के करीब हुआ श्रीमान् का कृपापत्र मुझे मिला था। उत्तर में जो अति बिलम्ब हुआ उसके कई कारण हुए। एक तो यह है कि मैं गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव पर चला गया था। वहां कुछ दिन लगे (वहां पं० सत्यव्रतसामश्रमी के दर्शन करके चित्त बड़ा सन्तुष्ट हुआ, वास्तव में वह वेदविद्या के अपूर्व और अद्वितीय पण्डित हैं। बड़े साधुस्वभाव और मिलनसार हैं। फिर कुछ तबीयत गड़बड़ रही। इसके अतिरिक्त मार्च की सरस्वती ने बहुत इन्तजार दिलाया। सोचा था कि उसे पढ़कर पत्र लिखेंगे, पर वह अबतक न मिली। डाक वालों की करतूत से ऐसा हुआ, कल थोड़ी देर के लिए एक मित्र के पास वह पढ़ने को मिली। थोड़ा थोड़ा सब जगह से पढ़ा। 'जम्बुकी न्याय' पढ़कर चित्त खूब प्रसन्न हुआ। 'दिवाभी तभी नामाकूल'— 'खूब हुआ जी खूब हुआ, कह बुड्ढे का कदम छुआ' ने खूब हँसाया। पर इस कविता के पात्रों को स्पष्ट रूप से हमने समझा नहीं। ये जम्बुकराज और न्यायप्रार्थी कौन कौन हैं।

गत नवंबर में मैं जब लाहौर गया था तो 'आबेहयात' के मुसन्निफ मुहम्मद हुसैन आजाद से मैंने मिलने की कोशिश की। परन्तु मालूम हुआ कि बेचारे एक

मुद्दत से उन्माद रोग में ग्रस्त हैं। यह रोग शायद उन्हें अपनी विदुषी कन्या के बेवक्त मौत के सदमे से हुआ था। "नैरंगेखयाल" भी उनकी अपने ढंग की अपूर्व पुस्तक है। मैं उसे 'दीवानेहाली—मुसद्दसे हाली' आदि किताबों के साथ आपके पास अनकरीब भेजनेवाला हूँ।

हाँ, 'फिलसफेतालीम' के साथ आपने लखनऊ के विषय की कोई किताब मंगाई थी जो उस समय नहीं मिल सकी थी। क्या वह अब आ गई? उसका विषय और नाम क्या है? क्या 'स्वाधीनता' और विक्रमांकचर्चा साथ ही साथ नागपुर से निकलने लगी है? नागपुरवाली सभा का पता क्या है?

कुछ दिन हुए 'विद्योदय' में 'परम हंसोपाख्यान' नाम से पद्य स्वरूप, मि० मारनल के 'दि हरमिट' का अनुवाद निकला था जो बहुत ही मनोहर और शिक्षाप्रद था। उसकी कथा का सारांश 'शिक्षागुरु' में ला० श्रीनिवासदास ने भी किया है। क्या 'एकान्तवासी योगी' उसी निबन्ध का अनुवाद है? या यह किसी दूसरे हरमिट का?

नैषध के उस 'स्त्रियामयावाग्मिषु', श्लोक में 'प्रबन्धता' और 'प्रतिबन्धृता' ही पाठ चाहिए। नारायण ने लिखा है—"उभयत्रापि तृजन्ताच्छन्वेस्तलम्।"

मैं एक दिन नैषध देख रहा था, उसमें जब 'प्रियंनमृत्युं नलभेत्वदीप्सितं तदेव नस्यान्ममयत्वमिच्छसि। वियोगमेवेच्छमनः प्रियेण मे तव प्रसादान्नभवत्वसौ मम।।" इस श्लोक पर पहुंचा तो मुझे उर्दू के मशहूर कवि 'मोमिन' का एक शेर याद आ गया जो बिलकुल इससे मिलता जुलता है—

'मांगा करेंगे अब से दुआ हिज्रेयार की,
आखिर तो दुश्मनी है दुआ को असर के साथ'

यह भारतमित्र में चेंचें करनेवाले जयपुरी चौबे कौन हैं? इन रक्तबिन्दु के सहोदरों का कभी अन्त भी होगा? कमबख्त कान खा गये।

प्रतापनारायण की जीवनी से हमने तो यह समझा कि वह एक अच्छे विदूषक थे।

अब हम एक हफ्ते के लिए सिकन्दराबाद-बुलन्दशहर की ओर जाते हैं। वहां से लौटकर फिर आपसे भेंट करेंगे।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह

(२०)

ओम्

नायकनगला
२१–४–०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

श्रीमान् का १४–४ का लिखा कृपापत्र सिकन्दराबाद से वापस आकर हमने पढ़ा। आनन्द हुआ।

'जाफर जटली' और 'चरकीन' आमतौर से बाजारों में नहीं बिकते। अश्लीलता के कारण शायद उनकी अशाअत बन्द है। आप किसी लखनऊ निवासी अपने मित्र को लिखिए, तलाश करने से लखनऊ में किसी के पास से अवश्य मिल जायंगे। मैंने भी आज अपने एक मित्र को लिख दिया है जो देहली के समीप रहते हैं, और देहली प्रायः आते जाते रहते हैं, यदि वहां कहीं पता लगा तो वह भेज देंगे। मेरठ और मुजफ्फरनगर के प्रान्त की देहाती भाषा का 'दलभीर" नामक एक दीवान तो मेरे पास है, कहिए भेज दूं ?

नागपुर की 'ग्रन्थमाला' के न निकलने का शोक है। परमात्मा करें, प्लेग पिशाच वहां से हट जाय। अंग्रेजी के एक 'हर्मिट' का अनुवाद कुछ दिन हुए 'विद्योदय' में श्लोकवद्ध निकला था। उसकी कथा बड़ी ही रोचक और उपदेशप्रद थी। शायद उसके कर्त्ता का नाम "पारनेल" है, उसकी कथा सरस्वती में देने योग्य है। उसे (अंग्रेजी में) कहीं से मंगाकर अवश्य पढ़िए और क्रमशः उसे सरस्वती में निकालिए, अच्छी कथा है।

'अनस्थिता' का झगड़ा अब बहुत बढ़ गया, समाप्त भी कीजिए। इन लोगों का इसके सिवा कुछ और अभिप्राय मालूम नहीं होता कि इस प्रकार आपकी चित्तवृत्ति को हटाकर सरस्वती के प्रकाशन में बाधा डाली जाय। महादुराग्रही इकट्ठे हो गये हैं। ये माननेवाले थोड़े ही हैं। सचमुच ये 'दिवाभीत' के भाई सरस्वती के प्रकाश को बरदाश्त नहीं कर सकते। इससे शोर मचाते हैं। बकने दीजिए 'या यस्य प्रकृतिः सतां वितनुताम्" किसी कवि ने इसी प्रकार के सौजन्य शून्य और अहम्मन्य लोगों के दुराग्रह से खिन्न होकर क्या अच्छा कहा है—

"प्रकाममभ्यस्यतु नाम विद्यां सौजन्यमभ्यासवशोदलभ्यम्।
कर्णौ सपल्यः प्रविशालयेयु् विशालयेदक्षियुगं न कापि।"

एक शिकायत है। आप जिस रोशनाई से लिखते हैं, वह इतनी कच्ची है कि उंगली का स्पर्श होते ही उड़ जाती है, बड़ी सावधानी से पत्र पढ़ना पड़ता

है। न मालूम कम्पोजीटर लोग इस रोशनाई से लिखे लेख का कम्पोज कैसे करते होंगे।

"शबाबे लखनऊ' मिलता कहाँ से है?

ईश्वर के अनुग्रह से अब नीरोग हूँ।

कृपाभिलाषी
पद्मसिंह

(२१)

ओम्

नायकनगला
३–५–०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

श्रीमान् का २७–४ का कृपापत्र मिला। अनुगृहीत किया।

कलकत्ते वाले मिश्र जी की सम्मति पर निवेदन है कि—चण्ड, कण्टक, आदि शब्दों का उच्चारण माइंड, सेंट आदि शब्दों के उच्चारण से जरूर भिन्न होना चाहिए, क्योंकि चण्ड की ध्वनि में एन 'नकार' का शुद्ध उच्चारण नहीं होता किन्तु 'न' और 'ण' दोनों के बीचो बीच का सा, और माइंड में विशुद्ध 'नकार' की ध्वनि निकलती है, क्या यथार्थ में ही 'आकृष्ट' तथा 'शिष्ट' के उच्चारण से 'मस्ट' या 'फ़र्स्ट' का उच्चारण मिलता है? यहां अंग्रेजी का 'एस' संस्कृत के 'षकार' का सा उच्चरित होता है? यदि यही बात है तो हम फ़र्स्ट को फारसी हरूफ में फर्स्ट लिख सकते हैं? परन्तु कोई ऐसा नहीं करता, जिन शब्दों में 'एस' का उच्चारण ठीक दन्त्यसकार का सा नहीं है वहां तालव्य 'श' या मूर्धन्य 'ष' का प्रयोग कर सकते हैं, परन्तु जहां 'एस' का उच्चारण बिलकुल ही 'स' की तरह का है वहां भी मूर्धन्य 'ष' के प्रयोग के लिए 'झूठमूठ' आग्रह करना हमारी राय में ठीक नहीं। जहां वस्तुतः स्वरहीन षकार और णकार हो वहां भले ही टवर्ग के साथ मिश्रित होकर उच्चारित हो, पर जहां नकार और अनुस्वार है वहां णकार बनाने का झूठ-मूठ आग्रह क्यों किया जाय? और फिर 'गवर्नमेन्ट' आदि शब्दों में रकार के प्रयोग में नकार को णकार होकर 'गवर्णमेण्ट' भी होना चाहिए: पर ऐसा उच्चारण कोई नहीं करता। यदि संस्कृत वर्णमाला में उस आकृति के अक्षर नहीं हैं तो अब बन सकते हैं, बन भी गये हैं। जब फारसी शब्दों के अनुकरण में 'ज' लिखा जाने

लगा तो यह कौन बड़ी बात है ? मिश्र जी को चाहिए कि २७-४ के भारत मित्र में, तीसरे पृष्ठ के ७वें कालम में 'कलकत्ता' के नीचे 'असिस्टण्ट' शब्द पढ़ें, आशा है, 'नृप' की तरह वहां स ऋ का धोका न होगा। उसी पृष्ठ के ८वें कालम में विशुद्ध चीनी' के नोटिस में 'पोस्ट यशोहर' पढ़ देखें, इसी प्रकार उसमें और भी कई शब्द मिलेंगे, जिनमें 'स' और 'ट' मिले हुए हैं। आगे जैसी मिश्र जी की राय हो। मिश्रित अक्षरों के विषय में उन्हीं की सम्मति को गौरव देना युक्त भी है।

भाषा की अनस्थिरता के विषय में 'आबेहयात' से जो कुछ उद्धृत किया है वह बहुत उपयुक्त है। अबकी सरस्वती में कई लेख अच्छे हैं।

बहुत खुशी की बात है कि 'ग्रन्थमाला' निकली। 'विक्रमांकचर्चा' को भी निकलवाइए। रीडर्स और शिक्षा सरोज के निकालने का भी इंडियन प्रेस वालों को ध्यान दिलाइए। सरकारी स्कूलों में न सही सर्वसाधारण पाठशालाओं में उनका आदर अवश्य होगा। काम की चीजें हैं।

'ऋतुसंहार' का अनुवाद आपने सम्पूर्ण का किया था या कुछ अंश का। 'गंगा-लहरी' का अनुवाद अब कहीं मिलता है कि नहीं ? किस प्रेस में छपा था।

पारनेल का 'हर्मिट' गोल्डस्मिथ से बहुत ही अच्छा और विस्तृत है। अवकाश मिले तो उसे जरूर देखिए।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह

(२२)

ओम्

नायकनगला
३०–५–०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

आपका ६–५ का कृपापत्र मिले मुद्दत हुई। 'सरस्वती' की प्रतीक्षा करते २ उत्तर में विलम्ब हुआ। अबकी 'सरस्वती' में कई लेख बहुत अच्छे हैं। 'कृत्रिम हीरा' बनाने की विधि बड़ी सरल भाषा में समझाई गई है। वैज्ञानिक विषय ऐसी ही सर्वबोधगम्य भाषा में लिखे जाने चाहिए। प्रोषितपतिका-चांदनी की कहानी भी दर्दभरी है, क्या सचमुच किसी प्रोषितपतिका ने स्वयं ही यह अपनी दशा का वर्णन किया है ?

'हमारा अधःपतन' वाली कविता बड़ी ही मर्मस्पृक है। हमने इसे कई बार पढ़ा, हाल में हमें एक बरात में जाने का इत्तफाक हुआ, 'सरस्वती' साथ थी, वहां उसे हमने मित्र मण्डली में पढ़ा। कविता इतनी पसंद आई कि उपस्थित श्रोताओं में से दो सज्जनों ने 'सरस्वती' का ग्राहक बनना स्वीकार किया। भला यह छंद कौन है? हमने तो इसे 'नसीम' की 'गुलबकावली' के बहर पर पढ़ा। हिंदी कविता में इस छंद का यह नया प्रयोग है, पर है अच्छा। क्या यह नाथू राम शंकर 'वही हैं जिनके 'शंकर सरोज' की समालोचना कुछ दिन हुए 'सरस्वती' में छपी थी? आप कवि जी के पास हमारा यह तुच्छ साधुवाद पहुंचा दीजिए, और उनसे कहिए कि वह अवश्य 'सरस्वती' के लिये इस प्रकार की कविता लिखा करें, गिरी हुई आर्य जाति को विस्मृतप्राय पूर्व गौरव याद दिलाकर उभारने की चेष्टा करना बड़े पुण्य का काम है। 'हिंदी ग्रंथमाला' का इन्तजार है, अभी आई नहीं, लिखा तो है, क्या "शिक्षा' का अनुवाद प्रारंभ कर दिया? अनुवाद यदि उस ढंग पर किया जाता, जैसा उर्दू वाले ने किया है, तो बहुत अच्छा होता। क्या शिक्षा के संस्कृत अनुवाद का कहीं से कुछ पता चला?

कृपाभिलाषी
पद्मसिंह

पहले एक पत्र में मैंने 'नैषध' के 'प्रियंनमृत्युं नले.........'श्लोक के साथ 'मोमिन' का एक 'शेर—"मांगा करेंगे अबसे दुआ हिज्रे पार की......" लिखा था, आज बिलकुल वैसा ही एक 'शेर' गालिब का नजर पड़ा—

"खूब था पहले से होते जो हम अपने बदख्वाह के भला चाहते हैं और बुरा होता है।"

अब यह एकार्थद्योतिका पद्यत्रयी हो गई। यदि पसन्द हो तो 'सरस्वती' में निकाल दीजिए।

पद्मसिंह

(२३)

नायकनगला
१३—६—०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

कृपापत्र कई दिन हुए मिला।

आज अपने एक सुहृद् के भेजे हुए दो श्लोक आपकी सेवा में भेजता हूं,

आशा है इन्हें सरस्वती में आश्रय मिलेगा, क्योंकि यह उनका पहला ही प्रणयानुरोध है।

एक श्लोक उसी प्रकार का और मिला है, जिसका भाव 'मोमिन' के एक मशहूर शेर से मिलता है, देखिए—

"दारिद्र्य ! शोचामिभवन्तमेवमस्मच्छरीरे सुहृदित्युषित्वा।
विपन्नदेहे मयि मन्दभाग्ये, ममेति चिन्ता क्वामिष्यसि त्वम्॥"

(मृच्छकटिक—१म, अंक)
(चारुदत्तोक्ति:)

"तू कहाँ जायगी कुछ अपना ठिकाना कर ले, हम तो कल, ख्वाबे अदम में, शबे हिजिरां होंगे"

नोट के लिए अभी कुछ उपयुक्त सूझा नहीं कि क्या लिखूँ, और किस प्रकार का तारतम्य दिखलाया जाय, यदि कोई बात याद आ गई तो लिख दूँगा।

सरस्वती के लुटेरों को क्या किया जाय, समय का प्रभाव है, 'अचौरहार्य' विद्याधन को भी चौर्यमय उपस्थित हो गया! अच्छा लूटने दीजिए। देव-दैत्यों के लूटने पर भी "अद्यापि रत्नाकर एव सिन्धु:"

'हिन्दी ग्रन्थमाला' हमारे पास भी आ गई, अच्छी है। हमें याद पड़ता है एक बार आपने सरस्वती में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का कुछ हाल लिखा था। उसकी भाषा बड़ी उत्तेजक थी। वह फिर भी ट्रेक्ट की सूरत में छपना चाहिए।

अब की सरस्वती में 'परलोक से प्राप्त पत्रों' के पढ़ने की उत्कण्ठा है।

शिक्षा आधी हो गई? बड़ी खुशी की बात है। परमात्मा करे, उसके शीघ्र ही पुस्तकाकार में दर्शन हों।

पद्मसिंह

(२४)

ओम्

२४-६-०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः।

श्रीमान् का १७-६ का कृपाकार्ड मिला, आनन्दित किया। मैं एक हफ्ते से मुरादाबाद के जिले में घम रहा हूं, २६-६ तक घर पहुचूँगा, जून की 'सरस्वती' के तब ही दर्शन होंगे।

'शूद्रक' (मृच्छकटिक कर्त्ता) और 'मोमिन' की उन उक्तियों में वर्णन का एक प्रकार का अपूर्व सादृश्य पाया जाता है। भेद केवल इतना है कि शूद्रक ने (चारु-दत्त द्वारा) दारिद्रय को सम्बोधन करके कहा है, और मोमिन ने 'शबेहिजरां' (वियोगरात्रि) को मुखातिब किया है।

आत्मप्रशंसा निषेध में किन्हीं दो संस्कृत कवियों का और एक फारसी शाइर का मीलान देखिए, मानो एक ने दूसरे का अनुवाद किया है—

"न सौख्यसौभाग्य करा गुणा नृणां, स्वयंगृहीताः सुदृशां स्तना इव।
परैर्गृहीता द्वितयं वितन्वते न तेन गृह्णन्ति निजंगुणं बुधाः।"

"निजगुणगरिमा सुखाकरः स्यात् स्वयमनुवर्णयतां सतां न तावत्।
निजकरकमलेन कामिनीनां कुचकलशाकलनेन को विनोदः॥"

"सतायश् खुदब खुदकरदन् न जेबद मर्दे दानारा,
चुज न पिस्ताने खुदमालद हजूजे नफ्स कै याबद॥"

वह नोट आपने लिख लिया, बड़ी कृपा की। इन उक्तियों की भी अपने नोट के साथ किसी अंक में प्रकाशित कर दीजिए। या इन सबको एक साथ किसी संख्या में निकाल दीजिए।

बहुत अच्छा जाइए। आमों की फसल का आनन्द लीजिए पर कृपापत्र भेजते रहिए।

कृपाभिलाषी
पद्मसिंह

(२५)

ओम्

नायकनगला
७-८-०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणतयः।

२६-७ के दो कृपाकार्ड मिले, आनन्दित किया। मेरी १ वर्ष की लड़की अर्से से बीमार चली जाती है, उसके औषधोपचार से अवकाश नहीं मिलता, इसीलिए पत्रोत्तर में बिलम्ब हुआ।

जून की 'सरस्वती' आपकी भेजी मिली, धन्यवाद। कई बार की लिखा पढ़ी में एक दूसरी कापी प्रेस से भी पहुंच गई है, इसलिए एक कापी आपको लौटा दूँगा।

"आर्य मुसाफिर" की जून की संख्या जिसमें "उर्दू और आजाद" है तथा जुलाई की संख्या जिसमें "हिंदू शब्द" पर आक्षेप है, भेजता हूं, पढ़िए, यदि जरूरत समझिए तो अपने पास रहने दीजिए।

"हिन्दू शब्द' को हमारे पूर्वजों ने कभी सादर ग्रहण नहीं किया, इसका प्रमाण-प्राचीन ग्रंथों में प्रयोगाभाव है, चाहे जिन्द में इसके अर्थ कैसे ही अच्छे हों, पर इसका प्रयोग मुसलमानों ने हमारे लिए कुत्सितार्थ समझकर ही किया है, उनके ग्रंथों से इस बात के अनेक प्रमाण स्वर्गवासी पं० लेखराम आर्य पथिक ने अपनी "हिन्दू आर्य और नमस्ते की तहकीकात" नामक किताब में लिखें हैं। इसके अतिरिक्त प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पं० सत्यव्रत सामश्रमी जी ने भी "निरुक्तालोचन" में इस बात को स्वीकार किया है, वे लिखते हैं—

"वस्तुतो यथेह भारते महम्मदीयराज्यस्थापनात् प्रागप्यपरदेशे हिन्दुरिति व्यवहार आसीदेवाधार्मिकेषु, तत उत्तरं सैव समाख्या पदाक्रोशकृतोपचरितै वास्मासु च, ततो वयमपि "हीनंच दूषयत्यस्मात् हिन्दुः" इति (मेरुतन्त्रे) व्युत्पादन मभिमत्यात्मनो हिन्दुनामकथनेपि गौरवमेव मन्यामहे"......

फिर क्या यह वैदेशिक शब्द वैदिक 'आर्य' शब्द से भी अच्छा है? कितने अफसोस की बात है, अपने पूर्वजों की अक्षय्य सम्पति में से एक नाममात्र ही शेष रह गया था, सो अब यह भी चला? क्या कोई जिन्दा कौम अपने नाम का मिट जाना इस तरह पसन्द करेगी, दूसरी कौमें अपने बड़ों की जरा जरा सी बात की रक्षा प्राणपण से करती हैं, और एक हम हैं जो अपना नाम तक नहीं बचा सकते! "एक वो हैं जिन्हें तस्वीर बना आती है, एक हम हैं जो ली अपनी सूरत भी बिगाड़"।

ये "परलोक से प्राप्त पत्र" कैसे हैं? क्या वह आदमी जो अपनी जीवितावस्था में दुराचारी रहा हो, योगादि का जिसे कुछ भी सम्पर्क न हो वह मरते ही इतना शुद्ध हो गया कि परलोक से पत्र भेजने लगा? वैदिक धर्मावलम्बी बहुत से महात्मा योगी भारतवर्ष में मरते हैं, और मरे हैं। उनमें से किसी को यह शक्ति प्राप्त न हुई। ऐसी निरर्गल बातों से पाठक भ्रम में पड़ सकते हैं, कहीं इस प्रकार की अधिक चर्चा से लोक 'सरस्वती' को "थियोसोफिस्ट पत्रिका' न समझने लगे? कृपा कीजिए ऐसे आत्म-ज्ञान से बाज आये।

स्तूपों का वर्णन बहुत अच्छा है, आपको तो उन्हें प्रत्यक्ष देखकर अश्रुपात हुआ था और हमें उनका हाल पढ़कर। जमाने के एक अंक में "दो कदी मशहर" एक लेख निकला है, जिसमें "तक्षशिला" और "पुष्कलावती" का वर्णन है। इस विषय पर 'सरस्वती' में भी एक लेख निकलना चाहिए; हैमलेट वाला लेख भी

बहुत सुन्दर है। शेक्सपीयर के अन्य प्रसिद्ध नाटकों पर ऐसे ही लेख उनसे लिखवाइए, अच्छा है। हिंदी वाले भी शेक्सपीयर को कुछ २ जान जायं।

पं० गिरिधर शर्मा का ग्रीष्म वर्णन बहुत अच्छा है, और 'पवनदूत' का क्या कहना? बड़ी उत्कृष्ट कविता है, संस्कृत में भी तो शायद एक "पवनदूत" है? "वर्णमाला स्तोत्र" का "ब्रह्मेति विष्णुरिति रुद्र इति वृथाते" पद पढ़ा। जहां तक हमें मालूम है 'वृ' संयुक्त अक्षर नहीं, हो सकता है, न 'ऋ' व्यंजन 'वृथा' के स्थान में 'व्रथा" भी नहीं लिखा जाता। शायद महाराष्ट्रों में इसका रिवाज हो! "नवीन मश्रावितदा (वा) ननादिदम्" ।

"समय मातृका" तो हमारे पास है, "कुट्टिनीमत" अबतक नहीं देखा, सुना है, अच्छा है, कभी देखेंगे।

श्री पण्डित भीमसेन जी ने 'गुमानी' कवि-कृत ये श्लोक भेजे हैं, जिनके अन्तिम चरण हिन्दी भाषा में हैं, उर्दू कविता में यह रिवाज है, उसके प्रायः प्रसिद्ध कवियों ने फारसी गजलों पर उर्दू मिसरे लगाये हैं, और उर्दू गजलों में प्राचीन फारसी गजलों के मिसरे खपाये हैं, पर अब मालूम हुआ हिन्दी कवियों ने भी ऐसा किया है, यदि पसन्द हों 'सरस्वती' में देखिए।

भावत्क
पद्मसिंह

(२६)

ओम्

जालन्धर शहर
३-९-०६

श्रीमत्सु सांजलिबन्धं प्रणतयःसन्तु

२७-८ का कृपापत्र मिला। कृतार्थ किया। अच्छी बात है, जब अनुकूलता देखिए तब ही तरुणोपदेश को छपवाइए। जल्दी की जरूरत नहीं। पर उसे छपा-इए अवश्य। हां, 'विक्रमांकदेवचरित चर्चा' कब छपेगी? उसके छपाने में क्यों विलम्ब हो रहा है? और 'कुमारसम्भवसार' की भूमिका में प्रतिज्ञात, कालिदास विषयक निबन्ध कब लिखा जायगा?

विक्रमांकदेवचरित मैंने पढ़ लिया अपूर्व काव्य है। उसके कई स्थल तो मुझे इतने पसन्द आए कि मैंने उन्हें कई बार पढ़ा, तद्गत कुछ सुभाषितों का संग्रह करके

दो तीन दिन में मैं उसे आपकी सेवा में भेज दूंगा। इस पुस्तक-वितरण कृपा के लिए मैं श्रीमान् को कोटिशः धन्यवाद देता हूं।

'शिक्षा' के संस्कृत अनुवाद का कुछ पता चला कि हुआ है या नहीं, और कहां मिलता है ?

बराबर निवासी मराठी जाननेवाले एक महाशय यहां रहते हैं। वे कहते हैं कि पूना में 'बलवन्त गणेश दाभोड़कर' एक कम्पनी है। उसके यहां स्पेन्सर के प्रायः सब पुस्तकों का अनुवाद मराठी में छपा है। वहां से मराठी की शिक्षा भी मंगा कर देखिए और फिर एक सर्वोत्तम अनुवाद हिन्दी में प्रकाशित कीजिए।

ला० नारायणदास जी को तो आपकी पुस्तकों का पारसल मुद्दत हुई मिल गया। मैंने अपने एक और (हलदौर-जि०-बिजनौर निवासी) मित्र को आपकी पुस्तकें मंगाकर देखने की प्रेरणा की थी। उन्होंने वादा भी किया था कि अवश्य मंगाऊंगा। कृपया लिखिए कि वहां से कोई मांग गत मास में आपके पास पहुंची या नहीं ? यदि न पहुंची हो तो लिखिए मैं उन्हें फिर लिखूंगा। वे एक रसिक और धनाढ्य पुरुष हैं। अपनी वे सब पुस्तकें जो ला० नारायणदास जी के नाम भेजी हैं, 'ठाकुर शिवरत्नसिंह वर्मा' कोट कृष्णचन्द्र, जालन्धरशहर, के नाम वी० पी० द्वारा भेज दीजिए। उक्त महाशय 'स्वाधीनता' पांच कापी '(छपने पर) खरीदना चाहते हैं। कृपया उनका नाम उसके ग्राहकों की श्रेणी में लिखवा दीजिए।

'जब और तब' के विषय में आपका कथन ठीक है। परन्तु इस प्रकार के नियमों का निर्धारण करने के लिए हिन्दी में एक व्यापक व्याकरण की बड़ी ही जरूरत है। निःसन्देह यह काम बहुत से आदमियों के करने का है। परन्तु हिन्दी के लेखकों से यह आशा रखना कि वे मिलकर कुछ काम करेंगे दुराशा मात्र है। इसलिए हिन्दी भाषा के साहित्य को कतिपय उपयोगी विषयों से सुभूषित करके इसका व्याकरण आप ही बनाइए। हिन्दी भाषा के ये 'मत्सरी' लेखक न कुछ करेंगे न करने देंगे। वेंकटेश्वर और भारतमित्र जहां जरा जरा सी रद्दी, निकम्मी और हिन्दी साहित्य को कलंकित करनेवाली किताबों की तारीफ में धरती आसमान के कुलाबे मिला देते हैं, वहां हमने कभी भूलकर भी सरस्वती सी उपयोगी पत्रिका के विषय में उनके फूटे मुँह और टूटी कलम से एक अक्षर निकलते भी न देखा ? 'महिला मृदुवाणी' की समालोचना में सरस्वती की ही बातों का उल्लेख वेंकटेश्वर ने किया है। परन्तु सरस्वती का नाम नहीं दिया। शायद ऐसा करने से उसे पाप लग जाता ? "सकल प्रबन्धहर्त्रे साहसकर्त्रे नमस्तुभ्यम्"

काशी ना० सभा तो थी ही परन्तु आरावाली उसकी भी गुरु निकली ! उसने सरस्वती को वेद-विरोधी ही बतला दिया।

आपके पत्र के विषय में कुछ पता नहीं चला कि क्या हुआ। २९–८ को कमिटी का अधिवेशन था, शायद उस दिन पत्र पेश हुआ हो उस दिन वे मेरे दोनों परिचित सभ्य शरीक नहीं हुए थे। इस कारण कुछ मालूम न हो सका?

कृपापात्र
पद्मसिंह

(२७)

ओम्

नायकनगला
२५–९–०६

श्रीमत्सु प्रणामाः

बहुत दिनों से आपका कुशल पत्र नहीं मिला, चिन्ता है, हम बीमारी और तीमारदारी में घिरे रहे इसलिए पत्र न भेज सके। इस दिगन्धव्यापी फसली बुखार की लपेट में कहीं आप भी तो नहीं आ गये। अगस्त की 'सरस्वती' में यह सय्यद साहब कौन हैं? अच्छी कविता की है। गिरिधर जी की वर्षा खूब है। समालोचक लक्षण द्रव्यमाहात्म्य और विकास सिद्धान्त अच्छे हैं। रीवांनरेश की जीवनी में आपका नोट अच्छे मौके पर है। मालूम है अगस्त की 'हिंदी ग्रन्थमाला' अबतक क्यों नहीं निकली? वहां पत्र भेजा था उत्तर नहीं मिला।

कुशल पत्र दीजिए।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह

(२८)

ओम्

नायकनगला
६–१०–०६

श्रीमत्सु सबहुमानं प्रणामाः

२९–९ का कृपाकार्ड मिला, आनन्दित किया। सितम्बर की 'सरस्वती' खूब है। यह वंगमहिला कौन है? इनकी अनुवादित आख्यायिकाएं प्रायः अच्छी होती हैं, पर कहीं कहीं एकदेशी मुहावरे रह जाते हैं, जैसे **चिरौरी, अकचका कर** इत्यादि, इन्हें ठीक कर दिया कीजिए।

'कान्यकुब्ज अबला विलाप' हमने पहचान लिया। यह आपकी प्रतिभा का विलास है? बतलावें यह कैसे जाना? इस कविता में १९वें, पद्य के अन्तिम दो चरण 'श्रृंगारसुधा' के २६ पद्य के इस अंश के सगे-जोड़े भाई हैं—"जिसने पुरुष जाति को जग में बैल समान बनाया है। सब सहने में कुशल उसी ने तरुणी गण उपजाया है"—है न ठीक? एक जगह २३ प० में आप "चुपकी दाद" लाये हैं, मालूम होता है 'हाली' की **चुपकी दाद** आपकी नजर से गुजर चुकी है? अस्तु, कविता अच्छी है।

कई वर्ष हुए बरेली के 'आर्य अनाथालय' में भेड़ियों का पाला हुआ एक लड़का हमने भी देखा था, उस समय उसकी अवस्था कोई १५-१६ वर्ष की होगी। पर उसकी वहशत नहीं छूटी थी, आदमियों से घबराता था, आंखें दरन्दों की तरह भयानक थीं, उसका नाम था शेरसिंह, अब वह शायद मर गया है।

शंकर जी की 'पावस पंचाशिका' बड़ी उत्कृष्ट है, 'सरस्वती' में इनकी कविता देखकर मुझे बड़ा हर्ष होता है।" चकास्ति योग्येन हि योग्यसंगमः गवा—"रत्नं समागच्छतु कांचनेन" कहावत चरितार्थ हुई है। "पंचाशिका' का एक एक पद्य अपूर्व अपूर्व भाव लिये हुए है। किसी २ पद्य में तो कमाल कर दिया है, इसके ३६वें पद्य ने तो मुझे मुग्ध ही कर दिया। 'अभिज्ञान शाकुन्तल' में शकुन्तला के प्रति दुष्यन्त की उक्ति है :—

स्त्रीणामशिक्षितपटुत्वममानुषीणां संदृश्यते किमुत याः परिबोधवत्यः, प्रागन्तरिक्ष-गमनात् स्वमपत्यजातं काकैः[1] (पाठ याद नहीं है) परभृतः परिपोषयन्ति।"।

इसका पूर्वार्द्ध लिखकर एक बार 'विद्योदय' में 'अनामिका बाई' (शायद, रमाबाई) ने कालिदास की सहृदयता पर पाण्डित्य पूर्ण आक्षेप किया था, पर शंकर जी सचमुच इस आक्षेप योग्य पहलू को बड़ी ही चतुरता से बचा गये। और एक अपूर्व-बिलकुल निराली बात बतला गये। धन्यकवे! वन्दनीयोऽसि!!

यदि हमें पहले से मालूम होता तो कालिदास के इस श्लोक को नोट में उद्धृत करने की आपसे प्रार्थना करते, जिससे प्रकट हो जाता कि एक ही पदार्थ या घटना से दो प्रतिभाशाली कवि कैसे भिन्न और अपूर्व भाव निकालते हैं, अब भी कभी 'मनोरंजन श्लोक में इसे दीजिए।

लाहौर से उर्दू का एक मासिक पत्र 'मखजन' नामक निकलता है, जो 'सरस्वती'

१. अन्यैर्द्विजैः—संपादक

के जन्म के कुछ दिनों बाद इसी के अनुकरण में निकाला गया है, पत्र अच्छा है। वह कभी कभी अपने प्रसिद्ध २ नामे निगारों की तसवीरें दिया करता है, यह क्रम है भी अच्छा। आप भी क्यों न 'सरस्वती' में अपने लेखकों के चित्र दिया कीजिए? लेखकों का उत्साह भी बढ़ेगा और परस्पर इस प्रकार परिचय भी हो जायगा।

'आरमी प्रेस' का नोटिस पढ़ा और समझा। मैं इस विषय में फिर आपको लिखने वाला ही था। पुस्तक प्रेस से कबतक निकल जायगी ? 'भारतमित्र' के उपहार से पहले नहीं तो उसके साथ २ जरूर निकलनी चाहिए। ऐसा प्रयत्न होना चाहिए जिससे 'सरस्वती' के प्रत्येक ग्राहक के पास वह पहुँच जाय। 'सरस्वती' की ग्राहक संख्या अब कितनी है ?

आपको याद होगा हमने एक बार आपसे 'बंगवासी' आदि के वह फायल मांगे थे जिनमें भारतमित्र के उस लेख का उत्तर था, क्या वह सब मसाला इस पुस्तक में पढ़ने को मिल जायगा ? इस विषय का कोई उपादेय मजमून किसी पत्र में रह न जाय, यह ख्याल रहे। राघवेन्द्र ने मालूम होता है भारतमित्र की खूब खबर ली है, वह रमताराम की चिट्ठी से बेतरह घबराया है, मालूम है यह रमताराम कौन है ?—एक कृपण राजा को किसी कवि ने कैसा शर्मिन्दा किया है, देखिए—

"मागाः प्रत्युपकार कातरधिया वैमुख्यमाकर्णय
हे कर्णाट वसुन्धराधिपः सुधासिक्तानि सूक्तानि मे।
वर्ण्यन्ते कति नाम नार्णवनदी भूगोल विन्ध्याटवी—
झंझामारुत चन्द्रमाः प्रभृतयस्तेभ्यः किमाप्तं मया ? ॥"

(यदि इसमें मनोरंजकता हो तो सरस्वती में दीजिए)

'विक्रमांक चर्चा' क्या अभी नहीं निकली ?

कृपाभिलाषी
पद्मसिंह

(२९)

ओम्

नायकनगला
२६—१०—०६

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

आपके १०—१० ता० के कृपापत्र का उत्तर आज लिखने बैठा हूं ? अबके हमें मौसमी बुखार ने बड़ा परेशान रखा, अपनी सेवा-शुश्रूषा के सिवा और काम

की फुरसत बहुत कम दी। इसी कारण यथासमय पत्र लिखने में विलम्ब होता रहा, अस्तु।

आपकी नेत्र विकृति का हाल पढ़कर दुःख हुआ, अब क्या दशा है? इस प्रसंग का हमें एक श्लोक याद आ गया जो 'विवृतोक्ति' के उदाहरणों में है—

"सुभ्रु ! त्वं कुपिते त्यपास्तमशनं त्यक्ताः कथा योषितां,
दूरादेव विवर्जिताः सुरभयः स्रग्गन्धधूपादयः।
कोपे 'रोगिणी मुंच मय्यवनते दृष्टे प्रसीदाधुना,
सत्यं त्वद्विरहाद्भवन्ति दक्षिते सर्वा ममान्धा दिशः"

पण्डितराज का 'मत्तातपादै०' श्लोक उपहासपरक मालूम होता है, वराह-मिहिर ने बृहत्संहिता के 'स्त्री प्रशंसा' प्रकरण में मनु के नाम से एक श्लोक लिखा है—

'अजाश्वा मुखतोमेध्या गावोमध्यास्तु पृष्ठतः।
ब्राह्मणाः पादतोमेध्याः स्त्रियो मेध्यास्तु सर्वतः।'

शायद इस पर उपहास किया है कि 'गौ का पिछला भाग (गोमय तथा गोमूत्र निकलने का स्थान) पवित्र है तो गंधी का वह स्थान पवित्र क्यों नहीं?' इसमें क्या युक्ति है? गंधी के लिए 'रासभ धर्मपत्नी' शब्द भी हास्यजनक है। पर श्लोक में तो 'अंगगवा पूर्व०' है—'पृष्ठ' नहीं?

'सरस्वती' की कविता को कौन से नागरी वाले भद्दी बताते हैं? आरा के या बनारस के? उन बेचारों का भी कुछ दोष नहीं, किसी ने सच कहा है—

"विपुल हृदयाभियोग्ये खिद्यति काव्ये जड़ो न मौर्ख्ये स्वे।
निन्दति कंचुककारं प्रायः शुष्कस्तनी[1] नारी।"

मैं अनधिकार चेष्टा से डरता हूँ इसलिये आपकी आज्ञापालन न करने का उपालम्भ सुनना पड़ता है। मैंने दो बार अपना फोटो खिंचवाया है, एक छात्रावस्था में, दूसरा एक ग्रूप में, अब कभी फिर खिंचवाऊं तो भेजूँ।

ठा० शिवरत्न सिंह शायद जालन्धर में ही हों, ठहरिए, मैं उनका पता मालूमकर लूँ, तब 'शिक्षा' भेजिए।

शंकर जी का वह पद्य है तो कालिदास के श्लोक की छाया पर ही, पर कालिदास के यहाँ 'पटुत्व' से अभिप्राय 'पराभिसन्धान पटुता' से है, जिससे स्त्रियों के प्रति अनादर द्योतन होता है। इन्होंने उसे नव्य सभ्य समाजनुदित बना दिया, यह विशेषता है, वैसे ही इनका १४वां, पद्य न्याय दर्शन के इस सूत्र की व्याख्या है:—

1. तो नागरी-सभा भी 'शुष्कस्तनी नारी' है!

"अथैतत्पूर्वकं त्रिविधमनुमानं पूर्ववच्छेषवत्सामान्य तो दृष्टं च"

यहां भी इन्होंने 'अचला की चाल' का अनुमान किया है, और वात्स्यायन से 'आदित्य की व्रज्या' का यह भेद है।

शंकर जी के प्रतिभाशाली सुकवि होने में कुछ सन्देह नहीं, इतना लिखने पर 'सरस्वती' ने दर्शन दिये, पत्र अधूरा ही छोड़कर उसे पढ़ना प्रारम्भ किया, जब तक दो आवृत्ति न हो चुकी, तब तक तृप्ति न हुई। मैं आगे लिखने को तो कुछ और था पर अब 'सरस्वती' के विषय में ही कुछ निवेदन कर लूँ। शंकर जी की तारा ने तड़पा दिया! उन्होंने तो 'दुबारा' ही पढ़ने को ताकीद की थी। परन्तु न मालूम हम उसे कै बार पढ़ गये, तथापि तृप्ति न हुई, क्या अपूर्व उपमाएँ और कैसा सरस वर्णन है, यदि कवि जी समक्ष हों तो सहस्र मुख से प्रशंसा करें, यही जी चाहता है, चित्र सम्बन्धनी कविता की ड्यूटी उन्हीं के सुपुर्द कर दीजिए। 'खगोल विज्ञान' बहुत अच्छा है, हिन्दी जाननेवाली पबलिक पर 'सरस्वती' वह अहसान कर रही है जिसकी नजीर मिलना मुशकिल है। बेचारे हिन्दी वालों को ऐसे सुन्दर सचित्र लेख कहां पढ़ने को मिलते हैं!!

'भद्दी कविता' पर आपने सभा की खूब भद्द उड़ाई है! इतने पर भी सभा की आँखें न खुलें तो लाचारी है। 'शरद' भी खासी है, पर कवि ने कहीं रामायण की छाया ली है, कहीं अनुवाद ही कर दिया है। दूसरा पद्य देखिए इसका अनुवाद है कि नहीं:—

"दर्शयन्ति शरन्नद्यः पुलिनानि शनैः शनैः।
नवसंगम सव्रीड़ा जघनानीव योषितः।"

खैर! 'टेसू की टाँग' आपने खूब तोड़ी है! उसमें आपने अंग्रेजी शब्द अच्छे खपाये हैं, उत्तर भी ऐसा मिला है कि टेसू जी भी क्या याद करेंगे, क्या समचमुच दीन-दयालु के साथ टेसू जी भी 'रास' में नाचे हैं?

'सरस्वती' में एक बात देखकर हमें आन्तरिक दुःख हुआ, वह 'नर पिशाच' 'कादियानी' का अपवित्र चरित्र। सबसे अधिक आश्चर्य इस बात पर है उसे एक हिन्दू ने लिखा है, कहीं इन्हें (महेन्दुलाल या भोंदू[1]लाल को) कादियानी ने रिश्वत देकर यह लीला नहीं कराई! क्योंकि वह ऐसे ही हतखंडों (हतकंडों' सं०) से प्रसिद्ध हुआ है। वह इसी प्रकार अमेरिका के पत्रों तक पहुँचा है। कुछ हो, 'सरस्वती' जैसी पवित्र पत्रिका में इस पापात्मा राक्षस राज का चरित नहीं छपना चाहिए था, क्योंकि—

---

१. क्षमा कीजिए, यह काम इसी नाम के अनुरूप है।

"कथापि खलु पापानामलमश्रेयसोयतः।"

श्री पण्डित लेखराम जी आर्यपथिक का जिक्र जब हमने इसमें पढ़ा, बड़ी हृदय वेदना हुई। पण्डित जी हमारे भी मित्र थे, और इसी पिशाच ने उनका कतल कराया था, क्योंकि पण्डित जी ने कादियानी के जाल से लोगों को बचाने का जितना शुभ उद्योग किया था वैसा अन्य किसी ने नहीं। तीन चार बड़ी बड़ी जखीम किताबें उन्होंने इसके पुस्तकों के उत्तर में लिखी हैं, इसके मिशन को उन्होंने बड़ी हानि पहुंचाई। हिंदू धर्म पर इसने बड़े नापाक हमले किये हैं, कहीं कृष्णावतार होना सिद्ध किया है, कहीं कल्कि, कहां तक गिनाएं, यदि इसकी पुस्तकों का कुछ अंश भी आपको सुनाया जाय तो आप जानें कि हिन्दू धर्म के साथ इसने क्या सलूक किया है, जिसका चरित गर्ग जी लिखने बैठे हैं।

खैर, अब तो यह निकल ही गया, इसके शेषांश को जिसका उल्लेख आपने नोट में किया है, मैं पूरा करना चाहता हूँ, इस विषय की सामग्री के लिए मैं अपने मित्र सम्पादक 'आर्य मुसाफिर' जालन्धर को लिखता हूँ, यद्यपि इस विषय की कुछ सामग्री पण्डित जी की पुस्तकें मेरे पास भी हैं, पर वह इससे पूरे अभिज्ञ हैं।

'अग्निहोत्री' की भी ऐसी लीला है, तद्विषयक कुछ ट्रैक्ट आपके पास भेजूँगा।

अब के किसी पुस्तक की समालोचना क्यों नहीं निकली? 'योगदर्शन को न भूलिए। शरद्वर्णन में माघ का यह श्लोक अच्छा है—

"समय एव करोति बलाबलं, प्रणिगदन्त इतीव शरीरिणाम्।
शरदि हंसरवाः परुषीकृत स्वर मयूर मयूर मणीपताम्॥"

ये दो पद्य भी खूब हैं—

"अथोपगूढ़े शरदा शशांके प्रावृड्ययौ शान्त तडित्कटाक्षा।
कासां न सौभाग्य गुणांगनानां नष्टः परिभ्रष्ट पयोधराणाम्।"
"समुल्ल सत्पंकजलोचनेन विनोदयन्ती तरुणानशेषान्।
शुद्धाम्बरा गुप्तपयोधरश्रीः, शरन्नवोढेव समाजगाम।"

हेमन्तवर्णन में ये पद्य अच्छे हैं—

"हे हेमन्त! स्मरिष्यामि याते त्वपि गुणद्वयम्।'
अपत्नशीतलं वारि निशाश्चाध्ययनक्षमा
हेमन्ते बहु दोषाढ्ये द्वौगुणौ सर्वसम्मतौ।
अपत्नशीतलं वारि सुरतं स्वेदवर्जितम्।"

"लज्जा प्रौढमृगीदशामिव नवस्त्रीणां रतेच्छा इव।
स्वैरिण्या नियमा इव स्मितरुचः कोलांगनानामिव।
दम्पत्योः कलहा इव प्रणयिता वारांगनानामिव।
प्रादुर्भूय तिरोभवन्ति सहसा हैमन्तिका वासराः।"

(हेमन्त वर्णन में इन्हें निकालिए)

(कवि और कविता विषयक पद्यरत्नत्रयी)

"मन्दं निक्षिपते पदानि परितः शब्दं समुद्वीक्षते।
नानार्थाहरणं च कांक्षति मुदा लंकारमाकर्षति॥
आदत्ते सकलं सुवर्णनिचयं धत्ते रसान्तर्गतं।
दोषान्वेषणतत्परो विजयते चौरोपमः सत्कवि॥"

"भूतावेश निवेशिताशयइव श्लोकं करोत्याशुयेः।
श्लाघन्ते कविरद्भुतोयमिति तं मिथ्या जना विस्मिताः॥
द्वित्राण्यैव पुरः पदानिरचयन् पश्चात्समालोचयन्।
दूरं यः कवितां निनीषति कविः कामीव स स्तुत्यताम्॥"

"धन्यास्ते कवयो यदीयरसनारूक्षाध्वसंचारिणी।
धावन्तीव सरस्वती द्रुतपदन्यासेन निष्क्रामति॥
अस्माकं रसपिच्छले पथिगिरां देवी नतीतोदयं।
पीनोत्तुंगपयोधरेव युवति मर्न्थिर्य्यमालम्बते॥"

(इन्हें 'सरस्वती' में निकालिए और शीघ्र)

कृपापात्र
पद्मसिंह

(३०)

ओम्

नायकनगला
७–११–०६

मान्यवर पण्डित जी

मैंने एक लिफाफा श्रीमान् की सेवा में भेजा था। उत्तर न मिलने से सन्देह

है कि या तो वह आपको मिला नहीं, या आप नेत्र रोग से पीड़ित हैं, कृपया लिखिए क्या दशा है।

ठा० शिवरत्नसिंह जालन्धर में ही हैं। वहीं शिक्षा भेजिए।

भवदीय
पद्मसिंह

कृपापत्र मिल गया। उत्तर फिर दूँगा। ठाकुर साहब को क० म० विद्यालय के पते से पुस्तक भेजिए। पद्मसिंह

(३१)

ओम्

नायकनगला
८-११-०६

श्रीयुत् मान्यमहोदयाः प्रणमामि

४-११ का कृपापत्र मिला, आनन्दित और अनुगृहीत किया, यह मेरे लिए सौभाग्य और हर्ष की बात है कि मेरे पत्रों में श्रीमान् को मनोरंजकता प्रतीत होती है, परन्तु यथार्थ बात यह है कि—

"परगणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः।"

मैंने मालूम कर लिया है, ठा० शिवरत्न सिंह जालन्धर में ही हैं। वहीं उन्हें पुस्तक भेज दीजिए।

यदि शंकर जी से मेरा परिचय होता तो मैं जरूर उनसे सिफारिश करता। अच्छा, 'देर आयद् दुरस्त आयद्।'

कादियानी के विषय में यदि सम्पादक 'आर्य मुसाफिर' ने नोट्स भेज दिये तो मैं जरूर लिखूँगा और यथाशक्य मजहबी बातों से परहेज करता हुआ शिष्टता का ध्यान रक्खूँगा, पर कादियानी जैसे आदमी पर कुछ लिखते हुए इन बातों से बचना ऐसा ही है, जैसा कोयलों भरी कोठरी के अन्दर पहुंच कर कपड़ों को कालिमा से बचाए रहना, या बम्पुलिस में बैठकर नाक को दुर्गन्ध से सुरक्षित रखना ! ! यह श्री गर्ग जी का ही काम था, शायद उनमें यह शक्ति इसलिए आ गई है, कि वह 'कृष्णसानी' 'मसीह मौरुद' 'पैगम्बर आखिर उज्जमा' का पावन चरित और उनकी

इलहाम मयी पुस्तकें 'बड़ी रुचि' से पढ़ा करते हैं। "जमाले हमनशीं हदर मन् असर कर्द" अगर पैगम्बर कादियानी में उनकी ऐसी ही 'श्रद्धा' और रुचि बनी रही तो क्या ताज्जुब है जो 'खुदायतआला' उन पर भी 'तजल्ली फरमा' होने लगे ! !

कोई बात नहीं, जब अवकाश मिले 'योगदर्शन' पर आलोचना निकालिए, मतलब यह है कि भूल न जाइएगा।

'लज्जाः प्रौढमृगीदशां" में उपमानोपमेय-विषयक 'लिंगभेद' तो प्रायः सर्वत्र ही है, पर 'प्रणपिता' पद ने लिंग भेद के अतिरिक्त 'वचन भेद' भी कायम करके पूरा 'लिंग-वचन-भेदात्मक-'भग्नप्रक्रमत्व' दोष का उदाहरण बना दिया, 'प्रणयिनः' पद रखने से यह दोष तो दूर हो जाता है, पर अर्थ विषयक दोष खड़ा हो जाता है, क्योंकि अस्थिरता या 'अचिर स्थायितो' में वारांगनाओं का 'प्रेम' ही बदनाम है। उनके 'प्रणयी' नहीं, वे बेचारे तो लोक-लज्जा, धन-वैभव आदि अपना सर्वस्व उनके रूपानल में होम कर भी प्रेमपाश से निकलना नहीं चाहते। अब आप उनकी सच्ची और पक्की वफादारी पर भी हर्फ लाना चाहते हैं ! आप ही सोचिए यह उनके साथ कितना जुल्म होगा ? कहीं 'सरस्वती' में यह पढ़कर वह लोग खुदकशी न कर लें। क्योंकि—

"सम्भावितस्य चाकीर्तिर्म णादप्यतिरिच्यते।"

अच्छा 'शरद' गई तो उन श्लोकों को भी जाने दीजिए, पर अभी शीत तो आ रहा है, इसलिए तद्विषयक एक आख्यायिका है, जो एक दरिद्र कवि और किसी राजा से सम्बन्ध रखती है। तद्यथा:—

"शीतार्त्ता इव संकुचन्ति दिवसा नैवाम्बरं शर्वरी
शीघ्रं मुंचति किंच सोपिहुतभुक्कोणंगतो भास्करः।"
त्वं चानंग हुताशभाजिहृदये सीमन्तिनीनांगतो
नास्माकं वसनं न वायुवतयः कुत्र व्रजामोवयम् ?"

'कविता विषयक कुछ पद्य बहुत करके' दिसम्बर में पढ़ने को तो मिलेंगे पर कौन से पद्य ? वे ही या कोई और ? क्या उन्हें न निकालिएगा ? अच्छा, आप चाहे निकालें या न निकालें हम अर्ज किए ही जायेंगे, और सुनिए—

"व्यालाश्च राहुश्च सुधाप्रसांदाज्जिह्वा-शिरो-निग्रह मुग्नमापुः।
इतीव भीताः पिशुना भवन्ति पराङमुखाः काव्यरसामृतेषु ।।"

कृपापात्र
पद्मसिंह

(३२)

ओम्

नायकनगला
२०–११–०६

श्रीयुत मान्यवर पण्डित जी, प्रणाम

१४–११ का 'सूक्तिकार्ड' मिला, माताजी की बीमारी का हाल पढ़कर दुःख हुआ। लिखिए, अब उनका क्या हाल है ?

'प्रणयिनः' पर मेरे भाष्य (क्या प्रलाप कहना चाहिए) से जो नतीजा आपने निकाला, उससे मुझे दुःख हुआ । अपनी बुद्धि का 'बारीकपन' दिखलाने के लिए मैंने वैसा नहीं किया था, जिससे आपको अपनी बुद्धि 'मोटी' कहने की आवश्यकता हुई। न मुझे 'प्रणयिता' पर से ही कुछ खास 'प्रेम' या आग्रह है। यदि यह विषय मेरी राय अग्राह्य या त्याज्य है तो जाने दीजिए, मैं अपनी राय पर आपकी राय को मुकद्दम समझता हूँ, जैसा आप उचित समझें वैसा कीजिए—मेरी तरफ से आप सर्वथा—'कर्तुमकर्त्तुमन्यथाकर्त्तु समर्थः प्रभुः' हैं, यह कोई जरूरी नहीं है कि जो कुछ श्लोकादि मैं आपको लिखूँ वह 'सरस्वती' में निकलना ही चाहिए, इसलिए 'शीतार्त्ता' श्लोक के लिए 'वादा' कराना मुझे भी अभीष्ट नहीं, बात यह है कि आपको पत्र लिखते समय जो अच्छा (अपनी) बुद्धि में पद्य याद आ जाता है, चित्त मजबूर करता है कि वह आपको सुनाऊं चाहे वह पहले से आपको विदित ही हो और कि इस योग्य न भी हो कि आपके सामने पेश किया जा सके।

"शीते नोद्धपितस्य माषशिमिवच्चिन्तार्ण वे मज्जतः" में 'माषशिमिवत' पद्य का अर्थ ग्रहण हमें नहीं हुआ, पहले भी (जब इसे राजतरंगिणी में पढ़ा था।) समझने की कोशिश की थी, आप लिखिए, इसका क्या अभिप्राय है ? भारतमित्र की ओर से जो राजतरंगिणी के प्रथम तीन तरंगों का अनुवाद निकला है उसमें (शायद इसका अर्थ न समझ कर) 'मासमशिर्वम्' इस प्रकार पाठांतर की कल्पना करके—अमंगलीक महीने भर तक—अर्थ किया है ।

'देहाती' वाला वह श्लोक 'नागरिक कक्षा' में प्रविष्ट होने योग्य है। पर इसमें 'बहुरतीव नितम्बः' के 'बहुः' शब्द का सम्बन्ध किसके साथ है? इस दशा में यह क्रिया विशेषण तो है नहीं? फिर यदि इसे 'नितम्बः' का विशेषण माना जाय तो क्या अर्थ होगा? क्या भारी?

'विलम्बसे जीवित! किं द्रवद्रुतं ज्वलत्पदस्ते हृदयं निकेतनम्।
ज़हासिनाद्यापि मृषासुखासिकामपूर्वं मालस्यमिदं तवेदृशम्।

इस नैषधीय पद्य के साथ इसे (सौदा के शेर को) पढ़िए—

"कि इश्क का शौला है जो भंड़का तो रहा क्या
ऐ जान निकल जा कि लगें मुत्तसिल आतिस।"

मैं आजकल एक जैन सम्बन्धी महाकाव्य देख रहा हूँ। उस पर कुछ लिखने का भी विचार है, उसके महाकवि ने कालिदासादि महाकवियों के सूक्ति रत्नों को इस प्रकार चुराया है कि उसके साहस पर आश्चर्य होता है। आपको जो 'सरस्वती' के लेख चुराये जाने की प्रायः शिकायत रहा करती है, उसको देखकर आपको सन्तोष होगा कि यह कोई नई बात नहीं है, किन्तु-'एष धर्मः सनातन' मैंने उस पर बहुत से नोट्स कर लिये हैं, शीघ्र लिखना प्रारंभ करूँगा। इस प्रकार शायद आपकी आज्ञा पालन भी हो जाय और कालीदासादि के चुराये हुए माल का भी कुछ पता चल जाय।

अगस्त की ग्रंथमाला अब देखने को मिली है, 'सरस्वती' के विलायती कागज पर छपने की जो शिकायत है क्या वह दूर हो सकती है?

कृपापात्र
पद्मसिंह

(३३)

ओम्

रहरा—
जिला, मुरादाबाद
३–१२–०६

श्रीमत्सु प्रणतयः

२६–११ का कृपापत्र हमें यहाँ कल मिला, यहाँ हम अपने अनुज के द्विरागमन में आये हुये थे।

नवम्बर की 'सरस्वती' हमें बहुत पसन्द आई, पं० गिरिधर शर्मा की भव्य-मूर्ति और उनकी मनोहारिणी कविता अवलोकन कर चित्त बहुत प्रसन्न हुआ, चित्र के साथ परिचय आपने बहुत संक्षिप्त दिया, जन्मभूमि, आयु आदि का भी उल्लेख उचित था, आइन्दा चित्रों के साथ इसका ख्याल रखिए।

कुछ दिनों से आपने मजलूम अबलाओं का पक्ष लिया है, इससे हर्ष होता है। ठहरौनी खूब है, उसके २०वें पद्य ने चित्त में करुणा पैदा की, २६वें पद्य से जो शैली

आपने ग्रहण की है, अबलाओं का दुःख चित्त पर अंकित करने के लिये वह बहुत ही श्रेष्ठ है। 'हृदयोच्छ्वास' के ५वें, पद्य के 'निन्दति कंचुककारं' पद अर्थ यदि यह किया जाय तो कैसा :—"पति तपस्वनी या शुष्कस्तनी' होने के कारण कंचुकी ठीक नहीं आती ढीली आती है, इसलिये वह दरजी की निन्दा करती है कि कंचुकी ठीक नहीं सी, छाती पर कसकर नहीं आती" कंचुककार की जरूरत तो शुष्कस्तनी को भी वस्त्रान्तर के लिये हो सकती है। पूर्वार्द्ध में 'विपुल-हृदयाभि-योग्ये' पद रखने से कवि का भाव ऐसा ही प्रतीत होता है। एक लोकोक्ति भी इसी प्रकार की है"नाच न आवे आंगन टेढ़ा।"

१३वें पद्य के भाव का द्योतक एक फारसी का शेर है—

गरबए मिस्कीं अगर परदाश्ते।
तुख्म कुं जिश्क अज जहां पर दाश्ते।

अर्थात् यदि बिल्ली के पंख होते तो चिड़ियों का बीज भी दुनिया में न छोड़ती।

"बीतेनोद्धषितस्य माषशिमिवर्चितार्णवे मज्जतं"
शान्ताग्नि स्फुटिताधरस्य धमतः क्षुत्क्षाम कण्ठस्य मे।
निद्रा क्वाप्यवमानितेव दयिता सन्त्यज्य दूरं गता
सत्पात्रप्रतिपादितेव वसुधा न क्षीयते शर्वरी।"

राजतरंगिणी में इसी प्रकार पाठ है, इस श्लोक को क्षेमेन्द्र ने भी 'औचित्य-विचारचर्चा' में इसी प्रकार उद्धृत किया है, वहां 'माषशिमिवत्' पर काव्यमाला सम्पादक पं० दुर्गाप्रसाद ने (?) यह चिह्न भी नहीं दिया, इससे प्रतीत होता है कि 'माषशिमि' कोई चीज है जरूर।

यह श्लोक भी इस समय देने योग्य है—

"कन्याखण्डमिदं प्रयच्छ यदि वा स्वांके गृहाणार्भकं,
रिक्तं भूतलमत्र नाथ! भवतः पृष्ठे पलालोच्चयः।
दम्पत्यो रति जल्पतोर्निशि यदा चोरः प्रविष्टस्तदा,
लब्धं कर्पटमन्यतस्तदुपरि क्षिप्त्वा रुदन्निर्गतः।"

सौदा के शेर के साथ उस नैषधीय श्लोक को तथा इस प्रकार के श्लोक जो पहले भेजे थे, यदि उचित समझिए तो किसी संख्या में निकालिए।

'शिक्षा' जब छपे तो उसके साथ हर्बर्ट स्पेन्सर का चित्र भी रहना चाहिए। 'अवधजम्बाल'—पद्य को देखकर हमें श्री कण्ठचरित की याद आई, यदि आपके पास हो तो भेज दीजिए, हम उसे देखना चाहते हैं। पत्र नायकनगले भेजिए।

—पद्मसिंह

(३४)

नायकनगला
१६–१२–०६

श्रीमत्सु प्रणामाः

उस सफर से हम परसों मकान पर वापस आये हैं, तभी आपका ७–१२ वाला कृपापत्र मिला, खतरनाक प्लेग के सबब आपको हिजरत करनी पड़ी, इसका अफसोस है। २६–१२ को एक बरात में अलीगढ़ जाने का विचार है, यदि हो सका तो वहां से अपना फोटो लिवाकर आपकी सेवा में भेजने की कोशिश करूँगा।

अब के जब आप कानपुर लौटें तो श्री कण्ठचरित अवश्य भेजिए, जिस जैन काव्य का मैंने पहले एक पत्र में जिक्र किया था, उसके कवि ने मालूम होता है कि कुछ माल 'श्रीकण्ठ चरित' से भी चुराया है, श्रीकण्ठ का जो दो एक श्लोक मैंने नोट कर रक्खा था उनसे जैन काव्य के दो एक श्लोक मिल गये। 'विक्रमांकदेव चरित' से तो उसने बहुत कुछ लिया है। इसलिए उसे देखने की भी अब फिर जरूरत है, उसके लिए मैंने लाहौर को लिखा था (उसकी एक कापी मैं गत वर्ष वहां देख आया था) पर वहाँ नहीं मिला, अब बनारस को लिखा है, यदि वहाँ से भी न मिल सका तो फिर आपसे मागूँगा। पत्र में श्लोकों के भावार्थ लिखने की गुंजायश नहीं रहती इसलिए नहीं लिखा करता, दूसरे कुछ आवश्यकता भी प्रतीत नहीं होती, आपकी आज्ञा है तो 'कन्थाखण्ड' को भावार्थ सहित फिर लिखता हूँ। भावार्थ में कमी बेशी या उसे दुरुस्त करने का आपको अधिकार है।

'भारतमित्र' के उपहार की पांचवी पुस्तक तो कुछ और ही निकली, अब शायद "विषस्य विषमौषधं' के भी दर्शन न हो! स्पेन्सर के चित्र के लिए, बा० काशीप्रसाद को लण्डन लिखिए, सेंट जान का कुछ हाल भी चित्र के साथ चाहिए था।

पद्मसिंह

(३५)

नायकनगला
५–१–०७

श्रीमत्सु सादरं नतितनयः

२१–१२ का कृपापत्र हमें अलीगढ़-यात्रा से लौट कर मिला, विक्रमांक देव चरित के लिए हमने पारसाल बम्बई को लिखा था, अब लाहौर वालों ने भी पूछ देखा, वहां नहीं मिलता, कृपया 'श्रीकण्ठ' के साथ उसे भी भेजिए। आपकी बड़ी

ही कृपा हो यदि उसकी १ कापी बनारस आदि के किसी प्रसिद्ध पुस्तक विक्रेता के यहाँ से हमारे लिए भिजवा दें, हमारी इच्छा है कि वह हमारे पास मौजूद रहे, पर नहीं मिलता।

'सरस्वती' का ७वां साल सानन्द पूरा हो गया, इसकी बधाई है। आशु कवि जी की वह कविता जो उन्होंने 'स्वदेशी वस्तु पर' और 'स्वामी दयानन्द पर' बनाई थी यदि उसकी नकल आपके पास हो तो हमें भी भेजिए, या कानपुर आ० स० में वह कविता हो तो सूचना दीजिए।

मैं अपना फोटो आपको भेजूँगा, पर 'सरस्वती' में देने के लिए नहीं, मेरा कोई हक नहीं कि वह 'सरस्वती' में निकले, मैं उन महापुरुषों में प्रविष्ट होने की योग्यता कदापि नहीं रखता जिनका जिक्र 'सरस्वती' में किया जा सके, इस तक-ल्लुफ से मुझे माफ रखिए। हाँ, इस शर्त पर फोटो भेजूँगा कि आप भी 'टोगो' वाले नियम को मेरे विषय में शिथिल करके अपना फोटो भेजने की कृपा करें।

'प्रियम्वदा' वाली आपकी कविता के १२वें, पद्य को पढ़कर मुझे एक श्लोक याद आ गया, जिसे कुछ अन्य पद्यों के सहित लिखता हूँ।

'गाथासप्तशती' की एक गाथा हमें बहुत पसंद आई। जिसका संस्कृत अनुवाद देकर आपसे प्रार्थना करता हूँ कि उसे किसी सुन्दर संस्कृत छंद में हमारे लिए अनुवाद कर दीजिए" तद्यथा :—

"स्फुरिते वामाक्षि ! त्वयि यद्येष्यति सप्रियोद्यतत्सुचिरम्। संमील्व दसिणं त्वयैवेतं प्रलोकयिष्ये।।" गा० श० २ गा० ३७।

यह किसी प्रोषितपतिका या विरहणी की (वामनेत्र को फरकता देखकर) उक्ति है। नेत्र के लिए इनाम अच्छा मुकर्रिर किया है ! ! !

हिलते हुए कुंडल को देखकर किसी की उक्ति—

"यत्पूर्वं पवनाग्निशस्त्रसलिलैश्चीर्णं तपोदुष्करं, तस्यैतत्फलमीदृशं परिणतं यज्जातरूपं वा० पु०। मुग्धा पाण्डु कपोलचुम्बन सुखं संगश्चरूलोत्तमैः, प्राप्तं कुण्डल ! वांछसे किमपरं यन्मूढ़ ! दोलायसे ?"

अर्थात् पहले सुनार के पास बनते समय, वायु, अग्नि, शस्त्र-सुनार के औजार और जल के द्वारा (आभूषण गड़ते समय सुनार सोने को गलाने के लिए आग में रखकर अग्नि को प्रदीप्त करने को नलकी से फूँक मारता है, फिर औजारों से घुड़कर आभूषण को पानी में डाल देता है) दुष्कर तप तूने किया था, उसका यह-इस प्रकार का फल मिला है कि स्वर्णमय तेरा शरीर है, मुग्धा के पाण्डु कपोल चुम्बन का सुख और रूलोत्तमों का सहवास तुझे प्राप्त है, फिर हे मूढ़ कुण्डल ! इससे अधिक और क्या चाहता है जिसके लिए तू डोल रहा है ?

समुचित सामग्री प्राप्त न होने पर भी जो लोग लालच से या नामवरी की खातिर किसी दुष्कर काम का प्रारंभ कर देते हैं उनके प्रति किसी कवि की अन्योक्ति है—

"वंशः प्रांशुरसौघुणव्रणमयो जीर्णवरत्रा इमाः,
कीलाः कुण्ठतया विशान्ति न महीमाहन्यमाना अथि।
आरोहव्यवसाय साहसमिदं शैलूष संत्यज्यतां,
दूरे श्री निर्कंटेकृता—महिषग्रैवेयघण्टारवः ॥"

'हे नट! मेरा यह ऊंचा बांस घुन खाया हुआ जिसमें बहुत से छेद हैं, और ये रस्सियां पुरानी हैं, ठुन्ठ होने के कारण ऊपर से ठोकने पर भी मेरवें जमीन में नहीं घुसतीं, ऐसी सामग्री के सहारे, ऊपर चढ़ने (बांस पर चढ़कर तमाशा दिखाने) के साहस को छोड़ दे, क्योंकि इसमें धन प्राप्ति तो दूर है, और यमवाहनमहिष के गले के घन्टे की आवाज पास सुनाई दे रही है ! !

पद्मसिंह

(३६)

ओम्

नायकनगला
१७—१—०७

श्रीमत्सु सादरं प्रणामाः

१०१—१० का कृपापत्र और पैकेट मिल गया, इस कृपा के लिए अनेक धन्यवाद। आशु कवि जी का हाल सुनकर हँसी आई, स्वदेशी आन्दोलन विषयक कविता शायद फुलर साहब के चेलों के डर से न लिखने दी हो। अस्तु, 'सरस्वती' की कृपा से उनकी मूर्ति के दर्शन तो हुए, नहीं ये लोग फारसी के उनका या हुहुआ जानवर की तरह सर्वसाधारण को दिखलाई भी नहीं देते।

विक्रमांक-बंबई से तो नहीं मिलता, वहां नहीं रहा, नहीं मालूम अब छपेगा भी कि नहीं। किसी संस्कृत बुकसेलर के यहां कोई कापी पड़ी हो तो शायद मिल जाय। जैसे पारसाल एक कापी लाहौर में देखी गई थी, कृपा करके किसी अपने परिचित बुकसेलर से मालूम कर दीजिए।

---

१. शिक्षा—सं०

अब किस पुस्तक के अनुवाद की बारी है ? 'शिषा'[१] किसी ने ग्रहण की या अभी नहीं।

आज्ञानुसार आगे से श्लोक अलहदा कागज पर ही लिख दिया करूँगा, कुछ अबके भेजता हूँ। भाषा या भाव में कमीबेसी का आपको अधिकार है।

अब कानपुर में प्लेग का क्या हाल है ?

कृपापात्र

पद्मसिंह

गवर्नमेंट सेन्ट्रल बुकडिपो बंबई को एक रिप्लाई कार्ड अंग्रेजी में लिखकर मालूम तो कीजिए कि विक्रमांक का दूसरा एडीशन निकलेगा कि नहीं[१]।

पद्मसिंह

(३७)

ओम्

नायकनगला

९–३–०७

श्रीमत्सु साञ्जलिबन्धं प्रणामाः

२४–२ के कृपाकार्ड के उत्तर में फिर विलम्ब हो गया, क्षमा कीजिए।

वास्तव में 'विक्रमांक देवचरित' इसी योग्य है कि वह प्रत्येक काव्यरसिक के पास रहे, मैं तो उस पर मोहित हूँ। क्या कोई प्रेस अपनी टीका टिप्पणी सहित उसे अब छपवा नहीं सकता ? आपकी 'चर्चा' निकलने पर शायद लोगों का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट हो, वह कबतक निकलेगी ? यदि वि० च० के पुनः प्रकाशित होने की कोई आशा न दीखेगी तो मैं उसे नकल करने की कोशिश करूँगा।

मुझे भी खेद है कि मैं अबतक सतसई के आनन्द से वंचित रहा, 'बिहारी बिहार' मैंने नहीं देखा, वह सतसई की टीका है या आलोचना ? भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र-कारित पं० परमानन्द कृत संस्कृतायार्याछन्दोमय उसका अनुवाद एक बार अजमेर लाइब्रेरी में मैंने थोड़ी देर के लिए देखा था, वह भी अब दुष्प्राप्य है।

सतसई के एक दोहे का मुकाबला 'गालिब' के एक शेर से किया है, वह भेजता हूं। सतसई की कोई शुद्ध प्रति मिले तो उससे उत्कृष्ट २ दोहों का संग्रह करके भेजूँ। दीवानेहाली का मुकद्दमा बहुत अच्छा है। आपने उसे पढ़ लिया, खूब हुआ। हाली का चित्र और संक्षिप्त चरित 'सरस्वती' में अवश्य निकालिए।

---

१. पेंसिल से लिखा है।

'ज्योतिष वेदांग' पर आपकी निष्पक्ष पर्यालोचना पढ़कर चित्त बहुत ही प्रसन्न हुआ, सुधाकर जी भी क्या याद करेंगे? 'आधुनिक अर्जुन' की तरह राना सुल्तान-सिंह का चित्र भी कभी सरस्वती में निकालिए।

'सम्पत्तिशास्त्र' पर अच्छा लेख है, इस विषय पर उर्दू के प्रसिद्ध कवि और लेखक प्रोफेसर मुहम्मद इकबाल एम० ए० ने एक किताब उर्दू में 'इल्मुल इक्तसाद' नामक खूब लिखा है।

'इस्ट ऐन्ड वेस्ट' के दिसम्बर-नवम्बर में रामायण पर लेख "दि रीडिल अव द रामायण"-बाई सी० जेड० वैद्या एम० ए० एल० एल० बी०" निकला है, उसका सार एक उर्दू पत्र में निकला है, आप भी उसे पढ़कर 'सरस्वती' में उसकी आलोचना अवश्य कीजिए। उक्त लेखक ने महाभारत पर भी लिखा है।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह

(३८)

ओम्

नायकनगला
१५–३–०७

१२–३ का कृपापत्र मिला, कृतार्थ किया, वि० दे० च० विषयक औदार्य के लिए अनेक धन्यवाद। अच्छा, अब से उसे हम मुश्तर्का समझेंगे, जब जरूरत हो आप मंगा लिया करें और जब हमें आवश्यकता हो हमारे पास रहा करे। हमारा विचार है कि उसके उद्धार के लिए निर्णयसागर वालों से निवेदन किया जाय कि उसकी कोई और हस्तलिखित कापी ढूंढ़कर उसके आधार पर उसे काव्यमाला में निकालें। 'चर्चा' देखने के लिए चित्त उत्कण्ठित है, देखिए वह कबतक नेत्रा-तिथिता को प्राप्त हो। 'बिहारी बिहार' सतसई का संस्कृत अनुवाद-शृंगार सप्तशती तथा लालचंद्रिका सहित उसकी एक शुद्ध प्रति, ये सब हम देखना चाहते हैं, इनके लिए बनारस को लिखते हैं, शायद वहां से ये मिल जायं, क्या कहें सतसई हमें चिपट बैठी, गले का हार बन गई, देखिए कब इससे पीछा छूटे! नहीं नहीं, गलती की, यह दूर करने लायक नहीं, यह तो कण्ठ में धारण करने योग्य चीज है।

'जैन काव्य' को पढ़कर और कहीं-कहीं नोट करके उस पर लिखने का विचार किया था कि इतने में सतसई आ गई, फिर उसने उस ओर ध्यान ही नहीं जाने दिया, यह दशा कर दी—

"दिल चाहता है फिर वही फुरसत कि रात दिन,
बैठे रहें तसव्वरे जाना किए हुवे।"

अच्छा अब लिखने की कोशिश करूंगा, (परमात्मा करे लिख सकूँ, कोई और विघ्न न हो जाय) सतसई के कुछ दोहे भी लिखूगा, फुरसत तो मुझे रहती है पर वह पुस्तक देखने भर के लिए काफी होती है, इस शौक ने मुझे किसी और काम का नहीं छोड़ा, फिर मुझे लिखना आता भी तो नहीं। लिखना चाहूँ भी तो कैसे लिखूँ? हिम्मत ही नहीं पड़ती कि कलम उठाऊँ। मुझे अपने और मित्रों से भी यह उपालम्भ और भर्त्सना सुनना पड़ता है। कुछ दिनों आपकी सेवा में रहूँ तो शायद कुछ लिखना आ जाय। 'दीवानेहाली' के मुकद्दमे में कविता विषयक जो कुछ है, इस पर मैं मुद्दत से लिखने का विचार कर रहा था, पर न लिख सका, आपने एक बार ही देखकर उसका सार निकाल लिया, "धन्योसि लिताम्बर।" हि० ग्र० मा० में 'स्वाधीनता' अभी कबतक और चलेगी? हमें याद है, महारानी लक्ष्मीबाई पर आपने 'सरस्वती' में एक बार लिखा था, उसमें करुणा और वीर रस का अच्छा समावेश था। उसे पढ़कर बेतरह हमारा जी भर आया था, वह दशा अबतक याद है, 'सरस्वती' से ऐसे-ऐसे लेख 'इन्तखा बेमखजन' की तरह पृथक् पुस्तकाकार छप जायं तो क्या ही अच्छा हो!

'हाली' ने कुछ कविता पर लिखा है, उसके कितने अंश का सारांश आपने हिन्दी में लिखा है? "कविता के लिए क्या-क्या शर्तें जरूरी हैं" इस कई पृष्ठ के मजमून को आचार्य दण्डी ने काव्यादर्श के एक श्लोक में बयान किया है, वह भेजता हूँ, देखिए क्या अपूर्व सादृश्य है और फिर कितना संक्षेप है, घड़े में समुद्र भर दिया है! कृपया इसे भी पहले ही तरह अपने लेख में स्थान दीजिए। हाली का चित्र, चरित्र, और वह लेख सब एकसाथ ही निकालिए। बिना चरित्रके हाली का चित्र न दीजिए, चाहे वह कुछ देर में निकले, कुछ ऐसी जल्दी नहीं। लीजिए हाली के चरित की सामग्री मैं आपके लिए प्रस्तुत और सुलभ किए देता हूँ। "मखजन" के सुयोग्य सम्पादक शैख अब्दुलकादर बी०ए० ने अंग्रेजी में एक किताब लिखी है, जिसका नोटिस "मखजन" में "मुसन्नफीन-उर्दू" के नाम से निकलता है, उसमें हाली के अतिरिक्त प्रोफेसर आजाद आदि उर्दू के अन्य चार प्रसिद्ध लेखकों का भी हाल है। उसका मूल्य ।।।) है, और प्रोफेसर इकबाल की सम्पत्ति शास्त्र संबंधी किताब की कीमत १) है, दोनों के लिए लाहौर को लिख दिया है, वी० पी० से बहुत जल्द आपके पास पहुँचेंगी। यदि अलीगढ़ से हाली का चित्र मिले तो आप मुझे लिखिए, मैं स्वयं हाली को इस विषय में लिखूँगा, आशा है चित्र मिल जायगा। मुझे अफसोस है कि मेरे पास हाली की चरित सम्बन्धी कुछ सामग्री नहीं। रीडिल अव द रामायण

का सार जिस उर्दू रिसाले (आर्य मुसाफिर) में निकला है, वह मैं आपकी सेवा में भेजता हूँ, उसमें 'सरस्वती' के एक लेख का अनुवाद भी छपा है, मैं चाहता हूं कि आपकी रीडिल को पढ़कर उसकी समुचित और स्वतन्त्र आलोचना 'सरस्वती' में करें। अब न सही, जब अवकाश हो। फरवरी का "मखजन" भी भेजता हूँ और सानुरोध प्रार्थना करता हूँ कि इसमें से इतने लेख (अवकाश न होने पर भी) अवश्य पढ़ जाइए :—

पत्र के सम्पादक का—"मिस्टर सेटड केहां एक शाम"

सज्जाद हैदर (उत्कृष्ट लेखक है) का—"हजरतेदिलकी सवानह उमरी" प्रोफेसर इकबाल की "एक परन्दे की फरयाद" (कविता)। आशा है, इन्हें पढ़कर आप खुश होंगे, इसके अन्त में नोटिसों की फहरिस्त में ३रे, ६ठे, पृष्ठ पर उन दो किताबों का नोटिस भी देखिए। ना० प्र० सभा से आपने इस्तीफा दे दिया, इसे सभा के दुर्भाग्य के सिवा और क्या कहें।

हो सके तो "सूनृतवादिनी" का दर्शन हमें भी कराइए।"

अनुगत
पद्मसिंह

(३९)

ओम्

नायकनगला
२४–३–०७

श्रीमत्सु प्रणतयः

२१–३ का कृपापत्र मिला, आपने मखजन को पढ़ लिया, और उसे पसन्द किया, खुशी की बात है। सूनृतवादिनी को आप रद्दी में बेंच डालते हैं, यह मालूम कर के आश्चर्य हुआ, क्या वह इसी लायक है? अन्यथा आपकी सहृदयता कब गवारा करती कि वह रद्दी में फेंकी जाय। 'पियूषप्रवाह' कोई अच्छा पत्र है? कहां से निकलता है? यदि वह पद्य कहीं निकल गया तो जाने दीजिए। आज दो और श्लोक भेजता हूँ, इन्हें तो दे दीजिए, पहले के निकलने का तो यह समय है, एप्रिल में उसे जरूर निकालिए।

कृपा करके इसे पूरा लिखिए। पार साल एक श्लोक श्री पं० सत्यव्रत सामश्रमी जी ने सुनाया था, वह कहते थे कि यह श्लोक हमें पण्डित रमा बाई ने लिखा था और उन्हीं का बनाया हुआ है, यथा—

"तात ! बिल्हण ! किं ब्रूमः कर्मणोगतिरीदृशी।
दुष घातोरिवास्माकं गुणो दोषाय कल्पते।"

सामश्रमी जी ने बिल्हण शब्द का कुछ विलक्षण अर्थ भी बतलाया था पर उससे हमें सन्तोष न हुआ, कदाचित् यह श्लोक उसी राजकन्या ने बिल्हण को लिखा हो, और रमाबाई ने अपने ऊपर घटता हुआ समझकर लिखा हो। (सामश्रमी जी ने रमाबाई विषयक एक ऐसी ही कथा सुनाई थी जो उस राजकन्या की कथा से मिलती हुई थी)—आपने चर्चा में लिखा है कि बिल्हण भोज की राजधानी धारा को नहीं गया, पर वि० चे० स० १० श्लो० ९६ से यह विदित होता है कि विल्हण धारा में गया, पर जब भोज मर चुके थे। मालूम होता है चर्चा छपाते समय उसकी नजरसानी नहीं की जैसी कापी पहले से लिखी रखी थी वही प्रेस में भेज दी। इस विषय में विशेष फिर लिखूंगा, बिल्हण की कर्ण सुन्दर-नाटिका भी तो मुद्दत हुई छप गई है !

कल हम गु० कु० कांगड़ी के उत्सव पर जाते हैं। २-३ एप्रिल तक लौटेंगे।

पद्मसिंह

(४१)

नायकनगला
६-४-०७

श्रीयुत माननीय महोदयेषु प्रणतय:

हम कल कांगड़ी से वापस आ गए, आपके तीन पत्र एक साथ मिले, परमानन्द हुआ, बिल्हण वाले श्लोक के लिए धन्यवाद। 'सरस्वती' हमने गुरुकुल में ही एक ब्रह्मचारी से लेकर पढ़ी, वहां के कई ब्रह्मचारी इसे मंगाते हैं, उनमें प्रायः आपके भक्त हैं, उनकी बड़ी उत्कट इच्छा है कि आप एक बार वहां पधारें। वे लोग पूछते थे कि 'शिक्षा' कबतक निकलेगी ? 'स्वाधीनता' उन्हें पसन्द आई है, आपके लेखन चातुर्य और परिश्रम की वे प्रशंसा करते थे। उत्सव अबके बड़े समारोह से हुआ, ४००००से कम भीड़ भाड़ न थी। गोखले महोदय का नाम सुनकर बहुत लोग

गया, जिसमें ४५ हजार से ऊपर नकद था। बा० गंगाप्रसाद एम० ए० डिप्टी कलेक्टर का व्याख्यान आर्यों और पारसियों की प्राचीनता और समानता पर अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण और रोचक हुआ, यह व्याख्यान कोई ३ घन्टे तक हुआ, व्याख्याता इस प्रान्त के प्रसिद्ध वक्ता और विद्वान् पुरुष हैं।

'सरस्वती' की अबके तीन बातें हमें बहुत पसन्द आईं, एक तो शुरू का चित्र और उस पर आपका नोट। 'चितइ जानकी लषन तन' में 'चितइ' का कर्त्ता कौन है 'करुणाऐन' या 'जानकी'? दूसरी उर्दू वर्णमाला पर आपकी समालोचना। तीसरी शंकर जी की कविता। सच तो यह है कि आपकी लेखनी आलोचना खूब लिखना जानती है। गुरुकुल में दो एक मित्र (जो आपके लेख बड़े शौक से पढ़ा करते हैं) उपालम्भ देते थे कि न जाने द्विवेदी जी की लेखनी अब समालोचना लिखने में क्यों शिथिल होती जाती है? एक महोदय इस बात की विशेष रूप से शिकायत करते थे कि 'भगत्सुधाशतक' की समालोचना करते हुए 'उसे स्तुतिकुसुमांजलि' के बराबर रखकर द्विवेदी जी ने अपनी लेखनी, स्वभाव और सहृदयता के प्रतिकूल काम किया। अस्तु, ये बातें आपके सम्बन्ध में थीं इसलिए आप तक पहुँचा दीं।

'मुग्धानलाचार्य' का कार्ड पढ़कर लोग खूब हँसते थे। ऐसे मुग्धाचार्य क्या खाक संस्कृत साहित्य पढ़ाते होंगे?

वि० दे० च० के प्रकाशक बुलर साहब भी ऐसे ही संस्कृतज्ञ मालूम होते हैं, जिन्होंने —

"भोजःक्ष्माभृत्स खलु न खलैस्तस्य साम्यं नरेन्द्रैस्तत्प्रत्यक्षं किमितिभवता नागतं हाहतास्मि। यस्य द्वारोड्डमरशिखरक्रोडपारावतानां, नादव्याजादिति सकरुणंव्याजहारेव धारा।" इस श्लोक के होते हुए भी भूमिका में यह लिख दिया कि बिल्हण धारा में नहीं गया! निःसन्देह आपने भी भूमिका से ही चर्चा में ऐसा लिख दिया है, अन्यथा इस श्लोक के सामने आपका लिखा यह नोट है "धारा गया" बुलर की नीरस भूमिका ने ही चर्चा को वैसा सुन्दर नहीं बनने दिया जैसा आशा थी। उसका आश्रय आपने लिया ही क्यों?

"मुसन्नफीन' में किसी का चरित नहीं यह सुनकर ताज्जुब हुआ, उसके नोटिस में तो यह स्पष्ट लिखा है —

"हिन्दोस्तान के जिंदः मुसन्नफीन उर्दू जबान की सवानह उमरी अंग्रेजी जबान में लिखी है और हर एक मुसन्निफ के हालात निहायत तदकीक से जमअ किये हैं।"

लोग बड़ा झूठ लिखते हैं, क्या किया जाय। इकबाल की किताब क्लिष्ट है, इस दशा में व्यर्थ दाम गये, अफसोस।

हाली की रूबाइयों का किसी अंग्रेज ने अंग्रेजी में अनुवाद किया है, और शायद हाली का कुछ चरित्र भी उसमें दिया है। या रहने दीजिए, फिर सही। हां, हाली अंग्रेजी नहीं जानते, अच्छी बात है 'सरस्वती' उनके पास जाने लगे।

अकाल मृत्यु आदि की बातें न लिखा कीजिए, दुःख होता है।

पद्मसिंह

(४२)

ओम्

नायकनगला
२८–४–०७

श्रीमत्सु सादरं

प्रणामाः

९–४ के कृपापत्र के उत्तर में बहुत विलम्ब हो गया, क्षमा कीजिए, दो हफ्ते से चान्दपुर (डाकघर) में और उसके आसपास प्लेग प्रचण्ड है, लोग डरते हैं, आना जाना बन्द है, इस बीच में मैं घर पर कम रहा, ऐसे ही दो एक कारण विलम्ब के हो गये।

बा० गंगाप्रसाद एम० ए० गोरखपुर में आजकल डिप्टी कलेक्टर हैं, वह मुद्दत से प्राचीन आर्यों पारसियों पर एक पुस्तक लिख रहे हैं, उन्होंने एतद्विषयक अच्छे २ प्रमाणों का संग्रह किया है, और खूब खोज की है, आप उनसे लिखा पढ़ी करें तो उसमें से बहुत कुछ मसाला 'सरस्वती' के लिए मिल सकता है, वह हिन्दी अच्छी लिख लेते हैं, स्वभाव के भी बहुत नम्र और सभ्य हैं।

गत कांगड़ी-गुरुकुल के उत्सव पर उसी के आधार पर उन्होंने व्याख्यान दिया था, जिसे श्रोताओं ने बहुत उत्साह और श्रद्धा से सुना था, 'सरस्वती' के लिए भी यह विषय रुचिकर होगा, कोशिश कीजिए। सफलता की पूरी आशा है।

पिछले साल जब हम कांगड़ी गये थे तो ला० मुन्शीराम जी के ज्येष्ठ पुत्र श्रीयुत हरिश्चन्द्र ब्रह्मचारी की कुछ कविता आपके पास भेजने को लाये थे, पर वह कागज कागजपत्रों में रह गया, अब हाथ आया है, अब उसे श्रीमान् के पास भेजता हूँ, देखिए। और यदि उचित समझिए तो उसे या उसके किसी अंश को 'सरस्वती' में दे दीजिए।

'सुनृतवादिनी' की संख्या पहुँची, इसके लिए अनेक धन्यवाद। अच्छी पत्रिका है, इसकी कापियां रद्दी में न बेचकर यदि महीने भर की इकट्ठी हमें भेज दिया कीजिए तो बड़ी कृपा हो।

एप्रिल के मखजन में "दिल की सवानहउमरी" के लेखक ने "चिड़े चिड़िया की कहानी" लिखी है, बड़ी मजेदार है, देखिए, तो भेज दूँ ?

'बिहारी सतसई' का संस्कृत अनुवाद "श्रृंगारसप्तशती" हमने मंगाया है, अच्छा है, पर दोहों का अनुवाद दोहा छन्द में ही करने की सख्त कैद से काम बिगड़ गया। प्रायः स्थलों पर अनवाद मूल के विरुद्ध और अशुद्ध है, उसके साथ जो मूल पाठ दिया गया है, उसमें और भी गड़बड़ है, प्रायः टीकाकारों और छापने वालों ने 'सत-सई' ऐसी अपूर्व पुस्तक की बड़ी दुर्दशा की है, पाठचभेद का तो कुछ ठीक ही नहीं, बा० हरिश्चन्द्र की सम्पादित 'सतसई' तो देख ली, पं० अम्बिकादत्त व्यास का "बिहारी बिहार" देखने की और इच्छा है, शायद उसमें और नहीं तो मूल पाठ ही शुद्ध पढ़ने को मिल जाय। यादि आपको उसका पता मालूम हो तो लिखिए, कहां से और कितने में मिलता है, बनारस तो मिला नहीं।

मार्च के 'आर्य मुसाफिर' में 'सरस्वती' के दो लेखों (आसाम की नागाजाति और उत्तरीय ध्रुव की यात्रा) का अनुवाद छपा है। पहले लेख के शुरू में यह रुबाई लिखी है—

"मशहूर हुई जहां में कौमे नागा, आखिर नंगों का भी नसीबा जागा।
उरयानी का भी है किस कदर सादा लिबास, जिसका न गिरेबां है न पीछा आगा।"

कृपापात्र
पद्मसिंह

(४३)

ओम्

नायकनगला
१४–५–०७

श्रीयुत मान्यमहोदयेषु

प्रणामाः

२–५ का कृपापत्र कुछ देर से मिला, उत्तर में और भी देर हो गई। बा० गंगाप्रसाद जी से लिखा पढ़ी का जो कुछ नतीजा निकले, पीछे से लिखिए। वे

हिन्दी या हिन्दी-पत्रों को तुच्छ समझनेवाले तो नहीं है। "बिहारीबिहार" के पते के लिये धन्यवाद। एप्रिल के 'आर्य मुसाफिर' में 'उर्दू का नया रस्मुलखत' 'सरस्वती' से तर्जुमा होकर फिर छपा है, 'सरस्वती' का पूरा पता देने के लिए हम उन्हें लिखेंगे। ला० मुन्शीराम जी के द्वारा हम हरिश्चन्द्र ब्र० से पूछ लें कि उनकी कविता 'सरस्वती' में दें या नहीं, क्योंकि गुरुकुल के ब्रह्मचारी पबलिक से अभी पृथक् रखे जाते हैं। यदि वहां से इजाजत मिल गई, तो अनुवाद कर के भेज दूँगा। यह बात मैं प्रथम पत्र में लिखना भूल गया था। क्षमा कीजिए।

एप्रिल का 'मखजन' मैं आज की डाक से भेजता ही हूँ। आशा है 'चिड़े चिड़िया' की बात सुनकर आप प्रसन्न होंगे और इस खुशी में, आज्ञाभंगजन्य मेरा अपराध क्षमा कर देंगे। यदि यह लेख पसन्द आया तो मैं इसका अनुवाद भेज दूँगा।

हाल की 'सरस्वती' में 'सभा' की 'सभ्यता' पढ़कर दुःख हुआ, कांग्रेस के मौके पर आर० सी० दत्त, मिस्टर तिलक आदि महोदय ना० प्र० सभा के भवन में एकत्र हुए थे, वे भले आदमी सभा की करतूत प्रकाश हो जाने पर अपने दिल में क्या कहेंगे।

अस्तु, आपका एक सुन्दर लेख तो पढ़ने को मिला, खण्डन मण्डन में आपका कलम खूब जौहर दिखाता है।

'सूनृतवादिनी' से हमें बेशक प्रेम है, यदि इस साल के बजट में उसके खरीदने की गुँजायश होती तो हम आपसे उसे हर्गिज न मांगते, हमारे पास ७-८ पत्र-पत्रिका आते हैं, इसलिए इस समय उसे नहीं मंगा सकते, आइन्दा साल यदि हम और वह जिन्दा रहे तो जरूर मंगावेंगे।

आज एक आत्मीय के प्राइवेट पत्र से यह मालूम करके चित्त बड़ा उद्विग्न और क्षुब्ध हो रहा है कि पंजाब के नेता ला० लाजपतराय जी को अंग्रेजों ने धोखे से पकड़ कर ता० ९ की रात्रि में स्पेशल ट्रेन से चुपचाप काले पानी भेज दिया!

पद्मसिंह

(४४)

नायकनगला
२५–६–०७

श्री मान्य महोदयेषु
प्रणामाः

२०–६ का कृपाकार्ड मिला। १५ मई के मेरे दहिने हाथ में एक ततैय्ये (बर्र) ने काटा था, वह हाथ पक आया, महाकष्ट रहा, उसके साथ ही शरीर में अन्यत्र भी

फोड़े फुन्सी हो गये। उस दिन से ही इलाज मामालजे में लगा हुआ हूँ, हाथ में कष्ट होने के कारण पत्र न भेज सका, अभी तक पूरा आराम नहीं हुआ। यह पंक्तियां मुश्किल से लिखीं हैं। 'क्षतेक्षारः' के अनुसार कल से एक कान में बहुत तकलीफ है। श्री क० चरित भेजता हूँ, कुछ नोट करने के लिए रख छोड़ा था, पर आधि-व्याधि ने फुरसत नहीं दी। देखिए अच्छे हो गये तो फिर पत्र व्यवहार जारी होगा, अब के बुरे फंसे हैं।

दयनीय
पद्मसिंह

(४५)

नायकनगला
२३–९–०७

श्रीयुत मान्यवर पण्डित जी
प्रणाम

आज बाद मुद्दत खिदमत में हाजिर होता हूँ, यह गैर हाजरी मजबूरी थी, जिसका मुझे अफसोस है, आशा है आप क्षमा करेंगे।

इस अर्से में मैं दो अढ़ाई महीने तो बराबर बीमार रहा, जब उससे रिहाई मिली तो कुटुम्ब में एक जायदाद सम्बन्धी अभियोग उपस्थित हो गया, जो अभी चला जाता है, उसमें योग देना पड़ा।

इन झंझटों में पड़कर जहां अन्य हानियां उठानीं पड़ी वहां सबसे अधिक कष्ट-कर यह प्रतीत हुआ कि आपसे पत्रव्यवहार बंद रहा, जिससे दिल बहला रहता था।

एक मित्र ने 'बंगवासी' के वे नम्बर मंगाकर पढ़े जिनमें 'बा० श्या० सु० दास की 'शालीनता' वाले लेख थे, क्या अब 'वक्तव्य' न छपेगा ? मामला ठंडा हो गया ? क्या बा० साहब ने "पुनन्तु मां ब्राह्मणपादरेणवः". कह दिया ?

आजकल हिन्दी तथा संस्कृत के साहित्य संसार में कोई नई बात तो नहीं हुई ? इस अवसर में हमें पत्रों के पढ़ने का बहुत कम मौका मिला। 'सूनृतवादिनी" निकले जाती है ? उसके दो एक ग्राहक बढ़ाने की हमने चेष्टा की है।

कलकत्ते के 'देवनागर' देखने की हमारी इच्छा है, यदि उसके द्वारा 'बंगला' या मराठी में हमारा कुछ प्रवेश होने लगे तो हम उसे मंगाने लगें, कृपया उसके दो एक नम्बर भेजिए।

इधर वर्षा न होने से प्रबल दुर्भिक्ष होने की पूरी संभावना है, उधर क्या दशा है ?

कृपापात्र
पद्मसिंह

(४६)

ओम्

नायकनगला
११-११-०७

श्रीयुत श्रद्धास्पदेषु सादरं
प्रणामाः

आपका ३० सितम्बर का पत्र पाने के पीछे मैं फिर पहली सी ही आपत्ति में फंस गया, और अबतक फंसा हुआ हूँ, इसी से आपको पत्र न लिख सका, न मालूम अभी कब तक यह स्थिति रहती, परन्तु नवम्बर की 'सरस्वती' ने यह पत्र लिखने के लिए मजबूर कर ही दिया। जिस दिन 'सरस्वती' की यह संख्या मिली मेरे हाथ में असह्य पीड़ा थी (अबके बायें हाथ में है) परन्तु इसके हाथ में लेते ही पीड़ा की विस्मृति होने लगी, और जब मैं उस स्थान पर पहुँचा, जहां आपने दीक्षित जी के हेतुओं का खण्डन करते हुए, शान्ति 'अशान्ति' पर लिखा है तो आपके लेख की सत्यता की साक्षी मेरा तात्कालिक अनुभव ही देने लगा। कवियों का तो कहना ही क्या है, उनके लेखों को पढ़नेवाले भी अपनी पीड़ा को भूल सकते हैं। दीक्षित जी का वह हेतु वास्तव में कुछ नहीं, उसके विरुद्ध आपके लेख की पुष्टि में बहुतसे उदाहरण 'आबेहयात,' 'यादगारेगालिब' और 'हयातेसादी' से मिल सकते हैं। अस्तु।

अब तो सरस्वती कई महीने से मास के प्रारंभ में ही दर्शन देने लगी है, इसके लिए आपको और प्रकाशक को बधाई है।

'शंकरानन्द' के शास्त्रि-परीक्षोत्तीर्ण होने का हाल पढ़कर हमें भी आश्चर्य हुआ, शंकरानन्द को मैं खूब जानता हूँ। मेरी कांगड़ी की स्थिति के समय यह वहां था, उस समय इसमें कुछ वैलक्षण्य नहीं था, जैसी इसके साथियों की दशा थी

वैसी ही प्रायः इसकी थी। उसके पश्चात् फिर सिकन्दराबाद में भी दिखाया, तब भी वहां के अध्यापक आदिकों से कुछ विशेषता प्रकट नहीं हुई थी। ऐसी दशा में सहसा शास्त्री पास कर लेना आश्चर्यावह है। इसके अतिरिक्त इस साल पंजाब से एक और महाशय शास्त्री पास हुए हैं, उनका नाम है केशवदेव, उनका और मेरा अजमेर तथा हरद्वार में बहुत साथ रहा है। उस समय उनसे हिन्दी भाषा तक लिखी न जाती थी, संस्कृत शब्दों का उच्चारण भी ठीक नहीं होता था, अवस्था ३०-३५ वर्ष की होगी, वह भी पास हो गये ! ! यह महाशय खत्री हैं। संस्कृत के लिए यह शुभ लक्षण है।

'सरस्वती' के पहले वर्षों में जितने जीवन चरित आपकी लेखनी से निकल चुके हैं वह पृथक् पुस्तकाकार छपने चाहिएं, उनमें से 'लक्ष्मीबाई,' चिपलूणकर' और 'मधुसूदन दत्त' तो बहुत हृदयग्राही हैं।

आपके पता देने पर व्यास जी का 'बिहारी बिहार' हमने मंगाया, अब आया है, जैसा आपने लिखा था उसकी भूमिका ही अच्छी है, कुण्डलिया तो प्रायः चिपकाई ही गई हैं। मूल कविता का भाव अभिव्यक्त करने के स्थान में कुण्डलियाओं द्वारा अपना ही चर्खा अधिक गाया है, तथापि ग्रन्थ अच्छा और उपादेय है। इसका पता देने के लिए आपको बहुत २ धन्यवाद है।

यदि आपने डा० ग्रियर्सन की मुद्रित कराई सतसई देखी हो तो कृपया उसका पता और मूल्य लिखिए, उसकी भूमिका आदि तो अंग्रेजी में ही होगी पर उसमें "लालचन्द्रिका" टीका शुद्ध मिलेगी। हमारे पास लालचन्द्रिका अशुद्ध और अपूर्ण है।

'सतसई' का एक अनुवाद 'विद्वद्वृन्दशिरोमणि' 'विद्यावारिध' पं० ज्वाला प्रसाद ने अति ललित मधुर मुग्ध टीका से 'सर्वांगभूषित' किया है ! ! कहते हुए दुःख होता है कि ऐसा दुष्ट अनुवाद मेरे देखने में नहीं आया। ला० सीताराम ने भगवान् कालिदास के साथ ऐसा सलूक नहीं किया जैसा इन्होंने कविवर श्री बिहारी-लाल जी के साथ अन्याय किया है ! ! आश्चर्य यह है कि वह इनका स्वतन्त्र का नहीं है। 'लाल चन्द्रिका' को देखकर लिखा है पर उसे भी हजरत नहीं समझे। उस पर तुर्रा यह कि आप विद्वद्वृन्द शिरोमणि, और विद्यावारिधि का पुछल्ला लगाए बैठें हैं। अफसोस ऐसे आदमियों को कोई दण्ड देनेवाला भी नहीं रहा, ये लोग परलोकवासी कवि कुंज्जरोंकी कीर्ति पर धब्बा लगा रहे हैं, इन जैसों के आश्रय-दाता यन्त्रालयाधीशों को क्या कहा जाय, जो ऐसे भ्रष्ट पुस्तकों का प्रचार कर प्रश्रय के बदले पाप कमा रहे हैं ! इससे तो वही समय अच्छा था, जब यहां प्रेस का रिवाज

नहीं था, उस समय ऐसे दुष्ट पुस्तकों का सर्वसाधारण में प्रचार तो नहीं होता था।

यदि 'सरस्वती' के अतिरिक्त आप एक और मासिक या त्रैमासिक पत्र ऐसे पुस्तकों की आलोचनाओं के लिए निकालें तो अच्छा हो जिसमें प्राचीन काव्यों के दूषित अनुवादों की खबर ली जाया करे।

मध्यप्रदेश की पाठ्यपुस्तकों के विषय में तो आपने नोट लिखा है, पर हिन्दी भाषा की मातृभूमि अपने देश की पाठ्य पुस्तकों को भी आपने देखा है, जो अभी प्रचलित हुई हैं? देखिए किस प्रकार हिन्दी की सौत यह सरकारी बोली इस प्रान्त में प्रबल होती जाती है? हिन्दी का गला घोटने को उर्दू ही बहुत थी।

हिन्दी भाषा पर यह पोथी आपने कब लिखी है जिसका नोटिस 'सरस्वती' में है? पहली ही लिखी पड़ी थी या नवीन रचना है?

'बार्हस्पत्य' जी से आपने अच्छा लेख प्रारंभ कराया है, ऐसे लेखों की हिंदी में बड़ी जरूरत है। शंकर कवि भी आपके हाथ अच्छे लगे हैं, इनकी कविता और सरस्वती "साधारणोभूषणभूष्यभावः" वाली बात है।

सरस्वती दिनोदिन उन्नति कर रही है यह देखकर बड़ा हर्ष होता है, अब तो सरस्वती के स्वामी को घाटा भी न रहता होगा?

पद्मसिंह

(४७)

गुरुकुल कांगड़ी
"हरद्वार"
२९-११-०७

श्रीयुत मान्य महोदयेषु प्रणतयः

श्रीमान् का १८-११ वाला कृपापत्र हमें घर से वापस आया हुआ यहां मिला। उस हाथ की पीड़ा ने हमें यहां तक तंग किया कि उसके उपचारार्थ यहां के डाक्टर की शरण में आना पड़ा। कुछ कुछ आराम हो चला है। मानसिक परिश्रमाधिक्य से उत्पन्न आपकी पीड़ा का हाल सुनकर बड़ा दुःख हुआ। ऐसी दशा में काम कम ही करना चाहिए। 'सरस्वती' के पाठकों और हिंदी प्रेमियों का दुर्भाग्य!! यद्यपि काम थोड़ा करके भी 'सरस्वती' को तो आप अच्छी तरह चला सकते हैं पर अन्यान्य उत्तम पुस्तकें लिखकर जो हिन्दी साहित्य को आप अलंकृत कर रहे हैं, उसमें बाधा

पड़ने से हिंदी को कम हानि नहीं पहुँचेगी। बा० विश्वम्भर नाथ जी ने आप की मुलाकात का हाल मुझे लिखा था, बीमारी के कारण पत्र व्यवहार न कर सकने से जो आपने यह नतीजा निकाला था कि मैं आपको भूल गया, यह ठीक नहीं। मैं और आपको भूल सकता हूँ!!! यदि यह सम्भव हो "तदात्मानमपि विस्मरिक्ष्यामि"

"विद्यावारिधि" जी कृत सतसई टीका के नमूने मैं आपको दिखलाऊँगा जरा हाथ को आराम हो जाय। तब आप कहेंगे कि टीका हो तो ऐसी हो! !

यदि आपका "समालोचक" निकले तो मैं भी यथाशक्ति उसमें योग दूँगा।

यहां के गुरुकुल वाले चाहते हैं कि आपने जो अभी "अर्थशास्त्र" पर पुस्तक लिखी है, वह उन्हें दे दी जाय, यहां के पाठ्य पुस्तकों में उसे रखना चाहते हैं, उसके विषय में इतनी बातें जानना चाहते हैं—

(१) पुस्तक कितनी बड़ी है (२) किसी एक पुस्तक के आधार पर लिखी गई है वा बहुतों के या स्वतन्त्र रचना है, यदि पुस्तकों के आधार पर है तो उन पुस्तकों के नाम लिखिए।

'मिसफासिट' की जो इस विषय पर किताब है उससे कितनी बड़ी या छोटी है। उसे आप कितने रुपये लेकर दे देंगे।

मेरी सम्मति में आप वह किताब जरूर गुरुकुल को दे दीजिए। यहां उसकी जरूरत है। और आप उसे कहीं देंगे ही।

यहां के ब्रह्मचारी हरिश्चन्द्र यह मालूम करना चाहते हैं कि संस्कृत कवियों के बारे में अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, बंगला या हिंदी में जो पुस्तकें हों उनका पता आप दें। 'अर्थशास्त्र' का मैंन्यूस्क्रिप्ट भी यह देखना चाहते हैं, सो प्रथम उपर्युक्त वातों का उत्तर दे दीजिए, पीछे देखा जायगा। उत्तर आप मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल को दीजिए, या मेरे नाम लिखिए।

मैं आज लाहौर जाता हूँ, वहां से ३-१२ तक यहाँ आऊँगा और फिर दो एक दिन ठहरकर घर जाऊँगा।

कृपापात्र
पद्मसिंह

(४८)

नायकनगला
१६–१२–०७

श्रीमान्यवर पण्डित जी
प्रणाम

एक कार्ड में कई दिन हुए भेज चुका हूँ, पहुँचा होगा। "सम्पत्तिशास्त्र" यदि आप इन्डियन प्रेस को दे चुके तो खैर। गुरुकुल वाले चाहेंगे तो (छपने पर) वहीं से खरीद लेंगे।

'सरस्वती' का नवां वर्ष कुशल पूर्वक बीता, इसके लिए आपको बधाई है। 'सरस्वती' की नकल करनेवाली 'कमला' के हमने अभी हाल में ही दर्शन किये हैं, पर वह बात कहां! "कर्णौ सपत्न्यः प्रविशायेयुर्विशालयेदक्षियुगं न कापि"

अभी उस दिन गुरुकुल में ला० मुंशीराम जी प्राइवेट बातचीत में कहने लगे कि एक पत्र 'सरस्वती' जैसा सचित्र और सुन्दर हम गुरुकुल की ओर से भी निकालना चाहते हैं। इससे अनुमान हो सकता है कि 'सरस्वती' का रंगढंग लोगों को कैसा पसन्द है, निःसन्देह 'सरस्वती' ने हिन्दी साहित्य में एक नवीन जीवन का संचार कर दिया है।

लाहौर से वापस होते हुए हम अमृतसर उतरे थे, वहां दरबारसाहब पर पुलीस की चौकी में एक हीरासिंह सार्जन्ट ब्राह्मण, अंबाले का रहनेवाला है, मूँगरी फिराने के फन में वह अद्वितीय है। बड़े २ राजे महाराजे तथा अंग्रेज अफसरों के सार्टिफिकेट उसके पास हैं, जिस समय प्रिन्स आफ वेल्स वहां गये थे तो उनके सहचर किसी अंग्रेज ने उसका कर्तब देखकर एक सार्टिफिकेट दिया है, जिसमें हीरासिंह को उसने सैन्डो साहब का भी गुरू माना है, उस सार्टिफिकेट की नकल हमारे एक साथी सज्जन ने कर ली थी, जो आपके पास भेजता हूँ। यद्यपि वह उस दिन कुछ बीमार था, तथापि उसने ६ मन पक्के की मूँगरी हमारे सामने आसानी से उठा लीं। हमने उससे कहा था कि तुम अपना चित्र और चरित्र हमें दो तो एक पत्र में उसे दें। हमें इतना अवकाश नहीं था जो उसका चित्र और चरित्र लेकर आपके पास भेज सकते। यदि आपके परिचित कोई अमृतसर में हों तो उनके द्वारा मंगाकर इस इंडियन सैन्डो का हाल सरस्वती में दीजिए।

विद्यावारिधि जी की टीका की आलोचना मैंने लिखनी शुरू कर दी है। भूमिका आदि की आलोचना में ही २४-२५ पृष्ठ फुलीस्केप के भर गये हैं। आलोचना 'सरस्वती' के कई अंकों तक चलेगी। जितनी होती जाय उतनी ही भेजता जाऊँ या समाप्त कर के भेजूँ? नव वर्ष के लिए मंगल किरण स्वरूप मनोरंजक पद्य भेजता हूँ। यदि हो सके तो जनवरी ही में दीजिए।

(४९)

नागकनगला
२८-१२-०७

श्रीमत्सु परमश्रद्धास्पदेषु प्रणतयः

कृपापत्र मिला, 'सरस्वती' के लिए विज्ञप्ति भी मिली, यों तो यदि 'सरस्वती' का मूल्य १०) हो तो भी कम है पर हिन्दी पढ़नेवाले इस एक रुपये के बढ़ाने को अधिक ही समझेंगे, गालिब का एक शेर है—

"बोसा देते नहीं और दिल पै है हर वक्त निगाह,
जी में कहते हैं कि मुफ्त आए तो माल अच्छा है।"

'सरस्वती' के स्वामी वास्तव में बड़े प्रशंसार्ह हैं, जो बंगाली होकर भी हिन्दी के लिये इतना कुछ कर रहे हैं।

देखिये इस वर्ष कितने ग्राहक रहते हैं।

हिंदी के पत्रों का मात्सर्य तो प्रसिद्ध ही है, वे भला 'सरस्वती' के विषय में काहे को कुछ लिखने लगे हैं, बहुत से लोगों को उसकी नकल करने की तो सूझी है, पर यह किसी से नहीं होता कि उसके ही प्रचार में सहायता दें, जब भला 'सरस्वती' जैसी पत्रिका आपकी संपादकता और इन्डियन प्रेस की सहायता में ही यथेष्ट उन्नति नहीं कर सकी, तब फिर यह 'कमला' 'विमला' क्या खाक चलेंगी ? यदि मेरे अधीन कोई समाचार पत्र हो तो मैं 'सरस्वती' के विषय में एक लेख क्या हमेशा उसमें लिखा करूँ, सद्धर्म प्रचारक में तो इस विषय में मैं कुछ लिखना उचित नहीं समझता पर एक दूसरे पत्र के सम्पादक को लिखूँगा।

सतसई की समालोचना में मैं उन सब बातों पर ध्यान रखूँगा जो आपने लिखी हैं, मेरा विद्यावारिधि जी से कोई वैर नहीं, किसी प्रकार का द्वेष नहीं, परमात्मा साक्षी है, सतसई की दुर्गति पर मेरा दिल पसीज आया जिससे मैं कुछ लिखने लगा हूँ, नहीं तो कुछ जरूरत न थी। आप जानते हैं कि मैं कोई समालोचक तो हूँ नहीं और यह मेरा पहिला ही प्रयत्न है, इसलिए लेख में बहुत सी त्रुटियाँ रहेंगी, सो यदि, आपके दुरस्त कर देने पर वह 'सरस्वती' में देने योग्य हो जाय तो दें अन्यथा नहीं।

सतसई का वह उर्दू पद्यमय अनुवाद जिसकी समालोचना आपने एक बार 'सरस्वती' में की थी, यदि आपके पास हो तो अवश्य भेजने की कृपा कीजिए अन्यथा उसका पता दीजिए, कहाँ से मिल सकेगा।

मेरे एक मित्र आपका 'तरुणोपदेश' देखने के लिए बड़े उत्सुक हैं, वह इस विषय में मुझे कोई एक दर्जन पत्र लिख चुके हैं, क्या उनकी इच्छा पूर्ण हो सकती है ?

बार बार आपको कष्ट देते हुए लज्जा आती है, पर उनकी बढ़ी हुई जिद्द मजबूर कर रही है।

मेरे एक और सुहृद् पं० रलाराम जी काशी जाते हुए रास्ते में आपके दर्शनार्थ कानपुर उतरना चाहते हैं, उन्होंने मुझे लिखा है कि मैं इस विषय की सूचना आपको दे दूँ, वह ५ जनवरी से पहिले ही कानपुर पहुँचेंगे।

अमृतसर में हीरासिंह का चित्र और चरित्र प्राप्त करने के लिए मैं एक अपने वाकिफ विद्यार्थी को लिखता हूँ, शायद वह भेज सके।

कृपापात्र
पद्मसिंह

(५०)

ओम्

नायकनगला
६–१–०८

श्रीयुत मान्य महोदयेषु

प्रणतय:

३१–१२ का कृपापत्र मिला। आशा है पं० रलाराम जी आपसे मिले होंगे।

ऐसे आदमी के लिए भला मैं क्यों सिफारिश करने लगा जो पुस्तक हजम कर जाय।

'सोमलता' वाला लेख जरूर 'सरस्वती' में निकलना चाहिए, इस बेचारी को तो आजकल लोग सर्वथा भूल ही गये, वैदिक जमाने में इसकी बड़ी कद्र थी, बहुत दिन हुए इटावे में पं० भीमसेन जी ने एक मारवाड़ी सेठ की सहायता से अग्निष्ठ्ले यज्ञ रचा था, तब हमने इसके दर्शन किये थे। रीवां की रियासत में कोई पहाड़ है वह वहाँ से मंगाई गई थी, सुना है वहाँ बहुत होती है।

जालन्धर छावनी में एक महाशय लाला देवीदयाल हैं। उन्होंने उर्दू में 'सब्जी तरकारी', 'फूल', 'दरख्त', 'घास चारा' आदि कई किताबें लिखी हैं, इन्हीं किताबों में किसी एक में (नाम याद नहीं रहा) एक लेख मोमलता पर भी है, जो बहुत ही अन्वेषण से लिखा गया है, यदि आप अपने लेख को और पल्लवित करना चाहें तो उसे भी देख लीजिए।

'उर्दू सतसई' के कुछ पद्यों की आलोचना 'सरस्वती' के किस वर्ष में निकली थी। यदि फाइल से इसका पता चल जाय तो कृपया लिखिए। सन् ०५ से अवतक का फाइल तो मेरे पास है।

'परपवादशंकिता' के उदाहरण में (जगद्विनोद में) पद्माकर का एक बहुत ही सरस कवित्त है, उसके कुछ पदों का अर्थ और भाव हमारी समझ में नहीं आया। यथा—

"मोहिं लखि सोवत बिथोरिगो सुबेनी बनी तोरिगो हियै को हरा छोरिगो **सुगैयो** को,
कहै पद्माकर त्यों घोरिगो घनेरो दुख बोरिगो **बिसासी** आज लाज ही की नैया को।
अहित **अनैसो** ऐसो कौन उपहास यहै सोचत खरी मैं परी **जोवत** जुन्हैया को,
बूझैंगे चवैया तब कैहों कहा दैया इत पारिगो को मैया मेरी सेज पै कन्हैया को॥"

इसके रेखांकित पदों का अर्थ लिखिए।

भाषा का एक महावरा है—

"इसमें आपका क्या **निहोरा** है।"

इसका क्या अर्थ है! यही न कि इसमें आपका अहसान है? या 'मैं तुम्हारे निहोर करता हूँ' अर्थात् खुशामद करता हूं।' या कुछ और!

बिहारी का एक दोहा है—

"अपनी गरजनि बोलियत कहा निहोरो तोहि।
तू प्यारा मो जीय को मो जिय प्यारा मोहि॥"

यह कलहान्तरिता की उक्ति (रोष की शान्ति तथा औत्सुक्य भावोदय पर) है, यहां 'कहा निहोरो तोहिं' का क्या अर्थ है?' तुम्हारा कुछ अहसान नहीं।' यह तो यहां ठीक नहीं।' तुम पर कुछ अहसान नहीं' या तुम्हारी (ओर से) खुशामद की जरूरत नहीं' इनमें से कोई अर्थ यहाँ हो सकता है?

बिहारी का एक और दोहा है—

"कहा **लड़ैते** दृग करे परे लाल बेहाल।
कहुं मुरली कहुं पीतपट कहूं मुकुट बनमाल॥"

यह कृष्ण की विरहदशा का वर्णन सखी नायिका से कर रही है।

इसमें जो लड़ैते पद है इसे नेत्रों का विशेषण मान कर ही लल्लूलाल तथा हरिचरणदास ने 'लाड़ले' अर्थ किया है। अर्थात् तैंने अपने नेत्र कैसे लाड़ले किये हैं जो श्रीकृष्ण अचेत पड़े हैं।.........इसमें उन्होंने व्याजस्तुति अलंकार माना है। पर नेत्रों का 'लाड़ले' होना कृष्ण के अचेत होने में साधक है न बाधक। इसलिए यदि यहां 'लड़ैते'' का अर्थ लड़ैत-लड़ने वाले किया जाय तो कैसा?

अर्थात् तैंने अपने नेत्र कैसे लड़नेवाले किये हैं (जिनकी चोट खाकर) कृष्ण अचेत पड़े हैं। इत्यादि,

कृष्ण का अचेत होना आदि नेत्रों के लड़ैते होने का समर्थक है, इसलिए यह अर्थान्तरन्यासालंकार भी हो सकता है। आपकी इसमें क्या राय है? ऐसा करने से द्दाषाच्युत तो न हो जायगा? हिंदी में तो ऐसे शब्द आते हैं—जैसे, 'वह बड़ा लड़ैत है, वह लठैत है। आंखों का लड़ना भी प्रसिद्ध है, मोमिन का एक शेर है—

"दिल गया दम पर बनी **आंखें लड़ी** कहती हैं हाल।
बेकरारी आहो जारी अश्क बारी आपकी।।"

मनोरंजक श्लोक

भो हेरम्ब। किम्ब! रोदिषि कथं? कर्णालुठत्यग्नि भूः।
किन्ते स्कन्द! विचेष्टितं! मम पुरा संख्या कृता चक्षुषाम्।।
नैतत्तेप्युचितं गजास्य चरितं नासां मिभीतेऽ म्ब! मे।
मा मामेतिसुतौ विलोक्य हसती पाया द पाया द्दुमा।।

कवित्त

एक रदन! 'केहिकारन रुदन, षटवदन करन मेरो ऐंठ ऐंठ देत है।
क्यों रे महासेन! तोहि ऐसो-हिउचित अंब अंगुलि से बार२ नैन गिन लेत है।
क्यों रे वक्रतुंड़! तोहि ऐसोहि स्वभाव, अंब इसे मेरी नाक मामने से हौन हेत है।
मतमत कर जो हंसी है सम दृष्टि लिये **भैरव** सहाय सो तो शंकर समेत है"

पद्मसिंह शर्मा

(५१)

ओम्

रिप्लाइड | नायकनगला
२३।१।०८ | १८–१–०८

श्री मान्यवर महोदयेषु प्रणामाः

९–१ का कृपापत्र आज रात्रि के ८ बजे मिला है, डाकघर से दूर गांव में रहने की यह सजा है।

पं० रलाराम का पत्र भी अभी आपके पत्र के साथ मिला है, वह किसी अनिवार्य कारण से रुक गये, अब दस बारह दिन में शायद जायं।

"ला० देवीदयालु मुन्सिफ' दरख्त 'फलफूल' आदि, जालन्धर छावनी; यह उनका पता है, उन्हें अंग्रेजी में पत्र लिखिए, अथवा मैनेजर 'इम्पीरियल बुकडिपो चांदनी चौक, देहली को लिखिए, उनकी सब किताबें वहीं मिलती हैं। पत्र में सोमलता का उल्लेख कर दीजिए, उससे किताब का पता चल जायगा। किताब का नाम मुझे विस्मृत हो गया।

पं० भीमसेन जी तो उस सोमलता को असली बतलाते थे, उसे बा० ब्रह्मा नन्द जी (जो इस समय कांगड़ी गुरुकुल में हैं) अपने किसी मित्र की सहायता से (जो कि रियासत रीवां में एक उच्च पद पर थे) लाये थे। उसके विषय में आप पं० भीमसेन जी या बा० ब्रह्मानन्द जी से पूछ सकते हैं।

'उर्दू सतसई' का पता मैंने अपने एक मित्र के पास 'सरस्वती' के फाइल में ढूंढ़ कर पा लिया था, आपने लिखा तदर्थ धन्यवाद। मालूम होता है वह अभी छपी नहीं, अन्यथा पत्रों में उसकी आलोचना निकलती। पद्माकर के पद्य के अर्थ के लिए धन्यवाद। पर "सोचत खरी मैं परी जोवत जुन्हैया को" में "चन्द को देखते हुए" से क्या अभिप्राय? क्या यह "परी जोवत जुन्हैया को" पद सिर्फ शब्दालंकार के लिए ही रखा गया है?

हर्ष की बात है कि 'निहोरा' और 'लड़ैते' के अर्थ के विषय में आपकी और हमारी राय मिल गई, जब आपने पुष्टि कर दी तब तो हम जरूर वही अर्थ करेंगे।

रविवर्मा आदि के चित्र पुस्तकाकार अवश्य छपाइए। उस पुस्तक के साथ मेरा भी नाम रह जाय। भला यह मेरा भाग्य कहां? जी तो चाहता है कि आपके कदमों में मैं भी लिपटा पड़ा रहूं, पर यह हो कैसे? "तेरा दरबार शाहाना मेरी सूरत फकीराना।"

कविता तो क्या मैं तो साधारण तुकबन्दी भी नहीं करना जानता, यदि गद्य का मामला होता तो खैर टूटी फूटी कुछ इबारत लिख भी देता।

हीरासिंह के चित्र और चरित्र के लिए मैंने अमृतसर एक विद्यार्थी को लिखा था, उसका उत्तर आया था कि हीरासिंह ने अपना फोटो खिचवा कर शीघ्र देने का वादा किया है। मैंने आज एक और लम्बा पत्र उस विद्यार्थी को लिखा है कि यथाशक्ति शीघ्र भेजो। दूसरा पत्र मैं शायद आपको कांगड़ी से या अजमेर से लिख सकूँगा। वहां जाने का कारण भी उसी पत्र में लिखूँगा।

कृपापात्र
पद्मसिंह

(५२)

ओम्

अजमेर
२१–५–०८

श्रीमन्मान्य महोदय !

प्रणमामि

९–५ का कृपापत्र यथासमय मिल गया था, इस बीच में फुरसत नहीं रही, इसलिए पत्र न लिख सका क्षमा कीजिए।

'अनाथरक्षक' सम्पादक इस्तीफा देकर चले गये, उसका सम्पादन भार भी कुछ दिनों के लिए, अनाथालय कमेटी ने मुझ पर डाल दिया, इस कारण काम और बढ़ गया।

आर्यमित्र का वह पर्चा तलाश करने पर भी हाथ नहीं आया, उसमें कुछ उत्तरणीय बात न थी, व्यर्थ की बकवास थी।

अब की 'सरस्वती' में 'सोमलता' पर अच्छा लेख है, उसमें 'वितस्ता' का अर्थ व्यास जो किया गया है, यह ठीक नहीं, वितस्ता झेलम को कहते हैं, व्यास का नाम विपाट् या विपाशा है, सोम की कुछ बातों पर और 'पंचपुकार' पर शायद कुछ महाशय चीं चीं करें।

बा० हरिश्चन्द्र की वह कविता पसन्द न होने पर भी निकाल ही दीजिए। विद्यार्थियों की हिम्मत बढ़ानी चाहिए, यह शुभ लक्षण है कि गुरुकुल के ब्रह्मचारियों में भी राष्ट्रीयता के कुछ चिह्न दीखने लगे। उस कविता के साथ वह अपना नाम देना नहीं चाहते और 'बाल ब्रह्मचारी' यह भी उन्हें पसन्द नहीं, इसलिए किसी अन्य कल्पित नाम से उसे निकाल दीजिए।

उक्त ब्रह्मचारी के छोटे भाई ने गत शिवाजी जयन्ती पर एक कविता लिखी थी, वह भी आपके पास भेजने को मेरे पास आई है, सो भेजता हूं, नाम वह भी देना नहीं चाहते, इसे भी कल्पित नाम से दीजिए, इसके लिए भी सख्त तकाजा है, जहां तक हो सके अवश्य 'सरस्वती' में दे दीजिए।

अब आपका स्वास्थ्य कैसा है ?

क्या पं० गौरीदत्त जी अब यहां न आएंगे ?

इधर गर्मी गजब ढा रही है, यहां पर मौसम बुरा होता है, आपका इरादा कहीं बाहर जाने का तो नहीं है, जैसा उस समय विचार था कि मई जून में विजनौर की ओर जायंगे।

भवत्कृपापात्र
पद्मसिंह

(५३)

ओम्

अजमेर
१४–८–०८

श्रीयुत मान्यवर पण्डित जी

प्रणाम

दोनों कृपाकार्ड यथासमय मिल गये। सम्भव है शंकर जी ने पहिले चित्रों पर कविता न लिखी हो पर ऊर्मिला के विषय में ऐसा नहीं हो सका, उस पर उन्हें लिखनी पड़ेगी, लिखें और फिर लिखें, इसके लिये मैं प्रतिभू वनता हूँ। उन्होंने पक्का वादा किया है। रामलीला के अवसर विजयदशमी तक वह कविता चित्र सहित अवश्य निकलनी चाहिए। यदि शंकर जी का आग्रह चित्र के लिये हो तो वह चित्र बनवा दीजिए। ऐसा नहीं हो सकता कि. . .न लिखें, जबतक वह कविता न लिख देंगे. . .मैं उनका पिंड नहीं छोड़ूँगा, बराबर पत्र लिखता रहूँगा। आशा है, अब आपको विश्वास हो गया होगा कि कविता जरूर लिखी जायगी।

बि० एन की बढ़ी हुए गुस्ताखियों और बेहूदा बकवासों से तंग आकर उसकी गोशमाली करनी पड़ी, पर लेख पढ़कर आर्यन कैम्प में खलबली सी पड़ गई है, बहुत से चोर अपनी डाढ़ियों में तिनके टटोलने लगे हैं, कोई कहता है कि सिद्धान्तों का खून कर डाला। और कोई फर्माता है कि सभ्यता की नानी मर गई, अस्तु, बहुतों ने इस कारवाई को उचित भी बतलाया है, एक ज्यूरी के अनुकूल होने पर मिस्टर तिलक को सन्तोष था, इसलिए हमें भी है। आपका अनुमान सत्य

ही निकला, बि० एन को बेशक बुखार आ गया। उसने अपने एक 'समानशील व्यसन' को चिट्ठी लिखी है कि आजकल हमारी तबीयत खराब है, बुखार है, यह भी लिखा है कि परोपकारी का मैं अब कुछ भी उत्तर नहीं दूँगा, हाँ, वेदार्थ और नाटक के विषय को आर्य पबलिक के सामने पूर्ण तौर से रक्खूँगा। परोपकारिणी सभा के मन्त्री महाराज शाहपुराधीश और लाला मुन्शीराम जी से उसने अपील की है। सभा के अगले इजलास में वह इस मामले को पेश कराना चाहते है, परोपकारी का पूर्व संपादक न था वैदिक प्रेस का धूर्तराज मैनेजर उसे इस काम के लिए उभार रहा है, देखिए इस हलचल का क्या परिणाम होता है।

हां, बि० एन० के लिए ज्वरघ्न रामबाण औषध लेने, आपका पत्र लेकर हम पं० रामदयालु जी राजवैद्य के पास गये थे, यह सुनकर हँसने लगे, उन्हें बि० एन० पर दया न आई, वैद्य जो ठहरे!

जुलाई और अगस्त की 'सरस्वती' परोपकारी के बदले में मिली है, इस अनुग्रह के लिए अनेक धन्यवाद।

आज वर्षाविषयक ४–५ बिहारी के दोहे, ६ बिम्ब प्रतिबिम्बवाले पद्य, और दस वर्षाविषयक फुटकर संस्कृत पद्य श्री सेवा में भेजता हूं। अब के बिम्ब प्र० वाले पद्यों में एक बड़े मजे का है। विशेषच्युत पर एक और भाषा कविता मिली है, इसे भी अवश्य दीजिए। बिम्ब प्र० वाले पद्य दो-चार प्रति बार दया कीजिए तो अच्छा हो, यह सिलसिला वर्षों चल सकता है।

ये जो वर्षाविषयक १० संस्कृत पद्य हैं, इन्हें अगली संख्या में अवश्य निकाल दीजिये, सैकड़ों में से इन्तखाब करके लिखे हैं। इसी मौसम में आनन्द देंगे, फिर यातया हो जायंगे तो किस कामके। प्रत्येक ऋतु में उस ऋतु की सूक्तियों से पूरित 'सरस्वती' की एक संख्या निकलनी ही चाहिए, खैर और जो होगा हो, उन पद्यों को प्रकाशित करने की जरूर कृपा कीजिए। नीचे के दो पद्य जल्दी में बिना भाषा किये ही छोड़ दिये हैं। कृपया इनको ठीक कर दीजिए।

सतसई संहार को मैं अब अधिक नहीं बढ़ाऊँगा। जितना लिखा जा चुका है, उसे साफ करके और दो चार दोहों पर और लिखकर भेज दूँगा। पर यह काम जब हो सकेगा जब आप उसे निकालना शुरू कर देंगे।

मेरी और अन्य दो तीन महाशयों की सम्मति है कि शंकर जी की कविता का संग्रह छपवाया जाय, इस विषय में शंकर जी ने अनुमति दे दी है। 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई उनकी कविताओं को उद्धृत करने की आप आज्ञा दे सकते हैं? 'सरस्वती' का और आपका शुक्रिया भूमिका में अदा कर दिया जायगा।

सोलंकियों के इतिहास के लेखक प्रसिद्ध पं० गौरीशंकर जी ओझा आजकल यहीं हैं। इनका चित्र और चरित्र 'सरस्वती' में छपने लायक हैं। अद्‌भुत पुरुष रत्न हैं। मैं उनका चित्र और चरित्र 'सरस्वती' के लिये प्राप्त करने की चेष्टा करूँगा, ठीक होगा?

इस बार का मनोरंजक श्लोक तीन जगह अशुद्ध हो गया, संशोधक को इसकी ताकीद कर दीजिए, श्लोक बिलकुल शुद्ध छपने चाहिए, थोड़ा संस्कृत पढ़े पाठक अशुद्ध याद कर सकते हैं।

परोपकारी की समालोचना के लिए बहुत बहुत धन्यवाद।

कृपापात्र
पद्मसिंह श०

(५४)

ओम्

रिप्लाइड
२७।८।०८

अजमेर
२३-८-०८

श्रीयुत मान्यवर पण्डित जी

प्रणाम

१६-८-०८ का कृपापत्र मिला। मैंने शंकर जी को कल फिर कविता के लिये लिखा है, आशा तो है कि वह कविता लिख देंगे, "हिजड़ों की मजलिस" के छापने में पशोपेश क्यों है? हाँ, गिरिधर जी का विद्याभास्कर निकलता है कि अस्त हो गया। कई महीनें से दर्शन नहीं हुए। इतना लिख चुके थे कि शंकर जी की कविता 'हिजड़ों की मजलिस' हमारे पास आई। एक पत्र भी मिला, उनके नाम (लौटाते समय का) आपका कार्ड भी। वह उसे परोपकारी में छापने की आज्ञा देते हैं, में आपसे निज के तौर पर पूछता हूं कि 'सरस्वती' में इसके प्रकाशित न होने का मूल कारण क्या है? कविता गत दोष, राजनैतिक दशा अथवा मत संबंधी विचार या कोई और खास बात? कृपया स्पष्ट लिखिए, जिससे मुझे उसके विचार करनें में सुभीता हो। मैंने अभी उसे अच्छी तरह पढ़ा नहीं है। यदि यह कविता परोपकारी में भी न छपी तो वह जरूर आपसे और मुझसे नाराज हो जायंगे। मेरे लिए एक और मुश्किल है, छापने से पहिले पत्र के अधिष्ठाता से मंजूरी लेनी पड़ती है, जब आपने ही उसे प्रकाशित न किया तो यहां से इजाजत मिलना कठिन ही है। अस्तु।

बि० एन और भक्तराम की बात मैंने साधारणतया लिखी थी, डरने या घबराने की कोई बात नहीं, मैं ऐसी बात की परवाह नहीं किया करता।

आपका सचित्र "कविताकलाप" कब तक निकलेगा? शंकर जी का एक चित्र 'सरस्वती' में निकाल दीजिए न, आपने वह सिलसिला बंद ही कर दिया।

उन वर्षा-विषयक श्लोकों की भाषा ठीक कर दीजिए। १२ समानार्थक पद्य और भेजता हूँ, पहुँच लिखिए। अफसोस है कि बाणभट्ट से हम कुछ काम न ले सके, एक महाशय ने हमें मराठी पढ़ाने का वादा किया था, सो वह कहीं बाहर चले गये अस्तु आप उसका मर्मांश 'सरस्वती' में दीजिए तो अच्छा हो, उसमें से कुछ संस्कृत पद्य उद्धृत करके हम उसे १०-५ दिन में लौटा देंगे।

आप सदा मेरी प्रार्थनाओं पर ध्यान देते रहे हैं, इसके लिए मैं अपने को धन्य समझता हूँ और आपको धन्यवाद देता हूँ, पर सतसई की आलोचना एक साथ पूरी न भेजने में प्रधान कारण अनवकाश ही है, अन्यथा आपकी आज्ञा का पालन कभी का हो गया होता।

देखिए, कब अवकाश मिले, और उसके प्रकाशित होने की नौबत आवे, आप भी मजबूर और मैं भी, भवतु।

अब आपको नींद तो अच्छी तरह आती है? और तो सब कुशल है? शंकर जी ने लिखा है कि उर्मिला पर कविता लिख रहे हैं।[1]

कृपापात्र
पद्मसिंह

(५५)

ओम्

अजमेर
१०—९—०८

मान्यवर पण्डित जी महाराज

प्रणाम

२७—८—०८ का कृपापत्र यथासमय मिला, अनवकाश और चिंता स्वास्थ्य के कारण आज उत्तर देने बैठा हूँ।

ऐसी दशा में अच्छा ही किया जो 'हिजड़ों की मजलिस' न छापी, बेशक जमाना

---

१. स्थान न रहने के कारण पत्र के शीर्षस्थ पर।

नाजुक है। यहाँ परोपकारी के कर्त्तार उसके प्रकाशन की आज्ञा न देंगे, लाचार लौटाना ही पड़ेगा, हिजड़ों का नसीब।

कविताकलाप के कुछ चित्रों पर बा० मैथिलीशरण जी से कविता लिखाइए, उनकी कविता अब खूब अच्छी होने लगी है, कुछ स्वयं लिखिए, दो एक पर शंकर जी भी लिख ही देंगे। और यदि चित्रभावानुसार कोई प्राचीन हिन्दी या संस्कृत की कविता मिल सके तो उससे भी काम चला लेना चाहिए, इस प्रकार कविता-कलाप का संकलन हो सकता है।

पर जहां तक हो शीघ्र निकालिए। शंकर जी को फोटो के लिये मैंने भी लिखा है, अभी उत्तर नहीं दिया, हाँ, कृपया बा० मैथिलीशरण जी को लिख दीजिए कि वह अपना एक फोटो हमें भेज दें, हमें उनका पता याद नहीं रहा, और कदाचित वह हमारी बात पर ध्यान न दें, इसलिए आप ही लिख दीजिए, भूलिए नहीं।

बहुत अच्छा, जो आज्ञा, अब कुछ दिनों के लिए समानार्थक पद्य लिखना बन्द करता हूं, सतसई समालोचना पूरा करने का प्रयत्न करूंगा।

आपके निद्रानाश रोग की औषध पं० रामदयालु जी वैद्य से लेकर दस पांच दिन में भेजूँगा, तयार हो रही है, उसे भी सेवन कर देखिए, शायद फायदा करे, तारीफ तो बहुत करते हैं।

जो आदमी आपकी आज्ञा का पालन न करे आपके पत्र का उत्तर तक न दे, वह 'मेरा' नहीं हो सकता, केशवदेव शास्त्री को आपने क्या लिखा था ? वह आजकल कहाँ हैं, कलकत्ता या कहीं और ?

'सरस्वती' में 'डाकेजनी' वाला नोट पढ़कर बड़ी हँसी आई। 'आंख मिचौनी' वाला चित्र बड़ा भव्य है, कविता भी अच्छी है, अबके एक साथ ही वेदों को और आर्यों को ले डाला। एक को तो बाकी रहने दिया होता। इन्हें पढ़कर कुछ आर्य सामाजिकों में बड़ी ले दे पड़ेगी। एक तमाशा नजर आयगा

"पार से छेड़ चली नाय असद,
गर नहीं वास्ल तो हसरत ही सही"

"न नटा न विटान गायना"...श्लोक में 'कुचभारोन्नमिता' की जगह 'कुचभारानमिता' चाहिए था, भार से 'आनमन' होता है, 'उन्नमन' नहीं। कालिदास ने भी लिखा है"—आवर्जिता स्तोकमिव स्तनाभ्याम्"। अस्तु

इस अनन्य कृपा के लिए धन्यवाद।

'सरस्वती' में परोपकारी की आलोचना करके आपने हमारा काम बढ़ा दिया, नमूनों की धड़ाधड़ मांग आ रही है। हाँ, हाल के 'आर्यमित्र' में बि० एन० जी फिर बड़बड़ाए और गिड़गिड़ाए हैं, महाराज शाहपुराधीश से बड़े आर्त्त स्वर से अपील की है। शेष फिर।

कृपापात्र

पद्मसिंह

(५६)

ओम्

अजमेर

१६–९–०८

श्रीमत्सु सादरं प्रणतयः

१२–० का कृपापत्र मिला। श्री बा० मैथिलीशरण जी का कृपाकार्ड भी आज मिला। उन्होंने दो चार दिन में आपका फोटो भेजने का वादा किया है। हमने उनका भी एक फोटो मांगा है।

शंकर जी का भी पत्र आया है, लिखते हैं "...उर्मिला पर कविता लिख रहा हूँ। अलीगढ़ में कोई अच्छा फोटोग्राफर नहीं है, तो भी आपकी और द्विवेदी जी की आज्ञा का पालन होगा। आगरे जाकर तसवीर खिचवाने का विचार है। नवम्बर के अंक में जा सकेगी। उर्मिला वाली कविता कार्त्तिक में निकल सकेगी, द्विवेदी जी के चित्रों पर भी लिखूँगा..."

रसिकमित्र में कविता भेजने पर भी मैंने उनसे जवाब तलब किया है। देखें क्या कहते हैं, निद्रा रोग की औषध तयार हो गई है, वैद्य जी के कम्पाउण्डर ला० हरिश्चन्द्र अपने किसी कार्यवश, कानपुर होकर कालपी जानेवाले हैं, अभी ८-१० दिन में उनका उधर आने का विचार है, इसलिये उनके द्वारा औषध भेजी जायगी। यदि उनके आने में विलम्ब हुआ तो पार्सल से भेज दूँगा। यदि यह दवा आपको अनुकूल पड़ी, कुछ फायदा हुआ, तो हम ही आपके अनुग्रहीत और कृतज्ञ होंगे।

"कुचभारोन्नमिता" पर मैंने दोष दृष्टि या नुकताचीनी के ख्याल से नहीं लिखा था, किन्तु 'सरस्वती' में किसी पद पर पाठ भेद देखकर मुझे स्वयं सन्देह हो जाया करता है, कि कौन सा पाठ ठीक है, इसीलिए मैं आपको लिखने की धृष्टता कर बैठता हूँ। अन्यथा मैं और आपकी त्रुटियां निकालूं? शिव! शिव!

'सरस्वती' में 'वेद और आर्य-पर लेख पढ़कर बहुत से श्रद्धालु आर्य विचलित हुए हैं, इस विषय में बाहर से कई पत्र यहाँ भी आये हैं, नमूने के लिये एक कार्ड भेजता हूं, लेखक की बदहवासी और घबराहट का इसी से अनुमान कर सकते हैं कि बेचारा अपना नाम लिखना तक भूल गया है।

बि० एन० जी ने एक अपील आर्यमित्र में छपाई है, लिखा है कि "मुझे दोगला (?) जनूनी, मच्छर, जुगनू इत्यादि लिखा है, बापदादा तक गालियां दी हैं। नाटक और वेदार्थ छापकर सिद्धान्त विरुद्ध कारवाई की है, और यह सब कुछ परोपकारिणी के मुखपत्र में हुआ है, इसलिए इसकी उत्तरदायिता सभा पर है, महाराजा शाहपुराधीश को ध्यान देना चाहिए," इत्यादि बहुतया असम्बद्ध प्रलाप किया है, सभा के इजलास में (जो २४–२५–१० को होगा) यह विषय पेश करने की भी प्रार्थना की है, एक दरख्वास्त भेजी है, अस्तु, उसके उत्तर में एक लेख आर्यमित्र में भेजूँगा।

पं० गौरीदत्त जी वाजपेयी अब कहाँ हैं? जाड़े का बुखार का आजकल खूब जोर है, जरा सावधान रहिएगा।

कृपापात्र
पद्मसिंह श०

(५७)

ओम्

अजमेर
२२–९–०८

मान्यवर पण्डित जी महाराज

प्रणाम

कृपापत्र मिला। निद्रानाश की दो औषध ला० हरिश्चन्द जी के हाथ भेजी है। आज आशा है आपको मिली होगी। उनका सेवन करके लिखिए, जो अनुकूल पड़े वही जितनी कहिए यहाँ से भेज दी जायगी। बाणभट्ट भी भेजा है। 'भर्तृहरि-निर्वेद' नाटक पं० गणपति शर्मा भरतपुर ले गये हैं, उन्हें पत्र लिखा है, आ जाने पर यदि उसमें गोपीचन्द चित्र के अनुकूल कुछ मिला तो शंकर जी को लिख भेजूँगा। आज शंकर जी का पत्र आया है, अपना चित्र और चित्रों पर कविता यह सब अक्टोबर में आपके पास भेजने को लिखते हैं, गनीमत है। 'सरस्वती' के 'वेद' और 'आर्य' के लेखों ने आर्यों में खलबली डाल दी है। ८–१० चिट्ठियां मेरे पास आ

चुकी हैं। 'आर्यमित्र' आप पढ़ चुके। मैं भेजने ही को था। प्रचारक में भी एक नोट निकला है। आ० समाचार के आफिस से मंगाकर पढ़ लीजिए। अस्तु, इस विषय में फिर लिखूँगा। अपना कुशल समाचार लिखिए, निद्रानाश से चिन्ता है।

मि० गौरीशंकर वर्मा, बी० ए०, बार-एट-ला, अजमेर के नाम 'सरस्वती' जारी करा दीजिए। प्रेस को लिख दीजिए। वी० पी० भेज दें, शीघ्र।

पद्मसिंह श०

(५८)

ओम्

रिप्लाइड अजमेर

३०–९–०८ २८–९–०८

मान्यवर पण्डित जी महाराज

प्रणाम

कृपाकार्ड मिला, निद्रानाश के समाचार ने दुख दिया। अच्छा, जलचिकित्सा ही कीजिए, यह रोग बुरा पीछे पड़ा, न जाने कबतक दिक करेगा।

प्रचारक में कोई सारगर्भित बात नहीं थी, सिर्फ 'सरस्वती' के लेखों का जिक्र करके आर्य प्रतिनिधि सभा से 'सरस्वती' के मुकाबिले का पत्र निकालने की अपील की थी।

हां, हाल के आर्यमित्र में हजरत बि० एन०, खूब बके हैं, भेजता हूं देखिए। एक नोट में इसकी खबर ले दीजिए, दुष्ट की धूर्तता तो देखिए, संस्कृत में टांग अड़ाता है।

समालोचना पढ़कर इसे शुद्ध नाम तो लिखना आ गया है, पहले बि० एन० लिखा करता था "अहमद की पगड़ी महमूद के सिर पर" वाली बात कैसी बेमौके लिखी है, सारा लेख ही प्रलाप मात्र है, इसे देखकर बुद्धू आर्य लोग वज्द में आ जायंगे।

विचित्र लीला है।

हमें तो ऐसी ऐसी बातें देखकर इस समाज से घृणा सी हो गई है।

कृपापात्र

पद्मसिंह

(५९)

ओम्

रिप्लाइड
५-१०-०८

अजमेर
३-१०-०८

पण्डित जी महाराज

लीजिए १-१०-०८ का आ० मित्र भी पढ़िए, सरस्वती के विषय में एक पैरा और दो लेख हैं, अब तो उत्तर देना ही चाहिए, वेद विख्यात जी का पूरा पता देना चाहिए। पं० रामचन्द्र शर्मा ने बि० एन० का उत्तर लिख दिया है। कल परसों में भेजेंगे, एक कापी आपके पास भी भेजी जायगी। कल लिफाफा भेजा है। शेष वृत्तांत उससे मालूम होगा।

बा० मैथिलीशरण जी ने आपके फोटो की दो कापी भेजी है। धन्यवाद।

भवदीय
पद्मसिंह

(६०)

ओम्

अजमेर
९-१०-०८

मान्यवर पण्डित जी !

प्रणाम

पत्र और कार्ड यथासमय मिले, कई दिन से मेरी आंख में पीड़ा थी अब भी कुछ है इसलिए उत्तर में विलम्ब हुआ। विस्तृत उत्तर फिर लिखूंगा। लोगों के पत्र-व्यवहार और प्रेरणा से तंग आकर परोपकारी में एक नोट हमें लिखना पड़ा, मजबूरी थी, क्षमा कीजिए। बेशक गलती की, बी० एन० के प्रलाप की कटिंग आपके पास व्यर्थ भेजी। अब न भेजूंगा। पं० रामचन्द्र जी के परिवार के लोग इस बीच में बीमार हो गये थे इसलिए वह लेख पूरा न कर सके। अब २-३ दिन में लिखेंगे। यदि आ० मित्र ने वह लेख न छापा तो कहां भेजें। कुशल लिखिए।

अनुगत
पद्मसिंह

(६१)

ओम्

अजमेर
१४-१०-०८

मान्यवर पण्डित जी महाराज !

प्रणाम

११-१० का कृपा कार्ड अभी मिला। एक लिफाफा मैंने कल भेजा है, पहुंचेगा। उसी में बी० एन० के अपील की कटिंग भी भेजी है।

हिस्ट्री के लिए आज फिर मथुरा को लिखा है। बी० एन० की किताबें भी वहीं से मंगाई है। आने पर फौरन भेज दूंगा। १६ जून का आ० मित्र खो गया उसकी कापी और बाबूराम की किताब आगरे से मंगाई है, आने पर भेजूंगा। अभियोक्ताओं को खूब और जरूर सजा मिलनी चाहिए। इसके लिए जो मेरी सेवा दरकार हो निःशंक आज्ञा देते रहिए, मैं तैयार हूं।

रात और आज प्रातःकाल महाराजा शाहपुराधीश से भेंट हुई। उन्होंने परोपकारी जारी रखने की आज्ञा दे दी है। मैनेजर प्रेस ने तो बहुत कोशिश की कि यह बन्द हो जाय, पर उसकी एक न चली। तथापि मेरा मन यहां से खिन्न है, इसलिए थोड़े दिन ठहर कर इसे छोड़ने का पक्का इरादा है।

कुशल लिखिए।

फाल्गुन का परोपकारी भेजता हूं।

कृपापात्र
पद्मसिंह

(६२)

ओम्

रिप्लाइड
१८–१०–०८

अजमेर
१६–१०–०८

पण्डित जी महाराज

प्रणाम

मैंने गलती से फाल्गुन के परोपकारी की जगह आषाढ़ का भेज दिया। यह भूल कल मालूम हुई आज फाल्गुन का अंक भेजता हूं।

मथुरा और आगरे से अभी उत्तर नहीं आया। आया ही चाहता है।

आज हमें एक और महापुरुष के दर्शन हुए। आपका नाम है दीनदयालु चौबे, किसी समय आप वेंकटेश्वर के संपादक थे। आजकल रावलपिंडी में किसी दफ्तर में क्लर्क हैं। बातों बातों में आप फरमाने लगे कि नाथूराम शंकर की कविता कुछ नहीं होती। 'सरस्वती' के संपादक कुछ नहीं जानते। हम हिंदी के बहुत पुराने लेखक हैं इत्यादि। मैंने कारण पूछा तो बोले कि शंकर जी ने एक कविता में शान्ति को तोप का रूपक दिया है, यह अलंकार ठीक नहीं। मैंने कहा कि 'शान्तिखड्गः करे यस्य किं क०' में जब शान्ति खड्ग बन सकी है, तो तोप होने में क्या हर्ज है। बोले, हम संस्कृत तो जानते नहीं। बहुत खूब! फिर आपके विषय में विवाद चला। आप बोले, "अजी वह क्या हैं, हम उनके साथ बहुत रहे हैं, "मैंने कहा," इससे क्या हुआ। एडवर्ड के साथ भी तो बहुत से आदमी रहते हैं। इस पर बड़े झेंपे, मुँह बनाकर रह गये।

पं० गिरिधर शर्मा जी का कोई पत्र आपके पास पहुंचा कि नहीं।

भवदीय

पद्मसिंह

(६३)

ओम्

अजमेर

१७–१०–०८

मान्यवर पंडित जी

नमस्ते

पत्र और कार्ड यथासमय मिले, मैं ५–६ दिन से ज्वर पीड़ित हूं। इस कारण उत्तर में विलंब हुआ। जो आ० मि० आपने मांगा है भेजता हूं और हाल का पर्चा भी भेजता हूं, उसमें बहुत कुछ है, देखिए।

मालूम होता है, मुकद्दमा चलेगा। आपस में ही निबट जाय तो अच्छा है।

मुझे यहां ४८) मिलते हैं, ४०) परोपकारी से और ८) अ० रक्षक से। इंडियन प्रेस में क्या काम करना होगा? कितने की जगह है? खमीरा गावज बा का विधि पत्र पहुंच गया होगा, कीमत भी उसमें लिखी है।

पं० रामचंद्र जी का लेख पहुंचेगा।

अपना कुशल लिखिए।

भवदीय

पद्मसिंह श०

(६४)

ओम्

अजमेर
२०–१०–०८

श्रीयुत मान्यवर पंडित जी

प्रणाम

कृपापत्र और कृपाकार्ड यथासमय मिले। नोटिश का हाल आपके पत्र आने से पूर्व ही पं० बाबूराम शर्मा संपादक आर्यमित्र के पत्र द्वारा विदित हो गया था। इसलिए खेद है कि यह बात गुप्त न रह सकी, जैसाकि आपकी आज्ञा थी, अस्तु। मथुरा से अभी हिस्ट्री नहीं आई, न बी० एन० की किताबें ही आईं, दो तीन पत्र भी लिख चुके, फिर लिखता हूं।

हां, आगरे से पं० बाबूराम शर्मा की भाषा रामायण और १६ जून का आ० मित्र कल आया है, जो आज की डाक से भेजता हूं, ८ सितंबर के आर्यमित्र की कटिंग आप अपने पास ही रहने दीजिए। भेजने की जरूरत नहीं। फाल्गुन का परोपकारी भेज चुका हूं। शिक्षामंजरी की समालोचना में आपका नाम लिख देने से ही बी० एन० आप से नहीं चिढ़ा, किंतु उसका स्वभाव ही बड़े आदमियों पर हमला करके अपना बड़प्पन जतलाना है। वह पहले भी तो आपके विरुद्ध लिखता रहा है। कृपया बी० एन० के माफीनामे की एक अविकल नकल हमें भी भेजिए, हम उसकी गिड़गिड़ाहट देखना चाहते हैं। आप कहेंगे तो हम उसे गुप्त रखेंगे, किसी को सुनाएंगे नहीं। भेजिए जरूर। पं० रामचंद्र शर्मा का वह लेख आर्यमित्र ने नहीं छापा, छापे भी कैसे, उससे तो आपके दावे की पुष्टि होती है न?

कल जो "आ० मित्र" आया है, उसमें लिखा है "अजमेर प्रवासी शर्मा जी! आपका लेख कई अंशों में सत्य होने पर भी हम कारणवशात् इस समय उसके छापने में असमर्थ हैं" इत्यादि। पं० रामचंद्र शर्मा ने आर्यमित्र को एक पत्र भी लिखा है कि लेख छापिए या वापिस कीजिए। वहां वह लेख छपेगा नहीं, यह निश्चित है। ८ अक्टूबर के बाद फिर आपके बारे में आर्यमित्र में कुछ नहीं लिखा गया। जब कुछ लिखा जायगा भेज दूंगा, मेरी सम्मति में माफी तो सब अभियुक्त मांग लेंगे पर रुपये कहां से देंगे? माफी मांगने पर क्या रुपयों के लिये दावा करना ही होगा। 'परोपकारी' का अध्यक्ष परोपकारिणी सभा है। शाहपुराधीश ने परोपकारी के संबंध में ही बुलाया था। मैनेजर प्रेस ने

रिपोर्ट की थी कि 'परोपकारी' बंद होना चाहिए क्योंकि इससे कुछ आमदनी नहीं, इत्यादि। पर महाराज साहब आज्ञा दे गये हैं कि पत्र चलना चाहिए। मैंने कहीं, अन्यत्र अभी प्रबंध तो कुछ नहीं किया परन्तु यहां से पृथक् होने का विचार कर लिया है, कुछ न कुछ प्रबंधान्तर हो ही जायगा। इन्डियन प्रेस में कोई जगह हो तो खयाल रखिए, अभी ऐसी कुछ जल्दी नहीं है।

बा० मैथिलीशरण जी गुप्त का पत्र आया है, वह अनुरोध करते हैं कि हम सतसई पर एक टीका अवश्य लिखें, हमारा इरादा भी है, क्या इण्डियन प्रेस उसे अपनी ओर से प्रकाशित कर देगा।

गोपीचन्द की कथा का पर्चा शंकर जी को भेज दूंगा। गोपीचंद के विषय में प्रसिद्धि है कि उसकी माता ने ही उसे फकीर बनने की प्रेरणा की थी।

खमीरागावजबां कल भिजवा दिया है, उसका सेवन कीजिए।

कुशल पत्र भेजते रहिए, आज्ञा करते रहिए।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह

(६५)

ओम्

अजमेर
१३–१२–०८

श्रीयुत मान्यवर पंडित जी महाराज

प्रणाम

३०–११ का कृपापत्र यथासमय मिल गया था, उत्तर में कई कारणों से विलंब हुआ।

मुझे विश्वस्त जरिये से मालूम हुआ है कि बाबूराम और कपूरचंद माफी नहीं मागेंगे, उन्होंने इस बारे में प्रतिनिधि के प्रधान की आज्ञा भी नहीं मानी। लिख दिया कि हम सब मुसीबत झेलने को तैयार हैं, सभा से कुछ सहायता नहीं चाहते।

आपने नालिश कर दी होगी ? जैसाकि आप लिखते हैं। कृपया इस मामले की सूचना दीजिए।

मैं 'आर्यमित्र' की संपादकता स्वीकार नहीं कर सकता। कई कारण हैं, प्रधान कारण यह है कि आर्य सामाजिक नौकरियों में स्वतंत्र नहीं रहती, गुलामी की दशा से बदतर है।

मैं यहां से जनवरी के १ले हफ्ते में घर जाऊंगा। वहां से शायद ज्वालापुर मैं जाऊं। पं० भीमसेन जी और पं० गंगादत्त जी महाविद्यालय ज्वालापुर से एक पत्र निकालना चाहते हैं। इसके लिए मुझे आग्रहपूर्वक बुला रहे हैं। मैं इनकी आज्ञा और प्रणयानुरोध को टाल नहीं सकता। इसलिए जाना पड़ेगा, यद्यपि वहां अर्थलाभ कुछ नहीं, कुछ दिन रहकर उनका कहना भी कर दूंगा।

कम्पनी बना कर प्रेस खोलना इस जमाने में जरा मुश्किल है।

तीन महीने का परोपकारी अब इकट्ठा छप रहा है, बड़े दिन की छुट्टियों में परोपकारिणी का अधिवेशन होगा। उसी में इस्तीफा देकर मैं छुट्टी हासिल करूंगा।

दिसम्बर की 'सरस्वती' आज मिली थी। विषय सूची ही पढ़ने पाये थे कि एक मित्र छीन कर ले गये, अब रात को लेकर पढ़ेंगे।

अफसोस है कि शंकर जी फिर बीमार हो गये। बा० मैथिलीशरण जी की कविता तरंगिणी का प्रवाह अविच्छिन्न बह रहा है, बड़ी खुशी की बात है।

बार्हस्पत्य जी की लेखमाला को तो अवश्य पृथक् पुस्तकाकार छपाने का प्रयत्न कीजिए। इससे बड़ा लाभ होगा। हां, उनका फोटो तो 'सरस्वती' में दीजिए।

अब आपके स्वास्थ्य की क्या दशा है ?

इस वर्ष किसी कांग्रेस में जाइएगा कि नहीं ?

एक नरदेवशास्त्री क्या, मतान्धता बड़े बड़ों की अक्ल पर पर्दा डाल देती है, सभी मतों और सोसाइटियों का यह हाल है। एक आर्यसमाज ही इससे बरी क्यों रहे ?

कृपापात्र
पद्मसिंह

(६६)

ओम्

रिप्लाइड
२८-१२-०८

अजमेर
२६-१२-०८

मान्यवर पंडित जी महाराज

प्रणाम

कई दिन हुए कृपापत्र मिला, और 'संपत्तिशास्त्र' भी, इस कृपा के लिए अनेक धन्यवाद। पुस्तक बड़ी ही सुंदर है, हिंदी में तो बिलकुल नई चीज़ है, ऐसी ऐसी

गहन पुस्तकें लिखकर भी आप आराम से सोना चाहते हैं? नींद बेचारी का क्या कसूर है, वह दिमाग में आवे किधर से।

'सरस्वती' से मालूम हुआ, इस बीच में आपने 'हिंदी महाभारत' भी रच डाला है? ऐसे ऐसे काम नींदवाले आदमी नहीं कर सकते, पर जागनेवालों का ही हिस्सा है, धन्य आपकी जागरूकता?

आगरे में हमारे मित्र स्वा० मंगलदेव साधु हैं, उन्हीं से प्रायः 'आर्यमित्र' संबंधी बातें मालूम होती रहती हैं। वह उन लोगों के अंतरंग हैं। सिकन्दराबाद से एक पत्र निकला है, भेजता हूं देखिए। उसमें एक नोट इस विषय पर है। भाषा पुकार कर कह रही है कि बी० एन० की लेखनी से निकली हूं। मिश्र जी का कोई उत्तर आया हो तो लिखिए।

मैं फर्रुखाबाद नहीं जाऊंगा। कल २७ से २९ तक यहां परोपकारिणी का अधिवेशन है। उसमें परोपकारिका का मामला पेश होगा। उसके बाद १० जनवरी तक मैं यहां से घर जा सकूंगा, और आपके दर्शन करूंगा।

ज्यों त्यों करके तीन मास का परोपकारी निकल गया। उसमें पं० रामचंद्र शर्मा का एक लेख 'आर्य' शब्द पर निकला है, जिसमें उन्होंने सरस्वती के लेख पर अपनी संमति प्रकट की है। यद्यपि लेखक ने प्रायः श्री घोष को ही मुखातिब किया है, तथापि मैं इसके लिए आपसे क्षमा मांगता हूं, लोगों ने मजबूर कर दिया कि परोपकारी में इस पर कुछ जरूर निकलना चाहिए।

अपना स्वास्थ्य समाचार और अभियोग विचार लिखए।

परोपकारिणी के अधिवेशन के लिए कागजात की तैयारी में लगा रहने से फुरसत न था इसलिए पत्र में विलंब हुआ।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

(६७)

रिप्लाइड

उज्जैन

२५–२–०९ फा० व० ३० सं० १९६४

श्री पंडित जी

प्रणाम

मुझे कालिदास की भक्ति उसकी लीलास्थली देखने की उत्कण्ठा यहां खींच लाई। मुझे सीधा ज्वालापुर जाना चाहिए था, आज वहां पहुंच जाना चाहिए

था। "वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां" कवि के इस मेघादेश पर चल पड़ा। इस भूमि को देखकर हृदय में भावों का समुद्र उमड़ रहा है। हां, क्या यह वही "श्री विशाला विशालागपुरी है"? क्या इसी जगह कालिदास ने अमृत-मयी कविता लिखी थी? विक्रम की राजधानी यही है? विश्वास नहीं आता। करुणा से हृदय भरा आता है। संसार की अनित्यता का चित्र आंखों में फिर रहा है, हा दैव! अस्तु, यह कथा कभी फिर लिखूंगा।

आपका कार्ड मुझे अजमेर मिल गया था, अच्छा हुआ बी० एन० जी ने माफी मांग ली। अब शायद 'मित्र' वाले भी मान लें।

आपके एक वाक्य ने (चाहे वह परिहास ही हो) मुझे बड़ी वेदना पहुंचाई "कहिए उसकी (सितम्बर की 'सरस्वती') क्यों जरूरत पड़ी? क्या कुछ और हमें सुनाइएगा? क्या सचमुच आप ऐसा ही समझते हैं?

अफसोस!!

फोटो ओझा जी दौरे में अपने ले गये थे। अब अजमेर पहुंच कर भेज दूंगा। २५–२–०९ तक अजमेर जाऊंगा। वहां एक दिन ठहरकर फिर ज्वालापुर।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह श०

(६८)

ओम्

रिप्लाइड
१–३–०९

अजमेर
२२–२–०९

पंडित जी महाराज

प्रणाम

२४–२–०९ का कृपापत्र आज यहां आकर मिला। मुझे मार्ग में कई दिन अधिक लग गये, इसलिए प्रोग्राम बदल गया। उज्जैन और चित्तौरगढ़ से बड़ी मुश्किल से पीछा छुटा। आने को जी नहीं चाहता था।

आज शाम को या कल प्रातः काल यहां से ज्वालापुर को चलूंगा। अपने पास रखने के ख्याल से नहीं किंतु आबोहवा की उम्दगी के लिहाज से और प्राकृतिक दृश्यों के लिहाज से भी ज्वालापुर सर्वथा उचित स्थान है।

आप जितनी बातें चाहतें हैं, सब वहां हैं। कहिए तो किसी डाक्टर का सार्टि-फिकेट इसके सबूत में भेज दें, विशेष वहां पहुंच कर लिखूंगा।

नई 'सरस्वती' में कालिदास पर आपका लेख पढ़कर चित्त प्रसन्न हुआ। "दौपदीदुकूल" बहुत ही माकूल है। गुप्त जी को धन्यवाद।

शंकर जी का चित्र और वे दोनों कविताएं जो उन्होंने हाल में भेजी हैं शीघ्र निकालिए।

कवियों को बेदिल नहीं करना चाहिए।

बी० एन० का क्षमाप्रार्थना मैंने अभी नहीं पढ़ा।

कृपापत्र
पद्मसिंह शर्मा

(६९)

ओम्

रिप्लाइड
(जवाब दिया गया) २०।३।०९

नायकनगला
पो० आ० चांदपुर
जिला—बिजनौर
१८–३–०९

श्रीयुत मान्यवर पंडित जी महाराज

प्रणाम

म० वि० ज्वालापुर के उत्सव से मैं यहां ८-१० दिन के लिए चला आया था। अब दो चार दिन में वापस जाने वाला हूं। आपके ९–३–०९ तथा १३–३–०९ के दोनों कृपापत्र म० वि० से लौटकर मुझे आज ही यहां मिले हैं। वहां से लौटने पर मेरी तबीयत कई दिन खराब रही। आपको पत्र न लिख सका। ज्वालापुर में आशा है आपके अनुकूल सब प्रबंध ठीक हो जायगा। जाड़ा बहुत तो नहीं पर अभी रात को सरदी खासी हो जाती है। बिछौना, एक रजाई और कम्बल साथ लाना काफी होगा। अल्मोड़े में खूब सरदी होती है इसलिए यदि वहां जाना हो तो गरम सूट भी साथ लाइए। नौकर के विषय में म० वि० पहुंच कर लिखूंगा कि वहां मिल जायगा या नहीं। एकार्थ या सस्त्रीक जैसे आप आवें, मकान का प्रबंध हो जायगा।

आर्यमित्र के संपादक बदल गये। पं० देवदत्त शास्त्री के अनुज भवदेव शास्त्री गये हैं। उन्हें संपादन का अभी तजरवा नहीं, लेखों का क्रम प्रायः अस्त व्यस्त रहता है। संभव है इस कारण बी० एन० जी की माफी उचित स्थान पर न छपी हो।

इस में संदेह नहीं कि कुछ महात्माओं की विचित्र लीला से आ० समाज बदनाम और असर्वप्रिय होता जाता है, दैवगति।

मिश्र जी ने क्या उत्तर दिया? उनके पास जो मसविदा गया था उसका क्या रहा?

शंकर जी की वह कविता जिसमें उन्होंने एकदम विजन बोल दिया है, उन्हें लौटा दिया या आप के पास है? उनका चित्र 'सरस्वती' में यथासंभव शीघ्र ही निकालिए, कविता-कलाप कबतक निकलेगा?

जिस दिन मैं अजमेर से चला था, उसी दिन ओझा जी दौरे से लौटे थे। फोटो के लिए मैं गया, वह मिले नहीं। मैं अपने २-३ मित्रों के सुपुर्द यह काम कर आया था कि फोटो लेकर आपके पास अवश्य भेज दें, जरूर भेजेंगे। मैंने उन्हें लिखा है। म० वि० ज्वालापुर से एक मासिक पत्र निकलेगा। वहां रहकर मैं उसका संपादन करूंगा। यही काम होगा। 'सम्पत्तिशास्त्र' मि० गौरीशंकर जी को भेज दिया, अच्छा हुआ। 'स्वाधीनता' जहां से मिलती हो वी० पी० से भिजवा दीजिए। आपके पास फालतू न सही। संपत्ति शा० वी० पी० से भेजा है या वैसे ही।

चलते समय अजमेर में मित्रों के अनुरोध से मैंने फोटो उतरवाया था। उसकी एक कापी आपके पास भेजने को कह आया था। पहुंची या नहीं। इस पत्र के पहुंचते २ आप कानपुर लौट आवेंगे, इसलिए दौलतपुर न भेजकर यह पत्र कानपुर ही भेजता हूं।

कृपापात्र

शेष ज्वालापुर से । पद्मसिंह श०

(७०)

म० वि०
ज्वालापुर
९–६–०९

श्रीयुत मान्यवर पं० जी

प्रणाम

श्रीमान् का कृपाकार्ड १–६ का अब मिला। मैं यहां कल शाम ही वापस आया हूं। २९–५ को दिल्ली गया, वहां ३–६–०९ तक रहा, फिर सहारनपुर गया। दिल्ली सदर का उत्सव बड़े अपूर्व समारोह से हुआ। २०–२५ उपदेष्टा लोग और विद्वान् इकट्ठे हुए थे, दो दिन तक, मौलवियों, पादरियों और पंडितों से आर्य-समाज का शास्त्रार्थ भी हुआ। अपार भीड़ रहती थी, स्वामी दर्शनानन्द जी (जिनके लिए गुरुकुलिय महात्मा ने पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा से आ० स० का प्लेटफार्म बंद करा दिया था) के खूब धूमधाम से व्याख्यान और शास्त्रार्थ हुए, महात्मा

ने हजार जोर मारा कि पं० गणपतिशर्मा और स्वा० दर्शनानन्द के व्याख्यान न हों पर एक न चली, महात्मा ने मुंह की खाई। दिल्ली में खूब प्रभाव रहा। वहां इकट्ठे हुए आर्य विद्वानों ने ''स्वतंत्रोच्छ्वास'' लेने के लिए एक 'आर्य विद्वत्सभा' कायम की है, जिसका वृत्तान्त आप अगले भारतोदय में पढ़ेंगे।

यह भी महात्मा को असह्य होगा। धर्मपाल ने एक साप्ताहिक समाचार पत्र 'पतन्दर' नामक निकाला है। उसमें महात्मा के चेले चांटों की खूब खबर ली जा रही है। महात्मा पर भी दबी चोटें की हैं। आजकल महात्मा का काफिया तंग है। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों और अध्यापकों में बगावत फैल गई। अस्तु, यह लंबा किस्सा है।

हां, दिल्ली में एक रोड प्रीचर आर्य सामाजिक से और कुछ ईसाई मुसलमानों से मारपीट हो गई थी, मुकदमा चल रहा है, मामूली बात है।

सहारनपुर आ० स० का उत्सव भी खूब हुआ। स्वा० दर्शनानन्द जी और पं० गणपति शर्मा के वहां भी व्याख्यान हुए। महात्मा का अधिकार संकुचित होता जाता है।

'भारतोदय' बड़ी गड़बड़ की हालत में निकला। आपको पसंद आ गया, शुक्र है।

आपके विषय में कोई बात बढ़ाकर नहीं लिखी गई। जिन सज्जनों के नाम आपने लिखे थे उनके पास १म, अंक भेज दिया गया।

शंकर जी का 'मनोराज्य' जिस दशा में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुआ है, वह उससे संतुष्ट नहीं हुए, अतः वह उसे पुनः अविकल रूप से 'भारतोदय' में प्रकाशित करने का अनुरोध करते हैं। वह 'मनोराज्य' की दस्तअन्दाजी से बहुत खिन्न जान पड़ते हैं। क्या आज्ञा है? म० रा० फिर 'भारतोदय' में छाप दें? यदि आप नाराज न हों, तो वह इससे राजी हो जायंगे। कवियों को नाराज नहीं करना चाहिए।

हां, हमारी चिरकालीन इच्छा पूर्ण हो गई। अब के सहारनपुर के सरकारी बाग में कालिदास के प्रिय अशोक के दर्शन हो गये। वहाँ कई प्रकार का अशोक है। उनमें नव पल्लव, पुष्प और फली सब कुछ देखा, उसे देखकर जो आनन्द हुआ, लिख नहीं सकता। अर्जुन, पुन्नाग, कदम्ब इत्यादि भी वहाँ देखे। बड़ा अपूर्व और विस्तृत बाग है। द्रष्टव्य है कभी आप भी जरूर देखिए।

खेद है कि आप फिर बीमार हो गए। इतने पर भी आप लिखते हैं कि "बिबारी विषय में इतना न लिखना था"......

कुशल समाचार लिखते रहिए।

'हिंदी कोविदकंठमाला' पर हमें जरूर कुछ लिखना है। और जल्द लिखना है, १) खर्च कर डालें या आप अपनी कापी भेज देंगे ?

पूना से उस किताब का पता जरूर लगा बिहारी सतसई के ग्रियर्सन वाले संस्करण का पता बतलाइए।

आगरे से कोई पत्र माफी आदि के बारे में आया ?

यहां वर्षा ऋतु प्रारंभ हो गई है। वर्षा के कारण से स्वामी जी का कुंआं ढह ढवा कर बराबर हो गया। म० वि० का कूप भी शायद ही तैयार हो सके।

कृपापात्र
पद्मसिंह

भारतोदय की १म संख्या यदि कहीं और भिजवानी हो तो लिख भेजिए[1]।

प० सिंह

नीमच के सेठ जी ने फिर तकाजा शुरू किया है[2]।

पद्मसिंह

(७१)

ओम्

महाविद्यालय
ज्वालापुर
२०–६–०९.

श्रीयुत मान्यवर पण्डित जी महाराज

प्रणाम

१३–६–०९ का कृपापत्र यथासमय पहुंच गया था। परन्तु मैं मेरठ गया हुआ था। अतः उत्तर में विलंब हुआ।

बेशक भारतोदय के १म अंक की समालोचना 'सरस्वती' में नहीं निकलनी चाहिए, हर्गिज नहीं निकलनी चाहिए, कोई जल्दी नहीं दो चार महीने पीछे देखा जायगा। मैंने तो यहां दफ्तर वालों से मना कर दिया था कि इस अंक की समालोचना के लिए 'सरस्वती' से तकाजा न किया जाय। पर मालूम होता है यहां से आपको लिखा गया है, यह राव जी की कृपा दीखती है, यदि कोई ऐसा पत्र यहां से गया हो तो कृपया लिखिए।

---

१. स्थान न रहने से तारीख के ऊपर लिखा हुआ है।

२. लाल पेंसिल से पीठ पर।

इस महीने की 'सरस्वती' जिसके अंत में रामजी लाल का मनोरंजक पद्य था, मास के प्रारंभ में ही निकल चुकी थी, वह हमने सहारनपुर में ही पढ़ी थी, सहारनपुर में वह आर्यदिवी के पास जाने लगी है, जिनके पास भिजवाने के लिए मैंने आपसे लिखवाया था और वी० पी० किसी कारण से लौट गया था। उन्होंने फिर जारी करा लिया है।

हां, शंकर जी कांटछांट से खिन्न हैं। उन्हें यह भी शिकायत है कि इतने आग्रहपूर्वक मंगाने पर भी उनका फोटो 'सरस्वती' में नहीं निकला और वह कविता-कलाप के ग्रूप के लिए रख छोड़ा। यह तो मेरी राय भी है कि उनका फोटो 'सरस्वती' में अवश्य निकलना चाहिए था और शीघ्र निकलना चाहिए था, वह इसी वादे पर उनसे मंगाया भी गया था। 'सरस्वती' में निकल कर भी वह "कलाप" में दिया जा सकता है। ऐसी जरा जरा सी बातों पर शिकायत का मौका नहीं देना चाहिए—"छन्दानुवृत्तिदु:खसाध्या: सुहृदो विमनीकृता:"—यह तो हम जानते हैं कि आप महाकवियों तक की परवाह नहीं करते पर मित्रता के नाते ही नाजोनखरे बरदास्त किये जाइए।

पूने वाले पुस्तक का पता न चलने का सख्त अफसोस है, याद रखिए, शायद पुराना पता हाथ आ जाय।

पतन्दर या 'पितन्दर' पंजाबी शब्द है, हमारी तरफ भी बोला जाता है, इसका अर्थ है, "पितरों के पितर" दादा परदादा' जैसे कहते हैं—"तुम्हारे' 'पतन्दर' से भी यह काम न होगा, तुम तो क्या चीज हो" पर यह 'महावरा' लुच्चे और शोहदे लोग बोला करते हैं, पंचपत्र के लिए यह नाम अच्छा है। क्या पतन्दर आपके पास भी पहुंचा है? लक्षण तो ऐसे ही हैं कि वह धर्मपिता के भी हंटर लगाये बिना न रहेगा।

धर्मपुत्र ने धर्मपिता को 'तलाक' दे दी, और उन्हें बुढ़ापे में निराश्रय छोड़ दिया।

अब महात्मा महाशय भोगी व "मन्त्रौषधीरुद्धवीर्य:" बन रहे हैं, बुरी बीतती है, रिआया बागी हो गई है।

'सूनृतवादिनी' ने 'भारतोदय' की विचित्र समालोचना की है, उसे इसके लेखों से सनातन धर्मानुयायियों के हृदय पर आघात का सदमा उठाना पड़ा है, यह उसका खयाल 'प्रकृतिस्तव' को पढ़कर हुआ है, आपके पास पहुंची हो तो १२।६।०९की संख्या में देखिए तो सही (३ पृ० के अंतिम कालिम की अन्तिम टिप्पणी) अस्तु 'अफसोस है जिस बात से बचने की हमने सख्त कोशिश की उसी के लिए उलाहना सुनना पड़ा और वह भी ऐसे विद्वान से इसी का रंज है'।

स्वामी दर्शनानंद, पं० गणपति, मा० आत्माराम जी और पं० तुलसीराम जी के व्याख्यान और शास्त्रार्थ आपको अगले उत्सव पर सुनावेंगे।

रघुवंश विमर्श मंगाया है, कल पत्र लिखा है, देखें कैसा है। अप्पा जी का 'मालविकाग्निमित्र' भी मंगाते हैं। पंडितराज के 'रस गंगाधर' पर किसने लिखा है? आपने बतलाया था, ग्रंथ का नाम और पता लिखिए। मंगावेंगे।

कृपापात्र
पद्मसिंह

(७२)

ओम्

स्वामी नित्यानंद जी की शांत कुटी
शिमला
३०—७—०९

श्रीमान्यवर पंडित जी

प्रणाम

मैं यहां ५-६ दिन के लिये एक काम से और सैर की गरज से आया हूं। बड़ी अद्भुत जगह है। यहाँ प्रकृति देवी नाना रूप में अभिनय करती हुई दर्शक के चित्त को विमुग्ध बना देती है। आजकल भी यहाँ खूब सरदी पड़ती है। दिन भर कोहर बरसता रहता है, सूर्यदेव दिन में कभी कभी एक आध मिनट को दर्शन दे जाते हैं। मेरी राय में यदि कुछ दिनों के लिए आप यहाँ पधारें तो जरूर फायदा हो। स्वामी जी की कुटी बड़ी सुंदर और अच्छी जगह पर है। यहां रहने में सब प्रकार का सुभीता रहेगा। स्वामी जी सादर आपका आतिथ्य करेंगे।

चलते समय आपका कृपाकार्ड मिला था। आशा है अब आंखें अच्छी हो गई होंगी।

उस दिन हरद्वार में सेक्रेटरी साहब मिले थे। आपको पूछते थे और शिकायत करते थे कि "पंडित जी हमें बिलकुल भूल ही गये, एक भी कुशल-पत्र नहीं भेजा" सो भेज दीजिए।

मैं २-८ तक ज्वाला[1] पहुंचूँगा। और वहाँ से एक डिपूटेशन विद्यालय के लिए उठनेवाला है जो राजपूताने की ओर जायगा, उसमें मुझे भी जाना होगा। डिपुटेशन २-३ महीने घूमेगा। 'कविताकलाप' निकला कि नहीं?

---

१. ज्वालापुर—सं०

हिंदी कोविदरत्नमाला भेज दीजिए तो उसपर कुछ लिखें।
भारतोदय का २रा, अंक पहुंचा होगा।
उत्तर म० वि० के पते से ही भेजिए।
हां, वे दोनों किताबें पढ़ीं।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

(७३)

ओम्

म० वि०
ज्वालापुर
५–८–०९

माननीय पण्डित जी महाराज

प्रणाम

मैंने शिमले से एक कार्ड भेजा था, पहुँचा होगा। मैं परसों यहाँ आया हूँ। आज 'सरस्वती' मिली। खोलते ही चक्कर में डालनेवाले चित्र की चर्चा उठी, उसे देखते ही ४-५ मिनिट में हमारे मित्र पं० द्वारकाप्रसाद जी ने विशद रूप से उसका स्पष्टीकरण कर दिया, चित्र के छवों, चेहरे साफ २ बतला दिए। सो इस प्रकार कि दो भारी चेहरे गमले की जड़ में, दोनों तरफ। एक दाहिनी तरफ जरा लंबी गरदन वाला। और एक उससे कुछ ऊपर को तथा ५वां, बायें तरफ उसी के सामने कुछ नीचे को झुका हुआ। यदि यह स्पष्टीकरण ठीक हो तो लिखिए।

बा० मैथिलीशरण जी की 'स्वर्गसहोदर' कविता बड़ी उत्तम है। इत्तफाक से पं० वासुदेव गायक आजकल यहाँ हैं, उन्होंने उसे ऐसे स्वर से पढ़ा कि आनन्दातिरेक से अश्रुपात होने लगा। कवि जी के अविश्रान्त गामिनी रस निष्पन्दिनी लेखनी को धन्य है। वर्षा विषयक दोहे अच्छे हैं, पर न जाने किस कवि के हैं? यदि किसी नवीन कवि के हैं तो आश्चर्यजनक हैं।

पं० रुद्रदत्त जी ने सूरदास के इस पद की बड़ी प्रशंसा की थी—

"सूर-खान के पालन हारे आवैगी तोहे गारी।"

पर उन्हें इतना ही याद रह गया था, हमने और भी कई आदमियों से पूछा पर पता न चला, इस पूरे पद को यदि 'सरस्वती' द्वारा आप पूछ दें तो अच्छा हो, रचित हो तो अब के दे दीजिए। किसी को तो याद निकलेगा। मि० भा० बि० प्रति० में इस बार कई अशुद्धियां रह गईं यथा—२रा, श्लोक इस प्रकार चाहिए

"गुरुतामुपयाति यन्मृतः. . ." 'लघुतामुपया०" इस दशा में तो उत्तरार्द्ध से कुछ संबंध ही नहीं रहता। पहले श्लोक के नीचे के शेर में 'शहवत' का 'शहबत' हो गया।

छठे, पद्य का अर्थ अधूरा रहकर खास बात जाती रही। ". . . . . .हँसते हैं" के आगे "और तू रोता है—"(तो गिरयां) . . . जरूर चाहिए था, इसके बिना लुत्फ जाता रहा।

अब, हमें २-३ महीने के लिए बाहर डिपुटेशन में जाना है, पंजाब, हैदराबाद सिंध, कराची होकर राजपुताने और गुजरात में जायंगे, ५-६ दिन में कूच होनेवाला है, आशा है आप कुशल से होंगे।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

(७४)

म० वि०, ज्वालापुर
७–८–०९

मान्यवर पं० जी

प्रणाम

कृपापत्र मिला। पुस्तक भी पहुंचा। काम हो जाने पर अवश्य लौटा दूँगा।

व्यास जी ने स्वर्ग सभा, सब्जेक्ट कमेटी के उत्तर में ही लिखी है पूर्व नहीं। आप भूत प्रेतों के पीछे बुरी तरह पड़े हैं, मुश्किल से यह ऊतभूतों का बखेड़ा दूर हुआ था, आप उसे फिर बुलाकर रहेंगे। कृपया इस रोचक पर भ्रमात्मक विषय की चर्चा 'सरस्वती' में कम किया कीजिए। यह आपकी भूतचर्चा बहुत से लोगों के संस्कारों को ताजा कर रही है। भूले हुए ख्याल को वापस ला रही है।

आंखें अभी कुछ कुछ अच्छी हुई हैं बिलकुल नहीं? बहुत दुखी? यदि स्वास्थ्य बिगड़ने लगा तो फिर घर लौट जाइए, या कहीं अन्यत्र रहिए। इस साल कोई नई किताब न लिखिए।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह शर्मा

क्या छबीलेलाल को जी० च० की सामग्री नहीं भेज दी।

पद्मसिंह शर्मा

(७५)

अहार
२०–८–०९

श्रीयुत माननीय महोदयेषु सादरं

प्रणामाः

गत सप्ताह एक कार्ड और कविताकलाप, मिला। इस कृपा के लिए कोटिशः धन्यवादाः।

कविताकलाप ठीक उस वक्त मिला जब हम बिस्तरा बांधे दौरे में चलने के लिए बिलकुल तयार थे। उसके सहारे सफर बड़े आराम से कटा। पं० वासुदेव गायन हमारे साथ हैं, उन्होंने उसकी कारुणिक कविताएँ गाकर खूब रुलाया। खासकर 'अशोकवासिनी सीता' का विलाप सुनकर तो चित्त की अजीब हालत होती थी। ये भावभरे दोहे लिखकर तो बा० मैथिलीशरण जी ने 'बिहारी' से हाथ मिलाया है। बार्हस्पत्य जी का यह खयाल बिलकुल गलत निकला कि.... "केशों की कथा" के बाद अब गुप्त जी वैसी कविता न कर सकेंगे।.... सहृदयता इसकी साक्षी है कि ये दोहे....कथा' की कविता से भी उत्कृष्ट हैं, तोल में छोटे होने पर पर भी मोल में बड़े हैं। मेरी राय में तो यदि और कुछ भी न लिखकर मैथिलीशरण जी सिर्फ यही दोहे लिखते तो यही उन्हें कविता के ऊँचे आसन पर बिठाने को काफी थे। यह देखकर दुख हुआ कि दुर्वासा के शाप वाला चित्र और कविता इसमें क्यों संमिलित नहीं की? आपने तो उसके लिए लिखा था? यह कमी मुझे बराबर खटकती है। मैं तो समझे बैठा था कि वह इसमें जरूर निकलेगा। अफसोस अब इसका कुछ इलाज नहीं रहा। एक बात की और कसर रह गई, चित्रों पर एक एक पतला कागज और चाहिए था, रंगीन चित्रों में बैजनी रंगवाले चित्रों का रंग 'उत्पतिष्णु' है, वह उड़ जाता है, बिना कागज के चित्र खराव हुए जाते हैं। अस्तु, पुस्तक के चित्र और कविताएं सब ही मनोहर हैं, वस इतनी ही कमी है कि वे सब चित्र नहीं जिनपर कविताएं भी निकल चुकी हैं। 'गालिब' से किसी ने पूछा था कि 'आमों' में क्या क्या गुण होने चाहिए", कहा कि "मीठे हों और बहुत हों"—सो आप मीठे तो हैं, पर थोड़े हैं। एक बात और हमारी समझ में नहीं आई, चित्रावली में १ला, नंबर पूरण जी को किसलिए मिला है?

आशा है आप अच्छे होंगे। कभी कभी कुशल पत्र भेजते रहिए, हो सका तो 'सरस्वती' के लिए कुछ लिखूँगा। सतसई की समालोचना चलाइए। बहुत दिन हो गए। पं० शिवशंकर काव्यतीर्थ वेदों पर सरस्वती में कुछ लिखना चाहते हैं, स्थान

मिलेगा? दो एक दिन में यहां से प्रस्थान होगा। पत्रोत्तर मथुरा पं० क्षेत्रपाल सुख संचारक एंड कं० की मार्फत भेजिए। शेष फिर।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

सावित्री के चित्रावली कविता में, ११ पतयोंवाला ताना वाहियात है, जिस महाभारत में सावित्री का चरित्र है वहीं तो ११ नहीं २१ तक की विधि है? फिर यह ताना आजकल के लिए ही क्यों?[1]

(७६)

मथुरा
३०–८–०९.

श्रीमान् पंडित जी महाराज

प्रणाम

हम यहां २७–८–०९ को पहुंचे। आपका कृपापत्र मिला। आपकी बीमारी और उन्निद्रता का हाल जानकर बड़ा खेद हुआ। आशा है आप अब अच्छे होंगे। यहां से हम आगरा, भरतपुर, होते हुए अजमेर पहुंचेंगे, अपना कुशल समाचार संपादक, आर्यमित्र आगरा द्वारा भेजकर अनुगृहीत कीजिए। दौरे के चक्कर में लोगों से मिलने जुलने और मांगने में अवकाश बिलकुल नहीं मिलता, कविता कलाप की बहुत सी कविताएं पढ़ना अभी बाकी है। हि० को० रत्नमाला भी पढ़ने को साथ लाये थे, वह भी नहीं पढ़ी जा सकी। पढ़कर लिखूँगा। १५ दिन में हम लोग ६०० रु० इकट्ठा कर चुके हैं। यदि ऐसा ही क्रम जारी रहा तो आशा है कुछ हो जायगा। कविताकलाप का या तो २य भाग और निकलना चाहिए या दूसरे एडीशन में छूटे हुए कविता और चित्र और बढ़ा दिये जायं। पुस्तक हाथ में उठाते ही दुर्वासा और शंकुतला याद आते हैं।

आपका
पद्मसिंह शर्मा

---

१. पत्र के पुट्ठे पर लिखा हुआ है।

(७७)

ओम्

रिप्लाइड | अजमेर
६।४।०८ | चैत्र सुदी १
सम्वत् १९६५

श्रीयुत माननीय पण्डित जी

प्रणाम

कृपाकार्ड मिला। यह जानकर बड़ा दुःख हुआ कि श्रीमान् को अभी आराम नहीं हुआ, कृपाकरके नियमित रूप से किसी सद्वैद्य का इलाज कराइए, अब ऐसे काम न चलेगा। इधर उधर घूमने से कुछ विशेष लाभ न होगा। जब आपकी यह दशा है तो 'सरस्वती' के अनाथ होने में क्या संदेह है? परमात्मा करे कि आप शीघ्र रोगमुक्त होकर इसकी रक्षा करनें में तत्पर हो सकें।

पण्डित जी, क्या अर्ज करूँ मैं निहायत शर्मिन्दा हूँ कि मैंने कभी आपकी आज्ञा का पालन नहीं किया, या न कर सका। अब तो भला मैं एक और झंझट में फंस गया। जरा यह काम चल पड़े तो मैं यथासम्भव शीघ्र ही कालिदास की अद्‌भुत उपमाओं पर कुछ लिखने का उपक्रम करूंगा। इतनी आज्ञा हो तो 'सतसई की समालोचना' भेज दूँ? मेरे ख्याल में तो उसे लोग बड़े शौक से पढ़ेंगे, मैंने उसे कई काव्य रसज्ञों को सुनाया है, उन्होंने उसे पसन्द किया है। उसमें परिहास का आधिक्य है सही, पर वह उत्तेजक नहीं किन्तु रोचक है, सभ्यता की सीमा से भी बाहर नहीं गया। आप उसकी लम्बायमानता से कुछ घबरा गये, पर यह तो सोचिए जिस आदमी ने बिहारी जैसे कवि की कविता को धूल में मिलाया हो और भी बहुत से प्राचीन कवियों के काव्य को भ्रष्ट किया हो अर्थात् जो 'जुरायम पेशा मुजरिम' हो, वह किसी रियायत का मुस्तहक नहीं, उसे पूरी सजा मिलनी चाहिए, इसलिए मैं समझता हूँ कि विद्यावारिधि की करतूत को देखे, जो कुछ आलोचना में हँसी दिल्लगी की गई है, जो चुटकियां ली गई हैं वह नामुनासिब नहीं। बल्कि कुछ और ज्यादह होता तो अच्छा होता। मेरी सम्मति में ऐसे लेखों की लम्बायमानता पाठकों के उद्वेग का हेतु नहीं हो सकती। वह 'गुलेरी' जी के 'आंख' विषयक लेख से तो बड़ी नहीं? जब उस जैसे रूखे मजमून को लोग साल भर तक पढ़ते रहे थे, तो यह तो तीन चार महीने से ज्यादह का मास नहीं। यदि आप उसे छापें तो कहीं कहीं से दो चार पंक्तियों से अधिक कांट छांट न करें। मैंने उसे 'बिहारी' परलोक स्थित आत्मा की प्रेरणा से लिखा है, सच जानिए लिखते समय कई बार, 'बिहारी दुर्दशा' पर मुझे असह्य मनोवेदना हुई है, अश्रुपात हो हो गया है, यदि मैं कवि होता या

उत्कृष्ट लेखक ही होता तो पूरा पूरा बिहारी का बदला विद्यावारिधि से लेता। हाँ, कितने अफसोस की बात है कि बिहारी का ऐसा अक्षम्य अपराध करनेवाले उसके जानी दुश्मन के साथ आप नरमी का बरताव करना चाहते हैं, नहीं महाराज, क्षमा कीजिए, मैं इस बात में आपसे सहमत नहीं। मजमून की कांट छांट क्या वैसे तो आप मेरे शरीर की कांट छांट कर डालें तो भी मुझे उज्र न हो, पर विद्यावारिधि की खबर तो ले लेने ही दीजिए, इस शख्स ने बड़ा जुल्म किया है, घोर अपराध किया है, लिहाजा मुलाहजा ऐसे मौकों पर नहीं बरतना चाहिए। दूसरे-बुराभला तो हर हालत में सुनना पड़ेगा, चाहे आप पद पद पर माफी मांग, तारीफ कर कर समालोचना कीजए, आजकल समालोचना का अर्थ ही गाली खाना हो गया है, देखिए, बी० एन० शर्मा की उस 'शिक्षामंजरी' की आलोचना हमने कितने नम्र शब्दों में की थी, पर वह हजरत कुछ ऐसे बिगड़े हैं कि खुदकुशी पर तयार हैं। किसी तरह मानते ही नहीं।

आप शायद समझते हैं कि आपने कड़ी कड़ी समालोचना लिखकर बहुत से लोगों को अपना दुश्मन बना लिया है, पर आपको उनकी खबर नहीं जो आपकी समालोचनाएँ पढ़ पढ़ कर ही आपके मित्र बने हैं, प्राचीन कवियों के गौरव का उन्हें पता लगा है, हिन्दी पढ़ने की ओर उनकी रुचि हुई है, यदि कहिए तो दस पांच ऐसे आदमियों के नाम लिख दूं ? पता दूं ?

इस जरूरी और लम्बी बकवास के लिए आप से क्षमा मांगता हूं।

आप जहां कहीं जायं सूचना अवश्य दीजिए। अपनी तबीयत का हाल लिखते रहिए।

कृपाकर के पं० गौरीदत्त जी का पता लिखिए।

यदि आप लिखेंगे तो समालोचना भेज दूँगा। शेष फिर।

कृपाकांक्षी
पद्मसिंह शर्मा

हाली का एक गद्य लेख और जफर की एक पहेली अक्षरान्तर करके भेजता हूँ, यदि उचित हो तो 'सरस्वती' में दे दीजिए, अन्यथा वापस भेज दीजिए।

पद्मसिंह

(७८)

ओम्

महाविद्यालय
ज्वालापुर
२५-५-१०

श्रीयुत मान्यवर पंडित जी महाराज

प्रणाम

कृपामय कुशल पत्र मुद्दत से नहीं आया। यह समझ कर कि पत्रव्यवहार द्वारा आपकी विश्रान्ति और सेहत में खलल डालना ठीक नहीं, प्रबल इच्छा होते हुए भी किसी प्रकार मैं अपने आपको इतने दिनों तक रोके रहा, पत्र भेजकर श्रीमान् को कष्ट नहीं दिया। यद्यपि बीच बीच में श्री शुक्ल जी के पत्रों से कुछ कुछ आपका समाचार मिलता रहा, किंतु केवल उतने से संतोष कहां! चाहे कुछ हो, कभी कभी पत्र भेजने का अनुग्रह तो अवश्य करते रहिए, यदि पत्रव्यवहार से आपका अस्वास्थ्य बढ़ता है तो पत्र न मिलने से हमारी चिन्ता बढ़ती है, हिसाब बराबर है। प्राय: मिलनेवाले महाशय जब कभी आपका समाचार पूछते हैं तो 'अर्से से पत्र नहीं आया' कहकर उन्हें टालना पड़ता है।

शुक्ल जी के (सरस्वती में) लेखानुसार आशा है आपका स्वास्थ्य अब अच्छा होगा। 'सरस्वती' को आप अब कबतक संभालेंगे ? इस आराम के जमाने में किसी नई पुस्तक के लिखने में तो नहीं लगे रहे ? आपका सर्वथा खाली बैठे रहना तो कुछ असंभव सा ही है। क्या अबकी गरमियों में इधर न आइएगा, आप आवें तो मँसूरी चलें।

नया 'भारतोदय' भेजता हूँ, थोड़ा थोड़ा करके सब देख जाइए। उत्सव वृतांत्त, कान्स्टिट्यून विल्ला०, वेदों का संशोधन, महात्माजी की उदारता, सबमें कुछ न कुछ मनोरंजन मसाला पाइएगा। तफरीह हो जायगी। महात्मा पुरुषों का चरित्र सुनने से कष्ट दूर हो जाता है, अबका भारतोदय 'महात्मा' के महनीय चरित्रों से भरा हुआ है, इसलिए मैं उसके पढ़ने की आप से सिफारिश करता हूँ।

इसी पत्र में 'शिक्षा' की समालोचना करने की चेष्टा की है। उसमें मैं एक गुस्ताखी कर बैठा हूँ। उसके लिए 'बसदअदब' वहां भी माफी मांग ली है, फिर भी मांगता हूँ। आशा करता हूँ कि श्रीमान् के उदार दरबार से माफ कर दिया जाऊंगा। संस्कृतोद्धार के व्रती महाविद्यालय के मुखपत्र 'भारतोदय' को जो कुछ

कहना चाहिए था वही वह कह कर अपना फर्ज अदा करने की चेष्टा उसने की है। मैं तो आपका वैसा ही नियाजमन्द और वशंवद सेवक हूँ, मेरा हार्दिक भाव आपसे छिपा नहीं है, इस कारण मुझे संतोष है कि इस चेष्टा का कुछ और अभिप्राय न समझा जायगा।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

(७९)

ओम्

अजमेर

श्रीयुत माननीय पंडित जी महाराज

प्रणाम

कई दिन हुए श्रीमान् का कृपापत्र मिला था। इस बीच में मेरी तबीयत कुछ खराब रही, इसलिये उत्तर में विलंब हुआ।

आज्ञानुसार सतसई की आलोचना जितनी साफ की हुई थी भेजता हूँ, बाकी ठहर कर भेजूँगा। इसमें आप जहाँ जहाँ परिवर्तन की बहुत ही आवश्यकता समझें वहाँ वहाँ कुछ कुछ रद्दोबदल कर दीजिए (हास्यरस को कायम रखकर)।

कृपा करके इस लेख का 'नामकरण संस्कार' भी आप ही कर दीजिए मुझे कोई अच्छा नाम नहीं सूझा, इसमें 'लीला' के लक्षण पर जो सा० द० का श्लोक है, यदि आवश्यकता समझिए तो उसका हिंदी अनुवाद कर दीजिए। इस रूप में इस आलोचना के देने का कारण आप स्वयं ही लिख दीजिए। मेरे उस पत्र से भी दो एक पंक्ति चाहे उद्धृत कर दीजिए। तथापि स्वयं भी कुछ लिख दीजिए। इसे शीघ्र ही, अगली संख्या से निकालना शुरू कीजिए। यदि हो सके तो भूमिका की आलोचना (जितनी इस समय भेजता हूँ) एक साथ ही...दीजिए।

इसमें जो महाविरे आदि की अशुद्धियां हों उन्हें ठीक कर दीजिए, और शुद्ध छपने का भी ध्यान रहे, क्योंकि यह विवादात्मक लेख है, इसकी मामूली-मामूली बातों पर भी युद्ध छिड़ जाने की संभावना है।

२–११ श्लोक और उतने ही उनके अनुवादन स्वरूप या समानार्थक, हिंदी भाषा के दोहे, छंद आदि भेजता हूँ। इन्हें सरस्वती में अवश्य निकाल दीजिए, किसी एक ही संख्या में, पर शीघ्र ही, खटाई में न डाल दीजिए। फिर और भी भेजूँगा मेरी राय में यह सिलसिला रोचक और काम का है। देखिए न 'आजाद' ने 'आबे

हयात' में इस प्रकार के समानार्थक—फारसी उर्दू के शेर कैसे ढूँढ कर रखे हैं। यदि इनका देना आप उचित न समझें तो मुझे वापिस भेज दीजिए, क्योंकि मैंने इनकी नकल नहीं रखी है, गुम न हो जायं, कई महीने की ढूँढ़ खोज का नतीजा है।

इनका 'शीर्षक' आप अपनी इच्छा के अनुसार कुछ रख दीजिए। जहाँ आवश्यकता समझिए नोट आदि भी दे दीजिए, मुझसे जल्दी में कुछ और नहीं हो सका।

हाल के मखजन में "बैरागी" नाम से, एक मुसलमान सूफी की नज्म निकली है, उसकी भाषा प्राय: ठेठ हिंदी है, भाव भी अच्छा है, मेरा विचार है, उसे नागरी में लिखकर 'सरस्वती' के लिये भेजूँगा, क्या भेज दूँ ?

हाँ, इन श्लोकों में 'अत्तुंवांछित—' श्लोक का उत्तरार्द्ध दो प्रकार से है, एक जैसा पंचपंत्र में है, और दूसरा ब० शा० पद्धति में, दोनों लिख दिये हैं, 'मेरी संमति में शा० पद्धति वाला पाठ अच्छा है उसे ही रखिए।

अपने स्वास्थ्य का समाचार लिखिए। जलचिकित्सा से कुछ लाभ हुआ।

विद्यावारिधि जी का यजुर्वेदभाष्य आपके पास हो तो लिखिए। वाणभट्ट की जीवनी भेजिए।

यदि सरस्वती के तबादले की फेहरिस्त में गुंजायश हो तो एक कापी 'परोपकारी' के बदले में हमें भी दिलवाइए।

कृपापात्र
पद्मसिंह

नोट—बिना तारीख का पत्र है।

(८०)

ओम्

महाविद्यालय
ज्वालापुर
२५—१०—१०

श्रीयुत मान्यवर द्विवेदी जी महाराज

प्रणाम

२१—१० का कृपाकार्ड मिला। आशा है अब ज्वर जुकाम से छुट्टी पाकर आप सर्वथा नीरोग होंगे।

काशीवास की इच्छा हो तो मैं भी क्या, हिंदी साहित्य सम्मेलन पर वैसा नोट लिखने वाले को ना० प्र० स० द्विवेदी जी की सिफारिश पर कोश का काम दे देगी? और यदि यह असम्भव बात हो भी जाय तो क्या पं० केदारनाथ पाठक तथा ला० भगवानदीन के साथ वैसा बर्ताव करनेवाली श्रीमती से हमारी पट जायगी? यह सब बातें सोच लीजिए। फिर जैसी आज्ञा हो।

भविद्धेय:—
पद्मसिंह शर्मा

(८१)

म० वि० ज्वालापुर
१०–११–१०

श्रीयुत परममाननीय द्विवेदी जी महाराज

प्रणाम

दोनों कृपापत्र यथासमय मिले और कार्ड भी। मैं आपकी इस कृपा का अत्यनुगृहीत हूँ। पर लक्षण कुछ ऐसे दीखते हैं कि मैं इस अवसर से लाभ न उठा सकूँगा। यहाँ के मु० न० पं० भीमसेन जी बंबई के गुरुकुल में ६०) पर जाते हैं, इस पर बड़ी हलचल मच रही है। मैंने जरा जाने का जिक्र किया था सो बड़े पंडित जी और पं० नरदेव जी आदि बिगड़ उठे। सब काम छोड़ने और वि० को तोड़ने पर तय्यार हैं। पं० भीमसेन जी वाला मामला जरा ठंडा हो जाय, तब इन लोगों को किसी प्रकार सांत्वना देकर पिण्ड छुड़ाने का प्रयत्न करूँ। बड़ा बेढब फंसा हूँ। बनारस से अभी कोई पत्र नहीं आया। 'सरस्वती' के लिए एकाध लेख भेजकर आज्ञा पालन करूँगा। पूज्या माता जी के स्वास्थ्य का समाचार लिखिए।

मैं परसों तक घर जानेवाला हूँ। पत्र आया है। पिता जी बीमार हैं, शायद १०–१२ दिन नायकनगला रहना पड़े।

दास
पद्मसिंह

(८२)

ओम्

नायकनगला

२३–११–१०

श्रीयुत माननीय द्विवेदी जी महाराज

प्रणाम

कानपुर से घर जाते समय आपने एक कार्ड भेजा था कि श्री पूज्या माताजी की बीमारी के कारण आप वहाँ जा रहे हैं, फिर कोई पत्र नहीं आया, आशा है, माताजी अब अच्छी होंगी और आप कानपुर आ गये होंगे। पिताजी की बीमारी की खबर पाकर मैं १३–११ को यहाँ आया था, अब वह अच्छे हैं। ३०–११ तक म० वि० पहुंचूँगा। 'सरस्वती' का चार्ज आपने ले लिया?

श्रीयुत शुक्ल जी की आज्ञा से 'बिहारी का विरहवर्णन' और इस विषय में उसकी अन्य कवियों से तुलना लेख की सामग्री मैंने इकट्ठी की थी, परंतु मुझे इसका बड़ा ही खेद है कि यथासमय वह लेख तैयार करके श्री शुक्ल जी की सेवा में न भेज सका, अब म० वि० में पहुंच कर उसे लिखूँगा। आज्ञा हो तो आपकी सेवा में भेज दूँ? कालिदास पर भी अवश्य लिखने की चेष्टा करूंगा।

उत्तर ज्वा० पु० भेजिए।

कृपापात्र

पद्मसिंह शर्मा

(८३)

महाविद्यालय

ज्वालापुर

१४–१–११

श्रीयुत मान्यवर पंडित जी महाराज

प्रणाम

पैंसली स्पेशल आज्ञापत्र आज मिला, जिस सिमय पत्र मिला, उस समय मैं म० वि० की अंतरंग मीटिंग में जा रहा था, इसलिए तुरंत-तत्काल उत्तर न लिख सका, क्षमा। साफ साफ लिखते मुझे दुख और भय है कि मेरे भाग्य की तरह आप भी कहीं मुझसे रुष्ट न हो जायं, मैं इस समय वहाँ या कहीं नहीं जा सकता। अभी उस दिन पश्चात्ताप के साथ मैं बनारसवालों को इन्कार लिख चुका हूँ, बनारस का वास और कोश का काम मुझे सब तरह पसंद था, मन के

अनुकूल था, परंतु क्या करूँ, नहीं जा सका, होली पर यहाँ का उत्सव है, इस साल सख्त मुकाबला है, इस वर्ष कांगड़ी वालों ने अपने यहाँ फीस माफ कर दी है, उसका कारण केवल महाविद्यालय, और 'भारतोदय' के लेख हैं। यह मन्तव्य उनके यहाँ रहेगा नहीं, यह निश्चित है, सिर्फ महाविद्यालय को विनष्ट करने के लिए ही यह मायाजाल फैलाया गया है, महाविद्यालय के उत्सव की सफलता पर ही म० वि० की स्थिरता निर्भर है, श्री पं० भीमसेन जी के चले जाने से म० वि० को कुछ हानि पहुंच चुकी है, अब ऐसी दशा में मेरे चले जाने से लोग कहते हैं कि सख्त नुकसान पहुंचेगा, उत्सव सफल न हो सकेगा महात्मा का मनोरथ सिद्ध होगा, हँसी उड़ाने का मौका मिलेगा—

"भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।"
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम्॥"

मुझे अपने लाघव या गौरव का तो इतना ध्यान नहीं है, पर मेरे कारण म० वि० को कुछ हानि न पहुंच जाय, इसका खयाल जरूर है, सच जानिए मैं बुरी तरह फंसा हूँ, पिछले दिनों परोपकारिणी के मंत्री श्री शाहपुराधीश ने वैदिक प्रेस की मैनेजरी के लिए डबल तार दिये, पत्र भिजवाए कि फौरन चले आवो, पर मैं नहीं जा सका, इन लोगों ने वावैला मचाकर नहीं जाने दिया, वह ६५) की जगह थी। जब कभी ऐसा प्रसंग आता है, कही जाने का इरादा होता है या कहीं से बुलावा आता है तो लोग कहने लगते हैं कि तुम रुपये के लालच से जाते हो, सो यहीं से उतने ले लो"—और यह मुझसे गवारा नहीं हो सकता। यहाँ की दशा ऐसी नहीं कि और जरूरी काम चलाकर म० वि० इतना वेतन दे सके। यह गले पड़ा ढोल जबरदस्ती बजवाया जा रहा है, सो जिस प्रकार भी हो, आगामी उत्सव तक तो इसमें और भी डंके लगाने ही पड़ेंगे, उसके पश्चात् यहां से छूटने का पक्का इरादा कर लिया है।

वाजिब था सो अर्ज किया, उम्मीद है कि हुजूर फिरदी की दरख्वास्त की समाअत फर्मावेंगे।

श्री शुक्ल जी से मुलाकात हुई? वह अच्छे तो हैं?

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

परसों रात यह पत्र लिखा, टिकट नहीं था, कल आदित्यवार था, इसलिए न मिला, सो आज भेजता हूँ।

पद्मसिंह शर्मा

(८४)

महाविद्यालय
ज्वालापुर
२८-१-११

श्रीयुत माननीय द्विवेदी जी महाराज

प्रणाम

श्रीमान् का कृपापत्र यथासमय मिला, दो तीन दिन से तबीअत खराब थी, इसलिए उत्तर में विलंब हुआ क्षमा कीजिए।

इंडियन प्रेस को लिख दीजिए कि यदि उन्हें कोई काम का आदमी मिले तो मेरे लिए न रुकें, मैं अभी ठीक नहीं कह सकता कि उत्सव के पीछे भी वहाँ जा सकूँगा या नहीं। बनारस वाले भी अभी सर हैं, वह भी होली तक ठहरने को कहते हैं। उन्हें भी यही उत्तर दिया है।

'कालिदास की निरंकुशता' पर कई महाशय बेतरह बिगड़े हैं, इस ऊपरी दवा से नाक भौंह चढ़ा रहे हैं। ऐसी आलोचनाएं सुनने के लिए अभी हिंदी जगत् तयार नहीं है, इस प्रकार की सामग्री अभी इसके लिए असात्म्य है। आश्चर्य नहीं कि इस बार भी अनस्थिरता वाला वितंडा खड़ा हो जाय। अस्तु।

कई महशय बा० मैथिलीशरण जी की कविता पर ही खार खाये बैठे हैं!

'सरस्वती' और 'मर्यादा' के सापत्य भाव पर भी लोगों में चेमगोइयां शुरू हो गई हैं, एकाध आदमी मिले, जो मर्यादा की आड़ लेकर सरस्वती को लक्ष्य बनाने की फिकर में हैं, 'सरस्वती' और 'अहले सरस्वती' (?) के लिए यह साल जरा जद्दोजदह का रहेगा, इसलिए विशेष सावधानता की जरूरत है।

हां, 'काव्यप्रभाकर' तीन चार दिन हुए हमारे पास भी आया है, उसमें दो स्थानों पर श्रीमान् का उल्लेख है, वहाँ तो आपकी प्रशंसा ही है, खड़ी बोली की कविता करनेवालों को आपके अनुकरण का उपदेश दिया है। जहाँ तक मैं समझा हूँ उसमें किसी प्रकार का व्यंग भी नहीं है। हाँ, मैथिलीशरण जी की कविता पर शायद वह भी रुष्ट मालूम होते हैं, क्योंकि उनकी कविता का कहीं उल्लेख तक नहीं किया। अस्तु, मेरी राय में यदि उक्त पुस्तक की वह समालोचना छपे तो मै० श० जी के नाम से कदापि न छपनी चाहिए, लेखक की जगह समालोचक या कोई और कृत्रिम नाम रहे। उनके नाम से छपने पर उनकी कविता के द्वेषियों को एक बहाना उन पर हमला करने के लिए हाथ आ जायगा।

'शिक्षा' में 'मर्यादा' की समालोचना करते हुए एक महाशय ने लिखा है: मर्यादा में बा० मै० श० जी की भी कविताएं होती हैं, सुना है बा० मै० श० की प्रतिज्ञा थी कि मैं 'सरस्वती' को छोड़कर और कहीं न लिखूँगा" इत्यादि। एक छोटी सी कविता हमने भी बा० मै० श० जी से 'भारतोदय' के लिए लिखाई है, उससे उक्त समालोचक की उस ध्वनि का खंडन हो जायगा, अर्थात् जब उक्त कवि 'भारतोदय' जैसे रद्दी पत्र में कविता दे सकते हैं तो मर्यादा के लिए यह कोई फरक की बात नहीं। इससे केवल कवि की उदारता ही प्रकट होती है। ठीक है न? इसे ध्यान में रखकर मै० श० जी को 'सामान्याः' का खिताब न दीजिए, यह प्रार्थना है।

एक हफ्ता हुआ हरद्वार में अमेरिका से लौटे हुए मि० भोलादत्त पांडे का विधिवत् प्रायश्चित हुआ था, उस समय हमें भी उनके दर्शन हुए, बेचारों को बिरादरी ने बुरी तरह तंग कर रखा है, परेशान हैं। कहते थे हमने एक आर्टिकल 'सरस्वती' को भेजा है, जाने छपेगा या नहीं। आपने आशा दिलाई थी, पर शुक्ल जी का पत्र हमें नहीं मिला। 'सरस्वती' में शुक्ल जी का चित्र छाप दीजिए तो हमें भी उनके दर्शन हो जायं। 'राम' वाला असल लेख मिला या नहीं?

म० वि० का उत्सव १२, १३, १४, १५ मार्च को होगा इस बार तो अवश्य पधारिए। बड़े पंडित जी और नरदेव जी का विशेष आग्रह है।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

(८५)

ओम्

महाविद्यालय, ज्वालापुर
२२–३–११

श्रीयुत माननीय द्विवेदी जी महाराज

प्रणाम

१.३–३ का कृपापत्र यथासमय मिल गया था, उत्सव के कार्य में व्यग्र रहने के कारण उत्तर में विलंब हुआ।

यह ठीक है कि आपने कुछ लिखने का इसरार नहीं किया, परन्तु मैं तो आपके इशारे को ही इसरार से बढ़कर मानता हूँ, और चाहे आप इशारा न भी करें, तो भी आपके विरुद्ध लिखनेवाले के विरुद्ध कुछ लिखने को स्वयं जी चाहा करता है,

मैं आपके लेख से अब भी सहमत हूँ। इस विषय में आपका अणुमात्र भी अपराध नहीं समझता, आपने वही किया है जो पहले साहित्यवेत्ता करते आये हैं, और प्रायः पुरानी उक्तियों को ही दोहराया है। परंतु कालिदास में बढ़ी हुई भक्ति ने मुझे निरंकुशता की पुष्टि में लिखने से रोका, इच्छा होने पर भी हृदय से प्रेरणा नहीं हुई कि कुछ लिखूँ, इसीलिए अपना हृदयस्थ भाव साफ साफ लिख देने के लिए आपसे माफी मांगी थी।

यह सच है कि आपने मेरे हृदयस्थ भाव के विषय में कभी शंका नहीं की, परंतु भारतोदय के 'तीष्ण' कटु पुँड़ियावाले नोट पर समुचित दंड मिल जाने के कारण मैंने यह समझ लिया था कि आपको मेरे हृदयस्थ भावों पर शंका होने लगी है, "सेव्योजनश्च कुपितः कथन्नु दासो निरपराधः" (निरंकुश—कालिदास)।

आपने भारतोदय को दंड देने का कारण लिखते हुए "दुश्मन दाना बेहअज दोस्तनादान' लिखकर सेवक को 'नादान दोस्त' ठहराया था, अतः उसने 'नादान सेवक' वनकर कोई भारी भूल नहीं की।

आपका वही 'नादान सेवक'
पद्मसिंह शर्मा

(८९)

म० वि० ज्वालापुर
२८-९-११

श्री माननीय द्विवेदी जी महाराज

प्रणाम

आशा है आप प्रयाग से वापिस आ गए होंगे, क्या आप भी सम्मेलन में शरीक हुए थे?

गीता के चित्रों के विषय में कुछ निश्चित हुआ? कोई पसंद आया?

खबर मिली थी मिस्टर सत्यदेव आपसे सुलह करने तशरीफ ले गये थे, क्या यह ठीक है? सुलह हो गई?

कोई कहता था कि मि० देव गुप्त रूप से या प्रकाश रूप से मर्यादा के संपादक नियत हुए हैं? एवमेतत्?

इससे पूर्व का पत्र पहुंचा होगा।

आज एक और कटिंग भेजता हूँ, यह छोकरा बेतरह सिर हुआ है, कनेठी की जरूरती है।

बिंब प्रतिबिंब वाले पद्य सब निकल चुके या अभी कुछ बाकी पड़े हैं ? यदि बाकी हैं तो कितने एक ? उनमें से कुछ ऐसे तो नहीं हैं जो प्रकाशित करने योग्य न समझ कर रख छोड़े हों ?

यदि कुछ ऐसे हों तो मुझे लौटा दीजिए। मेरा विचार है कि ऐसे पद्यों की सौ संख्या पूरी हो जाने पर (और 'सरस्वती' में प्रकाशित हो चुकने पर) उन्हें पृथक् ट्रेक्ट के रूप में छपवाऊँ।

क्या कृपा करके आप यह बतला सकेंगे कि बिंब प्रतिबिंब वाले पद्य सरस्वती की कितनी संख्याओं में निकल चुके हैं ? मेरे पास सरस्वती का पिछला पूरा फाइल नहीं है, और न पद्यों की नकल है, इसलिए यह कष्ट आपको देना चाहता हूँ। आज इस प्रकार के १६ पद्य और भेजता हूँ, इन्हें भी प्रकाशित करने की कृपा कीजिए। 'असम्भुखालोकन अभिमुख्यं" और इसके प्रतिबिंबवाले पद्य को देखिए कैसा मजेदार है!! 'किमसुभिर्ग्लपितैर्जडमन्यसे" का भाव 'रसलीन' ने अपने दोहे में कैसा भरा है ?

पहले मुसलमान हिंदी कवियों को भी संस्कृत का कितना बोध होता था ?

आजकल 'अभ्युदय' के संपादक कौन हैं ? क्या "हालना" जी अब वहाँ नहीं हैं ?

क्या 'मर्यादा' स्वयं भी 'सरस्वती' के विरुद्ध कुछ बोली है ? या 'अभ्युदय' को ही अपना वकील बनाया है।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

(८७)

महाविद्यालय
ज्वालापुर
३–१०–११

श्रीमत्सु सादरं प्रणतयः

कृपापत्र और कंपोजित (?) उत्तर मिला, कल 'सरस्वती' भी मिली, बहुत दिनों बाद आपकी कविता पढ़कर जी खुश हुआ, गद्य लेख भी पढ़ा, मालूम होता है अब के सा० सम्मेलन का मैदान आपके ही हाथ रहा ? अफसोस, उस मौके पर 'यार था गुलजार था, बादे सबा थी मैं न था'।—

क्या कहूँ 'सरस्वती' के लिए कुछ लिखने को तो जी चाहता है, पर अब हाथ काम अच्छी तरह नहीं देता, 'कलामेअकबर' का द्वितीय भाग मंगाया है, वह आ जाय तो दोनों भागों से कविता के कुछ नमूने और चरित लिखकर, वह पूर्व प्रतिज्ञात लेख भेजने की चेष्टा करूँगा, "सिद्धिस्तु दैवेस्थिता"—पिछले वर्ष सम्मेलन के लेखों से 'मर्यादा' कई महीने गुजारा करती रही, अबके आपने समय से भी एक हफ्ता पूर्व 'सरस्वती' निकाल कर उस बेचारी के लिए कुछ न छोड़ा। मूँड़ पकड़ कर रोवेगी। सत्यदेव जी के स्थान की पूर्ति मिश्र जी से कराइए, बहुत अच्छा लिखते हैं। गुलिस्तां के अनुवाद पर आपने अच्छी समालोचना नहीं की, अनुवाद, अच्छा नहीं हुआ, मैंने भी वह देखा है, अक्षरानुवाद की धुन में कारनहसी महावरों तक का अनुवाद कर डाला है।

दास
पद्मसिंह शर्मा

(८८)

ओम्

महाविद्यालय
ज्वालापुर
१२-१-१२

श्रीमत्सुनतम:

मि० धर्मपाल का 'इंद्र' साप्ताहिक रूप में निकला है, उसका १म, अंक आज की डाक से भेजता हूँ। पढ़िए, महात्मा और गु० कु० संबंधी कई रहस्य मालूम हो जायंगे, इसमें आपको कुछ मजा आवे तो आगे को और भी भेजता रहूँ? इसे पढ़ जरूर लीजिए।

'प्रचारक' की कटिंग भी भेजता हूँ, उसमें 'निरंकुशता निदर्शन' की समालोचना पढ़िए।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

(८९)

महाविद्यालय
ज्वालापुर
१४-५-१२

श्रीयुत माननीय द्विवेदी जी

प्रणाम

१३ ता० के दोनों कृपाकार्ड आज मिले, कृतार्थ हुआ। 'सत्यग्रंथमाला' में कायर महात्मा के चपत लगाये जाने की बात पढ़ने की प्रबल उत्कंठा है, मुझे पता मालूम नहीं वह कहां से मिलेगी, कृपया आप लिख दीजिए कि एक कापी वी० पी० से हमें भेज दें। एक दरजन से अधिक झूठ क्या, वह तो इतना झूठ बोलता है, जितने कि उसके शरीर में रोए भी नहीं।" पारेपार्द्धगणितंयदिस्यात्"...तो उसके सारे झूठ गिने जा सकें। 'भास्कर' में 'दिल्ली दरबार' पर भी आपकी दृष्टि पड़ गई और उसमें आपको आनंद आ गया तो लेखक का काम सफल हो गया, वह लेख दरअसल मैंने 'भारतोदय' के लिये लिखा था, पर उसमें समय पर निकल न सका, इसलिए 'भास्कर' को भेज दिया, वह मुद्दत से सिर था कि कुछ भेजो, यदि मैं यह जानता कि श्रीमान् को वह पसंद आ जायगा तो वहीं भेज देता। अस्तु, गीता के विषय में आज पं० रामजीलाल जी का भी कार्ड आया है कि मार्च के अंत तक काम पूरा होगा। मैंने उन्हें लिख दिया है कि तबतक रहने दें।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

(९०)

ओम्

ज्वालापुर, महाविद्यालय
२६-२-१३

श्रीयुत द्विवेदी जी महाराज

प्रणाम

मैं १५-२-१३ को यहाँ से लाहौर डिपुटेशन में गया था, आज वापस आया हूं, पीछे श्रीमान् का कृपाकार्ड पहुंचा, पढ़कर खेद हुआ, मुझे आप जैसे सहृदय विद्वान् से ऐसे रूखे सूखे उत्तर की आशा न थी। श्रीमान् को याद होगा अबसे कई मास पूर्व जब आपने प्रेस के लिये कुछ काम भेजने के लिये मुझे लिखा था, तब

मैं इन निबंधों के छपाने के बारे में आपको लिखा था, आपने स्वयं प्रूफ पढ़ने और शुद्ध छाप देने की आशा दिलाई थी, लिखा था कि प्रेस के संस्कृत प्रूफ मैं स्वयं पढ़ता हूं, इत्यादि—उसी भरोसे मैं श्रीमान् की सेवा में यह गुस्ताखी कर बैठा, खता माफ हो। मुझे यह मालूम नहीं था कि श्रीमान् को 'प्रूफ पढ़ने के लिये फुरसत नहीं"।

आप शिकायत करते हैं कि "जो काम आपके यहां आसानी से हो सकता है उसे मैं अन्यत्र भेजता हूं"।

मैं आपको शपथपूर्वक विश्वास दिलाता हूं कि मैं हर्गिज ऐसा नहीं करता, जबसे आपका प्रेस कायम हुआ है मैंने कोई काम कहीं छपने नहीं भेजा है, विद्यालय के काम से मुझसे कोई संबंध नहीं है, म० वि० के मुख्याधिष्ठाता और मंत्री जहां उचित समझते हैं, विज्ञापन आदि छपाते हैं, मेरा उसमें कोई दखल नहीं है, मेरा अपना कोई काम नहीं है, पं० यंदुशर्मा से पुस्तक मैंने प्रेरणा करके आपके प्रेस में भिजवाई है, और भी मिलनेवालों से प्रेरणा करता रहता हूँ, कई कारण है कि मैं विद्यालय के काम में दखल देना नहीं चाहता।

"निबंध" आपके यहां क्यों छपाना चाहता हूँ, यह मैंने सविस्तार अपने पहले पत्र में निवेदन कर दिया था, सुपाठ्य और शुद्ध काम आपके यहां इसलिये छपाना चाहता हूँ कि आप इस योग्य हैं, मैं कुछ हक आप पर और आपके प्रेस पर अपना समझता हूँ, आपने ऐसी ही आशा भी दिलाई थी, अब मालूम हुआ कि ऐसा नहीं हो सकता, बहुत अच्छा, तथास्तु।

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

(९१)

ज्वालापुर
७-३-१३

श्रीयुत माननीय द्विवेदी जी

प्रणाम

कृपापत्र मिला, पढ़कर दुख हुआ। मुझे यह मालूम नहीं था, अपराध क्षमा हो। उत्सव के पश्चात् आपकी आज्ञा का पालन करूंगा, कोई लेख अवश्य भेजूँगा।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

श्री पं० पद्मसिंह शर्मा जी के पत्र
पं० श्रीधर पाठक जी के नाम

(१)

नायकनगला,
चांदपुर (बिजनौर)
वैशाख कृ० ८, १९८०.

श्रीमत्सु कवि-मार्मिक-मूर्धन्येषु "परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्यनित्यं निज हृदि विकसन्तः सन्तिसन्तः कियन्तः" इत्यभियुक्तोक्ति स्वोदाहरणेन कालावपि चरितार्थमत्सु परमोदारचरितेषु श्रद्धाभाजनेषु श्री प्रदेषु' श्री श्रीधरचरणेषु साञ्जलिबन्ध भूयोभूयः प्रणम्य निवेदयति।

आपकी उदारता और कृपा का नितान्त अनुगृहीत हूँ। श्रीमान् ने मेरी तुच्छ रचना को इतना आदर दिया, इसका कारण केवल आपकी महानुभावता है, धन्यवाद प्रदान और कृतज्ञता प्रकाशन करके मैं इस उपकार से 'उऋण' नहीं हो सकूँगा।

श्रीयुत पं० जगन्नाथप्रसाद जी चतुर्वेदी से मुझे आपकी इस कृपा की "तफ़सील" मालूम हुई थी, मेरा विचार था कि कानपुर से मैं प्रयाग आपके दर्शनार्थ आता, श्री वियोगीहरि जी ने आपका आदेश भी कहा था, पर दुर्भाग्यवश मैं उधर न आ सका, इसका मुझे पश्चात्ताप है, इसका प्रायश्चित कभी करूंगा।

आपका २२/३ का कृपाकार्ड देहली के पते पर भेजा हुआ, मुझे २८/३ को सम्मेलन जाते वक्त यहां मिला था। उससे पहला १७–३ का पत्र जिसका इस कार्ड में उल्लेख है, मुझे नहीं पहुंचा। मैं देहली से २२–३ को यहां चला आया था, यह दिन बड़ी विपत्ति में कटे, छोटे भाई की स्त्री बीमार थी, उसका देहान्त हो गया, इस कारण मैं न आपको पुस्तक भेज सका, न पत्र लिख सका।

भूमिका और भाष्य का संयुक्त संस्करण भेज रहा हूँ, स्वीकार कीजिये। कृपा दृष्टि रखिये।

कृपापात्र
पद्मसिंह शर्मा

पुनश्च :—

पुस्तकें देहली से आ रही हैं, आशा थी कि पत्र रवाना करने तक पहुंच जायंगी, पर अब तक नहीं आईं। पत्र और पुस्तक साथ ही भेजने का विचार था। इसलिए पत्रको कई दिन रोके रहा। पुस्तक आनेपर फौरन भेजूँगा।

पद्मसिंह शर्मा

श्री पं० पद्मसिंह शर्मा जी के पत्र
श्री लल्ली प्रसाद पांडेय जी के नाम

(१)

१. मैं कोई राय नहीं कर सकता।
२. डिटेल देता हूँ। पसन्द आ जाय तो मंगवाइए।
२१।२।१८

बनारस
नन्दन साहू की गली
भाद्र सुदी १०, ७५

पांडेय जी महाराज

प्रणाम

इंडियन प्रेस में कुलपति कृत "रस रहस्य" छपा है या छपा था, वह मिलता हो तो उसकी एक कापी मेरे नाम वी० पी० द्वारा शीघ्र भिजवा दीजिये, उक्त पुस्तक विद्यावारिधि जी के भाई बलदेवप्रसाद मिश्र द्वारा छपी है इसलिये जरा एक दृष्टि डालकर देख लीजिये, कुछ काम की है कि नहीं, आपको कष्ट इसीलिये देता हूँ। कुशल समाचार लिखिए।

श्रीयुत पंडित लल्लीप्रसाद जी पांडेय
"बालसखा विभाग"
इंडियन प्रेस, कटरा, इलाहाबाद

भवदीय
पद्मसिंह शर्मा

(२)

ॐ

बनारस
२४-९-१८

पांडेय जी महाराज

प्रणाम

कृपाकार्ड मिला। स्कीमसुधार के अनुवाद की गवर्नमेंट जांच कर रही है, यह सुना गया है।

रसरहस्य के कर्ता कुलपति सतसईकार बिहारी के भानजे थे, ऐसा कई लोगों ने लिखा है। उससे कुछ बिहारी के सम्बन्ध में जाना जा सकेगा। इसलिये भिजवा दीजिये। एकाध बात किसी विषय में मालूम हो गई तो दाम वसूल है। इंडियन प्रेस में चित्र का ब्लाक बनवाने के क्या नियम हैं ? सतसई छप रही है, गौड़ जी कहते हैं कि उसमें मेरा चित्र भी रहे। पुस्तक का १ भाग विजयदशमी तक निकल जायगा। इस बीच में ब्लाक बनकर चित्र छप सकेगा। क्राउन १६ पेजी साइज का चित्र होगा। २००० कापियां छपेंगी। यदि यह काम सुचारु रूपेण वहाँ हो सके तो मालूम करके लिखिए।

श्रीयुत पंडित लल्लीप्रसाद जी पांडेय — भवदीय
"बालसखा विभाग" — पद्मसिंह शर्मा
इंडियन प्रेस, प्रयाग

(३)

ओम्

पांडेय जी — बनारस, नन्दनसाह की गली
प्रणाम — २–८–१८

अचानक आपका पत्र और पता पाकर आश्चर्यचकित और हर्षान्वित हो गया हूँ। अज्ञातवास का कुछ कारण न विदित हुआ, बहुत कुछ पूछना और कहना है। "प्रहसन" का मसविदा जरा भेज दीजिये तो किसी प्रशासक पारखी को दिखलाऊँ, शायद किसी की नजर पर चढ़ जाय। बाकी फिर कभी।

श्री लल्लीप्रसाद जी पाण्डेय — भवदीय
इंडियन प्रेस, प्रयाग — पद्मसिंह शर्मा

(४)

ओम्

बनारस
नन्दनसाह की गली
२०–८–१८

पांडेय जी महाराज नमस्तेस्तु

१७–८ का कृपाकार्ड मिला। प्रहसन की प्रतिलिपि का पैकट मुझे यथासमय मिल गया था, उसकी पहुंच और चिट्ठी का संक्षिप्त उत्तर मैंने उसी दिन लौटती डाक से भेज दिया था, न मालूम क्यों नहीं पहुंचा।

इंडियन प्रेस का पता लिखा था, पत्र पहुंचना चाहिए था, आप वहां दरयाफ्त कीजिये।

प्रहसन की कापी मैं अभी नहीं देख सका, यथावकाश निश्चिन्तता से देखना चाहता हूँ, जैसी आप चाहते हैं वैसी यहां न छप सकेगी और बहुत देर में छपेगी यदि संचालक को पसन्द आ गई तो "हिन्दी पुस्तक एजेन्सी कलकत्ता "शायद शीघ्र प्रकाशित कर सके, उनसे बातें की जायंगी। बालसखा की तुकबन्दी के लिये कलकत्ते के प्रेमपुष्प के कवियों से बातें कीजिये तो शायद काम बन जाय।

भवदीय

पद्मसिंह शर्मा

श्रीयुत पंडित लल्ली प्रसाद जी पांडेय
इंडियन प्रेस, "बालसखा विभाग"
दि इंडियन प्रेस,कटरा, इलाहाबाद

श्री पं० श्रीधर पाठक जी के पत्र द्विवेदी जी तथा शर्मा जी के नाम

(१)

श्री प्रयाग
१६–४–०५

श्रद्धेय मित्र

क्या पूर्व पो० का० ने आपको अप्रसन्न कर दिया ? मैं उस विषय में आपको बहुत दिनों से लिखने वाला था, पर आलस्य रोकता रहा, हिन्दी में पो० का० इसलिये भेजा कि हिन्दी वालों से हिन्दी के वि० में हिन्दी ही में लिखने का संकल्प है—आप औदस्य भाव छोड़ जरा इधर मुँह मोडिये—तबीयत तो अच्छी है ?

कृपैषी
श्रीधर पाठक

(२)

श्री प्रयाग
२०–४–०५

प्रिय सखे

दौलतपुर से भेजा हुआ १४ ता० का पो० का० प्राप्त हुआ। सर्वनाम आदि के व्यवहार की नई रीति जी में बहुत दिनों से खटक रही थी। थोड़े से उदाहरण यहां देता हूँ—

१. उसने कहा "हरे कृष्ण !" और (वह) चल दिया—यहां "वह" का प्रयोग प्रचार विरुद्ध है यद्यपि व्याकरण से शुद्ध है।

२. जब वह चीखा (तब) मैं चौंक पड़ा। यहाँ "तब" बे मुहाविरा है—"तो" होना चाहिए। प्रायः "तब" (प्रचार के अनुसार) जब के बाद छोड़ दिया जाता है—परन्तु अब उसके निरन्तर वा निर्विकल्प व्यवहार की परिपाटी पड़ती जाती है—

३. जहां "यह", "इन" काफी हैं, वहां "यही", "इन्ही" लिखना [बल्कि "इनही" (इन्हीं के स्थान में)] —

४. 'पूर्णरूप से', 'पूरे रूप से' वा 'पूरी रीति पर" के स्थान में 'पूर्णतया'—

५. "कृपा करके" के स्थान में "कृपया"—

६. 'ही' और 'भी' का निरर्थक बाहुल्यता से व्यवहार—

इस प्रकार की अनेक बातें हैं जो अपने को अच्छी नहीं लगतीं—मेरी अल्प-बुद्धि में ये सब रोचकता की बाधक हैं।

इसमें सन्देह नहीं है कि जब यह नई रीति प्रचार पाकर पुरानी हो जायगी यही मुहाविरा हो जायगी और रुचने लगेगी पर पुराने मु० के बदलने से लाभ क्या ? इस व्यर्थ उलट पलट से कौन बड़ा प्रयोजन सिद्ध होगा ?

जो लोग सैकड़ों बरसों के व्यवहार से बने हुए मुहाविरों को बोलते, सुनते और लिखते पढ़ते रहे हैं उन्को इस नूतन रीति से व्यवहृत शब्द अवश्य खटकते हैं।

निबन्ध लिखने को यहां न अवकाश है, न इधर अधिक रुचि है, पर मित्रों को जबतब सुझा देना, अपनी प्रकृति और धर्म के अनुकूल है—अतएव आपको कष्ट दिया गया।

निश्छल तुम्हारा
श्रीधर पाठक

नोट—इस पत्र में पूर्ण विराम के स्थान में हायफन (-) दिया गया है। 'उन्का' आदि प्रयोग भी द्रष्टव्य है। वर्तनी की दृष्टि से भी यह पत्र ऐतिहासिक महत्व का है।

(३)

श्री: ओम श्री:

श्री प्रयाग
२२-८-०५

श्रद्धेय मित्र

आपका समस्तीपुर का लिखा हुआ पत्र कल चन्द्रवार को मुझे दफ्तर में मिला—

मैं आपका ध्यान नीचे लिखी हुई दो चार स्थूल बातों पर दिलाता हूं जो आपके लेखों में प्रचुरता से पाई जाती हैं—

१. कर्ता को प्रायः सर्वत्रैव प्रकट रखना, अर्थात् जहां उसे पुरानी प्रथा के अनुसार गुप्त रहना चाहिये वहां भी उसका लाना—इससे अरोचकता उत्पन्न होती है और मुहाविरे का मजा मारा जाता है—आप की रीति के अनुसार निम्न वाक्य अशुद्ध हैं—

(क) "ट्रवेबिक इस सब से बहुत ही प्रसन्न हुआ और खान के पास पहुंच कर अपने इञ्जिनों में और भी बहुत सी उन्नति की तथा नई नई कलें बनाने लगा।"

क्योंकि इसमें "अपने" के पहले "उसने" छूटा हुआ है, अथच "बनाने लगा" का कर्त्ता "वह" भी नहीं प्रकट है; अर्थात् "उसने" और "वह" ऊपर निर्दिष्ट स्थानों में अवश्य होने चाहियें—

पर मुहाविरे (प्रचलित प्रथा) की रू से इस वाक्य में कोई गलती नहीं है, बल्कि कर्त्ता के दो जगह गुप्त रहने ही से इसमें रोचकता है—ऐसे ही ये दो और

(ख) महादेव जी उसको पी गये पर कण्ठ से नीचे नहीं उतरा*

(ग) आगरे के "राजपूत" पत्र के आफिस से एक नया मासिक पत्र "स्वदेश* बान्धव" के नाम से निकला है। चल जाय तो अच्छा है।

'ख' में 'पर' के बाद 'उन्होंने उसे' लुप्त है, और 'ग' में 'चल जाय' का कर्ता 'वह' छिपा हुआ है—

निम्न २, और ३, संख्यक बातें आपके सूत्र हैं—

२. 'जब', 'जब तक', 'जिस समय' इत्यादि के बाद 'तब', 'तब तक' 'उस समय' आदि का बिना विकल्प बर्ताव—

३. 'जब' के बाद 'तो' के प्रयोग का निषेध—

४. 'हुआ' के स्थान में 'गया' का प्रयोग; यथा—

---

* कहीं का कटिंग।

"इस अध्याय में वर्णन किया गया विषय"—

ये सब प्रचलित प्रथा के प्रतिकूल हैं—

गत जुलाई की "सरस्वती" में "पुस्तक परीक्षा" के अन्तर्गत कई एक बातें हमें ठीक नहीं जचतीं—

मैं कोई नवीन प्रणाली निकालना नहीं चाहता, परन्तु शिष्ट सूक्ष्म प्रथा का परम पक्षपाती हूं-मुझे राजा शिवप्रसाद, पं० राधाचरण गोस्वामी, लाला बालमुकुन्द गुप्त की लेख शैली बहुत रुचती है— और मुझे असीम प्रसन्नता हो यदि आप इन सुलेखकों का अनुसरण कर सकें।

आशा है उत्तर भेजियेगा—

आपका स्नेहभाजन
श्रीधर

(४)

श्रीप्रयाग
१५–१२–०५

दयालु मित्र

१२ के पो० का० का धन्यवाद है—कृपा करके लिखियेगा कि आनेवाले अधिवेशनों के दिनों आप काशी पधारेंगे या नहीं—मेरा भी जाने का विचार है—पर ठहरने के लिये ठौर का ठिकाना नहीं है—आप जायंगे तो कहां उतरेंगे ? जो हो, जो मैं गया तो आप से जरूर मिलूँगा और उसी समय "सूक्ति कार्ड" आपको भेंट करूंगा—

कृ० का०
श्रीधर पाठक

(५)

श्रीप्रयाग
२७–४–०६

गोप्य (Confidential)

I hope you will feel offended at this letter.

प्रिय मित्र

जब आपका पत्र आया तब हम खाट में पड़े थे। हम उसको पाते ही खाट से उठ पड़े और हमने उसमें लिखी गयी बातों का पूर्णतया विचार किया। कहना न

होगा कि जैसे ही हमने ऐसा किया वैसे ही हमारे हृदय अपांपति में हिंदी साहित्य संसार के बाबत एक नहीं अनेक विलक्षण आनन्द-प्रद तरंग-ततियां उठीं और हमने खयाल किया कि अवश्यमेव आपने अपने उक्त पत्र में केवल मैत्री धर्म के लिहाज से ही हमको ऐसा कृपापूर्ण उत्तर दिया है; अर्थात् आपने उस्में आज्ञा की है कि "यदि आप वर्तमान हिन्दी प्रणाली के—फिर चाहे वह प्रणाली हमारी ही क्यों न हो—दोष दिखावेंगे तो हम जरूर आपके लेख का सादर और सधन्यवाद विचार करेंगे।"

मैं आपकी उपर्युद्धृत की गयी आज्ञा के मुताबिक बीमारी से रिहाई पाने पर उक्त विषय पर लेख भेज दूँगा—

प्रियवर, यह एक टूटा फूटा उदाहरण आधुनिक हिन्दी प्रणाली का आपके "विचार" के अर्थ भेजता हूँ। यह आजकल के कई एक प्रसिद्ध लेखकों का प्रतिनिधि स्वरूप है; यथा, पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी, पं० श्या० वि० मिश्र, शु० दे वि० मिश्र, पं० गंगाप्रसाद अग्नि हो०, पार्वतीनंदन, बंग महिला, आदि आदि—And I do not think, I have overdone the picture; on the contrary I feel certain I have somewhat fallen short of the standard. Kindly let me have your views freely on the point.—

I am doing with Orchitis

Your sincerely
S. Dhara pathak

(६)

(स्थान का नाम नहीं है)
६–५–०६

मित्रवर्य

१. कृ० का० का धन्यवाद।

२. कविता तो आपको पसंद आई, पर, शायद वार्तिक को आप निर्दोष न समझते होंगे? क्योंकि उस्में 'सर्वनाम' बड़ी स्वतंत्रता पूर्वक छोड़ दिया गया है (छोड़ना का अर्थ यहाँ डालना नहीं है). कृपाकर लिखियेगा—

३. "आराध्य शोकांजलि" की प्रति आपको उपहरण करने में मैं एक गलती कर गया हूँ—मैंने "द्विवेदिषु" लिखा है या "द्विवेदिसु"? मुझे स्मरण नहीं है।

४. आप यहां कब पधारेंगे? एक दिन पहले मुझको लिख दें तो अच्छा हो—

५. अगर दो चार कापियां "आ० शो०" की आप कानपुर में बंटवा सकें तो भेज दी जायं—तकलीफ दिट्ट मुआफ़ कीजियेगा—

कृपैषी
श्रीधर पाठक

(७)

या ६२ श्री प्रयाग
श्रावणी १९६१

मित्रवर

ता० १३ का पो० का० प्राप्त—

आप तो कुछ खफा से हो चले! मैं मुआफ़ी माँगता हूँ—मित्रों में विवाद उठना सचमुच अनुचित है—

मैं आपके पत्र की उन्नति की नीयत से मित्रता की रीति पर आपको दो एक बातें सुझाने का अभिलाषी था—आपसे विरोध खड़ा करना मेरा अभिप्राय न था—जो बातें किसी व्यक्ति की समझ में जम कर मत रूप हो गयीं हैं उन्में यदि किसी दूसरी व्यक्ति के द्वारा किसी प्रकार के परिवर्तन का प्रस्ताव हो तो वह प्रथम अवश्य असह्य होता है प्रकृत्या पर मैं समझता हूँ कि जहां शुद्ध सौहार्द्र प्रसूत अभिन्न हृदयता रहती है वहां उक्त कक्षा की असह्यता उत्पन्न नहीं होने पाती—

यदि हमारा आपका विवाद प्रकाशित होगा तो हमारे आपके मैत्री भाव में अवश्य "जोखिम" आवेगी—अतः विवाद वृद्धि अवांछनीय है—हमें अवकाश मिलेगा तो भा० मि० द्वारा आजकल की लेख प्रणाली के सबन्ध में हम अपने भावों को साधारण रीति से प्रकाशित करने की अचिरात् चेष्टा करेंगे।

कृपैषी
श्रीधर पाठक

टिप्पणी—यह मूल पत्र की प्रतिलिपि है। गलतियों को भी जयों का त्यों रहने दिया गया है। सं०

***भारत मित्र**

(८)

श्री प्रयाग
४–१०–१३

प्रियवर द्विवेदी जी

धन्योऽसि ! कृपाकार्ड का पुन: पुन: पाठकर चित्त खूब ही "सन्न" हुआ—अपने बाबत आप की बदली हुई राय देखकर बहुत कुछ लाभ संभावना हुई—मैं आपको अब कष्ट न दूँगा—"गजपुरी" जी की "सतरें" छपी हैं उन्हें जरा गिन लीजिएगा। मैं समझता हूँ कोई लेखक १०,१५ पद्य से कम एक बार में आपके पास नहीं भेज सकता होगा। आप अस्वस्थ हैं। हमको उत्तर का कष्ट न उठाइयेगा।

श्रीधर पाठक

(१)

२७–४–२३

प्रियवर्य श्री पद्मसिंह जी

नति निवेदनम्। आपका सुश्लाघ्यशालीनता-शोभित शुभ पत्र यथासमय समागत हुआ। अस्वास्थ्यवश उत्तर विलंबित हो गया, एतदर्थ क्षमा प्रार्थित हूँ। आप अपनी ईश्वर-प्रदत्त साहित्यिक क्षमता से समभिज्ञ नहीं हैं। उसकी क्षमता का अन्दाज दूसरे लोग ही कुछ कुछ लगा सकते हैं। तुच्छ बारह सौ मुद्रा आपकी अमूल्य कृति के बारह वाक्य क्या बारह शब्दों पर वार दिये जाने को यथेष्ट नहीं। यों तो "मान कौ बीरा हीरा के समान है", परन्तु आपके अपरिमेय परिश्रम का यह अल्प मात्रिक पारितोषिक मातृभाषा की साहित्यात्मा को पर्याप्त परितोषप्रद नहीं हो सकता। 'सतसई' के प्रथम दोहे के सम्बन्ध में "माधुरी" में प्रकाशित "रत्नाकर" और द्विवेदीजी के लेखों को देखकर मुझे उसी दो की आपकी की हुई टीका देखने का औत्सुक्य उत्पन्न हुआ था। अत: आपको उसी विषय में लिखा था। यह पारितोषिक प्रश्न से मेरे सम्बद्ध होने के पहले की बात है, परन्तु पारितोषिक के कागजात के साथ जब आप का भाष्य स्वयं आ गया तब आपको कष्ट देने की आवश्यकता न रही। अब आप "भूमिका" और "भाष्य" दोनों का सम्मिलित संस्करण भेज रहे हैं। यह आपकी गुर्वी कृपा है। मैं उसे बड़े गर्व और गौरव का स्थान अपने लघु पुस्तकालय में प्रदान कर समुचित समादर सहित सर्वदा सुरक्षित रक्खूँगा। मैं भी अपने "पाठ्य संग्रह" की एक जिल्द जल्द ही जनाब की सेवा में भेज रहा हूँ। आशा है उसे आप सकृपा स्वीकार करेंगे।

आपके पत्र से आपकी भ्रातृ-बधू की असामयिक मृत्यु का शोक-समाचार सुन दुःख हुआ। आशा है आप इस दैव-दुर्वृत्त को समुचित धैर्य सहित सहन करेंगे।

प्रयाग जब आप पधारें इसी दीन जन के स्वल्प कुटीर को विश्राम स्थान बना पवित्र कीजिएगा।

वशंवद
श्रीधर पाठक

श्री बालमुकुन्द गुप्त जी के पत्र
पं० श्रीधर पाठक जी के नाम

(१)

श्री

नं० ३९०

लाहोर, कोहेनूर प्रेस
१६-६-८८

श्रीयुत

१३ जून के हिन्दोस्थान में आपका विज्ञापन देखकर मुझे चेष्टा हुई कि मैं भी आपकी नवीन ढंग की सुरस कविता को देखूँ। इससे पहिले मैंने काशी पत्रिका में आपका अनुवादित ऊजड़ ग्राम देखा है और मेरा जी चाहता है कि उसको पूरा देखूँ। इससे आप कृपा करके १ कापी उसकी मुझे भेज दें तथा और कोई ऐसी पुस्तक हो तो वो भी भेज दें, इनका मूल्य मैं आपके लिखने जब भेज दूँगा और कोहेनूर में अपनी मति भी प्रकाश करूंगा, । विशेष शुभ।

आपका
बालमुकुन्द
संपादक, कोहेनूर, लाहोर

(२)

कोहेनूर पत्रालय
लाहोर, २५-७-८८

श्रीयुत पंडित जी महाराज

प्रणाम

२६ जून का कोहेनूर पहुँचा होगा, उसमें एकान्तवासी योगी पर समालोचना की गई है। आज का कोहेनूर भी भेजता हूँ, इसमें आपकी लिखी श्री हरिश्चन्द्राष्टक पर समालोचना है। इसकी एक प्रति मुझे "हिन्दोस्थान" पत्र द्वारा मिली है। आशा है कि आप कृपाकर इस समालोचना को भी स्वीकार करेंगे।

आपका सेवक और हिन्दीभाषाका
परम अनुरागी
बालमुकुन्द गुप्त
सम्पादक कोहेनूर, लाहोर

(३)

गुरियानी (भवानी)
२१-११-८८

श्रीयुत पंडित जी महाराज

प्रणाम

क्षमा कीजिये कि मैं चिरकाल आपकी सेवा में कोई पत्री भेज न सका। मैं २५ ओक्टूबर से बीमार होकर ऊपर लिखे पते से अपने जन्म स्थान में आया हूँ और पहली दिसम्बर तक लाहोर चला जाऊंगा। एक निवेदन आपकी सेवा में यह है कि नवम्बर मास से कोहेनूर दैनिक हो गया। और बड़ा मतलब इससे जातीय महासभा का काम है। चूँकि इस बार कांग्रेस का अधिवेशन प्रयाग में होगा, इससे प्रयाग के.....[1]समाचारों के भेजने के लिये कोहेनूर को प्रयाग में कारस्पान्डेंट की आवश्यकता है। आप कृपा करके अपने किसी योग्य मित्र को इस काम के लिये तलाश करें और वह क्या इस काम के लिये लेंगे, लिखें, जवाब ऊपर लिखे पते से हो।

आपका वही सेवक
बालमुकुन्द गुप्त
संपादक—कोहेनूर

(४)

भारतमित्र प्रेस
कलकत्ता, १०-९-८९

पूज्यवर

प्रणाम

आपके चार पत्र लगातार आये। इस कृपा का कहां तक धन्यवाद करूँ। "एडविन अज्जलैना"की प्रस्तावना बहुत ही सुन्दर हुई है। पंडित दुर्गाप्रसाद मिश्र जी ने बहुत ही पसन्द किया।

इस सप्ताह मैंने उसे छाप दिया है। बहुत ही अल्प था, दो कालम में बुरा लगता, इसीसे एक कालम में छापा। आगे अधिक आने से दो ही कालम में छपेगा। कृपा करके इसे अवश्य शेष कर दें। चाहे देर चाहे सबेर। आशा है कि मेरी यह प्रार्थना खाली न जावेगी। ट्रवेलर अनुवाद लिखने लगे हैं, अच्छी बात है।

---

१ कार्ड फट जाने से नही पढ़ा गया।

यदि आप ऊजड़ गांव के विषय में कुछ लिखेंगे तो भारतमित्र हाजिर है। ट्रवेलर जितना बन गया हो भारतमित्र के लिये भेज दें।

अवश्य आप अधूरे ग्रंथ को पूरा करें। शरद पर आपने जो लिखा है अति सुन्दर है। नवरात्रि में जो भारतमित्र का अंक निकलेगा वह कवितामय होगा। उसीके लिये शरद् ऋतु की कविता दरकार है। मैं आशा करता हूं कि आप शरद पर कुछ और भी लिखेंगे।

कृपाकरके एक कविता यदि बादलों को सम्बोधन करके लिखी जावे तो उत्तम हो। अकाल पड़ गया है, मेघ से प्रार्थना की जावे कि तुम रक्षा करो।

पन्नन लाल की पुस्तक ईश्वर ने चाहा तो फिर न छपेगी। आपके अनुत्साह ही का कारण है कि आपकी कविता की चोरी हुई। अनुत्साह ने आपको गुम नाम कर दिया। गुमनाम का माल हर कोई चुरा सकता हैं। जरा मैदान में आइये देखें फिर कोई कैसे आपका माल चुराता है। यदि पन्नन के मित्र या पुत्र वैसा करेंगे तो क्या आपके पुत्र मित्र न रहेंगे जो उनके दांत तोड़ दें। वास्तव में बड़ा ही गन्दा काम पन्नन ने किया। परन्तु हम लोग पीछा थोड़ा ही छोड़ेंगे।

और सब कुशल है। आपकी कृपा के लिये बहुत धन्यवाद है।

भवदीय दास
बालमुकुन्द गुप्त

(५)

॥ श्रीं ॥

कलकत्ता
१७-९-८९

पूज्यवर
प्रणाम

दूसरा अंक आज दो कालम में गया है, साथ ही 'श्रान्त पथिक' भी है। कापी मैंने ही देखी थी, तथापि यदि कुछ भूल रही हो तो क्षमा करेंगे।

पन्नन लाल बड़ा बेहया है। फिर एक पत्र भेजा है। ऐसे का क्या किया जाय। अब भी उसे अपने किये का पछतावा नहीं है!

आज "साधु" भेजता हूँ।

"शरद" पर आपने "हिन्दोस्तान" में जो लिखा था, अब उसका मिलना कठिन है। तथापि मैंने एक कार्ड लिखा है।

"भारतमित्र" शनीवार की रात को छपता है और आपका "घनविनय" आज रविवार को आया। इस समय "भारतमित्र" डाक में जा रहा है। लाचार

अगली बार छपेगा। कृपाकर के भादों भी भेज दें, दोनों साथ छपेगा। वर्षा पर इस सप्ताह मैं भी कुछ लिखने लगा था। पर अकेला रहने से अवकाश न मिला, जो लिखा था, उसीकी असल कापी भेज देता हूँ।

"घनविनय" अति सुन्दर हुआ है। मैं आशा करता हूँ कि आपके द्वारा मेरी सारी इच्छायें पूरी होंगी। आपकी कृपा का मैं कहां तक धन्यवाद करूँ।

नागरी प्रचारिणी के विषय में जो लिखा है सो भी अगली वार। मेरी राय साथ होगी।

कविता सदा चौड़े कालम में रहेगी आपकी राय मंजूर। आज लम्बे लेड बनाने का आर्डर दिया जाता है। क्योंकि इस समय दो लेड लगाकर चौड़ा कालम बनाना पड़ता है।

दास
बालमुकुन्द गुप्त

आपने जो नया पता लिखा था वह खो गया। फिर लिखिए।

(६)
।। श्री ।।

Gurianii
(Bhiwani)
२८–३–००

पूज्यवर
प्रणाम

आपका २१ मार्च का कृपापत्र आया समाचार जाना। उर्दू और हिंदी एक होने पर भी दो हैं। बहुत शब्द हिंदी के उर्दू में प्रयोग नहीं होते। गडरिये वाली "नज्म" एक तरह की खड़ी हिंदी है। मेरा कथन यह है कि हिंदी का रस उसमें आया नहीं और उर्दू भी वह नहीं। इससे चाहें तो उसे हिंदी कर लें और चाहे उर्दू। यदि उसी तरह रखें तो भी हर्ज नहीं। परन्तु वह एक्य विलक्षण ही हो जावेगा।

हेमन्त को सुदर्शन ने शुष्क कहा सो बेजा है। कविता के सुन्दर होने में शक नहीं। केवल इस वर्ष के हेमन्त की दशा दूसरी थी, उसमें कवि का क्या दोष है ? आपने लिखा सो अच्छा ही किया।

आप जो ही कृपा करके लिखें या भेजेंगे सो ही अधिक करके माना जावेगा।

२१ को कलकत्ते से चलकर मैं लड़के का विवाह करने घर आया हूँ। वैसाख

बदी १ को विवाह है। अब मैं आपसे बहुत निकट हूँ। लौटते दर्शन करूंगा। द्विवेदी जी के दर्शन भी होंगे तो बड़ा ही लाभ होगा।

भवदीय
बालमुकुन्द गुप्त

(७)

मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट
कलकत्ता, १४ मार्च १९००

पूज्यवर

प्रणाम

आपका १० मार्च का पत्र मिला। आपके उर्दू काव्य का तर्जुमा बुरा नहीं है। परन्तु जिस भाषा में आपका वह पद्य है, वह उर्दू नहीं है। और न उसमें उर्दू कविता का ही कोई गुण है। यदि आप किसी उर्दू कवि को अपनी कविता दिखा लें तो मेरे कथन की यथार्थता जान सकते हैं। मैं जोर से इसलिए कहता हूँ कि मैंने उर्दू पढ़ी है सीखी है और हिंदी से मैं उर्दू ही अधिक जानता हूँ। इसके सिवाय उर्दू कविता को भी मैंने कई साल देखा पढ़ा है। स्वयं भी उद् कविता की है। मैं आपको एक बार फिर सलाह देता हूँ कि आप उसे हिंदी में ही लिखिये और यदि उर्दू ही में छपवाइये तो मेरे पास भी एक कापी अवश्य भेज देना। "श्रान्त पथिक" और ....जी की कविता तथा वह चुटकले आज की डाक से मिलते तो अच्छा होता।

होली की बाबत आपका जैसा कुछ खयाल है सो ठीक ही है। परन्तु जैसी आपको उससे नफरत है वैसी ही उससे मुझे मुहब्बत है। शायद यह इस कारण कि वैश्य और शूद्र में दस आने आठ आने ही का फर्क है। गीता में कृष्ण जी ने स्त्रियों वैश्यों और शूद्रों को एक ही पलड़े में तोला है। शायद बहुत छोटी जाति होने से ही होली का मेरे जी में इतना प्यार है।

हाँ, आज आप का एक पत्र सुदर्शन के लेख के विषय में आया। छापने को दिया गया। इसी सप्ताह छपेगा। परन्तु सुदर्शन ने आपके काव्य की बड़ी प्रशंसा की है और गुनवत हेमन्त की भी निन्दा नहीं की है। कुछ दोष नहीं दिखाया है। वह केवल यह दिखाता है कि इस साल न मूली थी न मटर था न हेमन्त में पैदा होने वाली कोई वस्तु थी। इससे यदि कुछ उस लेख में सामयिकता होती तो अच्छा था। जिस प्रकार कि आपके घनविनय में है। और भी एक बात है कि बहुत लोगों की किसी काव्य के विषय में बहुत रायें हो सकती हैं। अच्छी भी बुरी भी। यदि किसी कवि

की कविता पर लोग आक्षेप करें तो कवि कहां तक उनका उत्तर देता फिरेगा? मेरा मतलब यह है कि इस प्रकार का उत्तर देने से आपकी बड़ाई में कुछ फर्क आता है। मेरे खयाल में तो सुदर्शन ने आपकी पूरी पूरी स्तुति की है, निन्दा नहीं की है और हेमन्त काव्य की भी निन्दा नहीं की। उस पर अपनी राय जाहिर की है। उचित समझकर इतनी विनय आपसे की है।

भवदीय दास
बालमुकुन्द गुप्त

(८)

कालाकांकर
२०–३–०९

पूज्यवर

प्रणाम

१६ तिथि का कृपापत्र आया। कृतज्ञ हुआ। कल्ह सारसुधानिधि को चन्द्रिका समेत भेजा है। उसने कुछ बुरा नहीं लिखा। मैंने चाहा था कि वह अपने एडीटोरियल में लिखे सो न किया और मेरे ही लेख से सहमत हो गये। और कृपानाथ जिस प्रकार अनुत्तम वस्तु की प्रशंसा करना बुरा है, उसी प्रकार उत्तम वस्तु की अप्रशंसा भी तो महाअन्याय है। इससे यदि कोई कुछ छपवाता तो अवश्य उत्तर पाता। बाबू अयोध्याप्रसाद की बाबत जो आपने लिखा ठीक है। मैंने पहिले ही उसे गप्प समझा था और अब तो उनका लिखना लाभकारी भी हुआ कि मुझे मेरी A.B.C. के लिये प्रशंसा मिली। परन्तु दीनदयालु पं० मदनमोहन, पं० श्रीधर पाठक, पं० प्रताप नारायण की ओर से मुझे शाबाशी या घुरकी मिलना वैसा ही है जैसा पिता की ओर से प्यार या धमकी इससे किसी के लिखने से क्या है?

सेवक
बालमुकुन्द गुप्त

(९)
श्री

गुरियानी
३१–३–१९००

पूज्यवर

प्रणाम

हां, सुदर्शन संपादक मेरे मित्र हैं और इसीसे आपके भी परम भक्त हैं। आपके कोमल या कठोर सब शब्द ही फूल समान हैं। उसकी आप कुछ परवा न करें।

आपसे मेरी ओर से उल्टी या सीधी जो विनय होती सब शुद्ध मन से भक्तिभाव से होती है।

२८ का कार्ड मिला। जो पत्र आपने कलकत्ते भेजा है उसे मेरा सहकर्मी खोलेगा। मुझसे कुछ पूछना होगा पूछेगा नहीं तो तामील करेगा। हमारी मंडली भर आपकी भक्त है। जुबानी सब कहूंगा। आज नया संवत् है उसकी प्रणाम हाथ जोड़ कर निवेदन करता हूँ।

दास

बालमुकुन्द

पं० श्रीधर पाठक जी को

(१०)

कलकत्ता ता० १७–९–००

पूज्यवर

प्रणाम

आपके १५ अगष्त के पत्र का आज उत्तर देता हूँ। इसी सप्ताह में कलकत्ते पहुँचा हूँ, महामंडल आदि में एक मास से अधिक लग गया।

आपको अखबारों से प्रेम नहीं है सो ठीक है। भारतमित्र खरीदने का मैंने आपसे अनुरोध नहीं किया क्योंकि आपकी सेवा में बेदाम जाना ही उसकी इज्जत था। परन्तु आपने दाम भी भेज दिया था और मैनेजर ने जमा भी कर लिया था इसी से आपका नाम ग्राहकों में था। तकाज़ा करने वाला क्लर्क औरों के साथ आप पर भी तक़ाज़ा कर गया। वह तो आपसे परिचित न था। हाँ लिखने का अनुरोध मैंने किया था और आप कृपा कर लिखने लगे इसका मैं हृदय से धन्यवाद करता हूँ। आपका जी इतना कच्चा है कि उसमें हरदम सन्देह उठते हैं और आपको यही ख्याल हो जाता है कि सब दोष बालमुकुन्द करता है और जानबूझ कर करता है।

रही दाम देकर लिखाने की बात सो हिन्दी के भाग्य में अभी यह बात नहीं है। अंग्रेजी अख्बारों के भाग्य में और हिन्दी अख्बारों के भाग्य में सोने और मिट्टी का फर्क है। २ रु० के भारतमित्र को भी खरीदार चाव से नहीं खरीद सकते हैं। आपकी कविता ही को सौ में दो भी समझने वाले नहीं। ऐसी हीन दशावाली हिन्दी पर आपको दया ही चाहिये।

मालिक और मैनेजर का भी तकाज़ा करने में कसूर नहीं है। क्योंकि उनको भी मालूम न था कि क्लर्क ने कब आपको तकाज़ा लिख मारा। असल कसूर मेरा है कि मैंने क्लर्क को कह न रक्खा था आपका नाम आवे तो तक़ाज़ा न भेजना। परन्तु अब क्लर्क जान गया और उस नाम पर लाल निशान कर दिया है।

इस बार मैं मथुरा आकर आपका दर्शन न कर सका यह बड़े ही अभाग्य की बात है। क्या करूँ मुझपर जो झंझट गृहस्थाश्रम के पड़ रहे हैं उसी में डूबा रह जाता हूँ। सावित्री स्तम्भ की हिमायत में एक चिट्ठी इस बार छपी है।

समालोचनायें इस कवि नहीं, इस कविता का एक अक्षर टूट गया।

शेष का झगड़ा अब बन्द हुआ।

१. अक्षरों पर क्या भारतमित्र दुर्गा पूजा का निकलेगा। पिछले साल तो आपकी भारी प्रतिज्ञा थी। परन्तु इस साल आप मुझपर शायद कम प्रसन्न हैं। इससे विनय है कि यदि कुछ लिख सकें तो बड़ी कृपा होगी। २५, २६ सितम्बर तक लेख मिलना चाहिए।

भवदीय दास
बालमुकुन्द गुप्त

(११)

गुरियानी
१६-४-९१

पूज्यवर

प्रणाम

८ तिथि के पत्र का धन्यवाद। आशा है कि कुछ काल आप मुझ पर ऐसी ही दया रक्खेंगे। गुरयानी में एक भी सारस्वत नहीं है। यह देश पंजाब वास्तव में नहीं है बरंच गौड और अग्रवालों का देश है। सिरसा यहां से १२५ मील है। रेल बनी है और यह स्थान दिल्ली से ४० मील है। मुझे यह न मालूम हो सका कि सिरसा में सारस्वतों के कितने घर हैं, परन्तु वहां से सारस्वतों का देश आरम्भ होता है, उससे १०० मील के भीतर फीरोजपुर, लाहोर, अमृतसर सब हैं। अब तक मैं लारी का दूसरा रीडर पढ़ता था, उसका हिंदी अनुवाद भी था परन्तु अब चौथा पढ़ता हूँ। तीसरा नहीं था और अनुवाद भी नहीं है। इससे अंग्रेजी हिंदी दोनों की कापी भेजता हूँ। कृपा करके ध्यान से देखियेगा और यथावकाश देखिये, बड़ी जल्दी नहीं है।

सेवक
बालमुकुन्द गुप्त

पं० श्रीधर पाठक जी को

(१२)

श्री

गुरियानी
२८-८-९१

पूज्यवर

प्रणाम

आपका कृपाकार्ड आने से दो दिन पहिले कापी भेजी थी। आशा है कि वह मुझे आज ही कल्ह में मिलेगी। अब मैं चौथी पुस्तक की अंतिम कापी भेजता हूँ जो कल्ह पहुंचेगी। इस कापी के साथ आपकी दया से चौथा रीडर समाप्त होता है। अब आप मुझे जिस सरल पुस्तक के लिये आज्ञा करें अभ्यास करूँ। वर्षा यहां बहुत है। कुछ अन्न भी ढीला हुआ है। अपना समाचार लिखिये—

सेवक
बालमुकुन्द गुप्त

श्रीधर पाठक जी को

(१३)

गुरियानी
२५-११-९१

पूज्यवर

प्रणाम

२० के कार्ड के उत्तर में सविनय निवेदन है कि आज मैंने प्रैक्टीकल इंगलिश के लिये बा० रामकृष्ण को लिख भेजा है। आशा है कि पुस्तक मुझे मिलेगी। अब कृपाकर के आप बताइये कि मैं ग्रामर क्यों कर सीखूँ। मेरे पास मैनुअल आफ इंग-लिश ग्रामर है। आप पढ़ने की तरकीब बताइये। उस्ताद कोई नहीं है। एक कापी उजड़ ग्राम की सनातन धर्म गजट स्यालकोट पंजाब को भेजिये और भेजने की इत्तला मुझे दीजिए, आशा है कि कुछ लाभ होगा। एक मास के लिये हिंदी बंगवासी में विज्ञापन छपवाइये। अवश्य ही कुछ पुस्तकें बिकेंगी। वह पत्र ६००० बिकता है। एक कापी उसे रिव्यू के लिये भी भेजिये, चाहे वह रिव्यू करे वा न करे,परन्तु

विज्ञापन अवश्य छपवाइयेगा। आपने इस पुस्तक के छपवाने में लागत बहुत लग वाई। एकान्तवासी योगी की भांति छपवाते तो १५० रुपये की हानि न होती। मैं और उद्योग करूंगा।

सेवक
बालमुकुन्द

पं० श्रीधर पाठक जी को

(१४)

कलकत्ता
६–९–०२

पूज्यवर

प्रणाम

३०१ से ३३० पंक्तियां छापी गईं। कदाचित कोई भूल रही होगी। क्योंकि उस दिन मैं अपनी माता की बीमारी की खबर पाकर बहुत घबराया हुआ था। अब माता को आराम होने की खबर सुनी है।

अब आपका अनुवाद सरल नहीं, बड़ा कठिन होता जाता है। पंक्ति प्रति पंक्ति अनुवाद करना ही इसका कारण है। जैसा एकान्तवासी योगी सरल है, वैसा यह श्रान्तपथिक नहीं है। अर्थ को इतना कड़ा करना मैं पसन्द नहीं करता। लोग समझेंगे नहीं तो अनुवाद से क्या फायदा। शायद आप मिश्र भाइयों की समालोचना से इस पंक्ति प्रति पंक्ति के झगड़े में पड़े हैं। कृपा करके उत्तर दें।

कोई नई कविता भेजें।

दास
बालमुकुन्द गुप्त

श्रीधर पाठक जी को

श्री पं० बालकृष्ण भट्ट के पत्र
श्री पं० श्रीधर पाठक जी के नाम

(१)

श्री मत्सु

वह लेख छपेगा और कुछ भेजते तो बड़ी कृपा होती। इस बार ३ महीने का एक में निकालेगा। ५ फर्मा हुए अभी कम से कम ३ फर्मा और चाहिए। कहां तक लिखें कोई बात ही नहीं सूझती—लेख का धन्यवाद और के लिए आशाबद्ध।

प्रयाग — आपका अनुरागी

१०–१०–११ — बालकृष्ण

पं० श्रीधर पाठक जी को

(२)

श्री मत्सु श्रीशः पायादपायाद्व :—

.......समय अति दीन........गा के कृपापात्र हो गये। हमारी आँख जाती रही। खुलाया है पर पढ़ लिख नहीं सकते, इसीसे पत्र में भी देर हो गई। जो भेजा है पहुँचा होगा। अब आगे निकालने की कौन आशा करे। हमारा तो अब जीवन व्यर्थ हो रहा है। ईश्वर का हम पर कोप है, पढ़ना जो जीवन का सार था, उस्से हम वंचित हो गए।

प्रयाग — कृपाकांक्षी

१७–५–१९०८ — बालकृष्ण

पं० श्रीधर पाठक जी को

(३)

श्री

पुस्तक पठवन काज—देत बहुत धनवाद तोहि
विनती मम यहि आज—नव रचना भेजत रहौ।
हिय हुलसत अवगाहि—पद्यअम्बु यहि सरवरहि।

को अस नर जग मांहि—कवि रसना जेहि ना रुचै।
जुग जुग जिओ असीस ईस की तुम पै आवै।
परम छीन गुन हीन बूढ़ यश तुम्हारो गावै॥

बालकृष्ण
काशी
११-४-१२

पं० श्रीधर पाठक जी को

(४)

श्री

प्रणतय:

कविवर श्रीधर क्यों न कहाँय
जिनकी रची कितबिया बहुत एक आँय—
सरस रसीली कविता पाय—
रूखा को अस जेहि नहिं भाय—
भट्ट उजड का देहि हैं राय—
बूढ़ अकिल सब दिहिन गँवाय—
श्री जार्ज भूप की महिमा गान—
करि हैं अब हमहूं लै तान—
धन्यवाद कहि बारंबार—
पठवहुँ स्वीकृति पत्र उदार।

बालबुद्धि
बालकृष्ण
३१-१-१२

पं० श्रीधर पाठक जी को

(५)

NO.........

THE SARASWATI OFFICE
BENARES CITY

२६ नवम्बर १९०२

महाशय

समालोचक पत्र के दो अंक छप चुके हैं जो आपके पास अवश्य पहुँचे होंगे और आशा है कि आपने उन्हें पढ़ा भी हो। आप समालोचक समिति के सभासद कहलाते हैं इसलिये आशा है कि आप कृपाकर इन प्रश्नों का उत्तर देंगे।

१. यह समिति कब और कहाँ बनी ?

२. क्या आप इसके सभासद हैं और यदि हैं तो कब और किस अधिवेशन में आप चुने गए थे ?

३. क्या इस समिति के कार्यकर्त्ता हैं और नियम आपकी सम्मति से बनाए गए थे अथवा क्या इन कार्यों के करते समय आपकी सम्मति ली गई थी ?

४. गत दो संख्याओं में जो लेख छपे हैं क्या उन्हें आप पसन्द करते हैं और क्या वे आपकी सम्मति से छापे गए हैं ?

५. इस समिति के सभासदों के क्या अधिकार हैं ? आशा है कि इन प्रश्नों का उत्तर आप शीघ्र देकर मुझे अनुगृहीत करेंगे।

भवदीय
श्यामसुन्दर दास
सम्पादक-सरस्वती

पं० श्रीधर पाठक जी को

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल के पत्र श्री केदारनाथ पाठक जी के नाम

(१)

रमईपट्टी-मिरजापुर
ता० १३–१०–०५.

प्रियवर

कृपाकार्ड मिला। मेरे ऊपर जो यहां आक्रमण हो रहे हैं उसका हाल तो आपने बा० भगवानदास से[1] जान ही लिया होगा।

इस समय मेरे ऊपर केस लाने की तैयारियां हो रही हैं। बा० काशीप्रसाद कहते हैं कि वह चिट्ठी जो 'बंगवासी' में देवीप्रसाद के नाम से छपी है उनकी लिखी नहीं है, इसका वे कहते हैं कि उनके पास प्रमाण है। केस लाने में अभी दो-तीन दिन की देर है इस बीच में मुझे एक दो काम करना है।

प्रथम तो मुझे यह सिद्ध करना है कि वह चिट्ठी काशीप्रसाद ही की लिखी है यह बात सिद्ध हो जाने पर सब बखेड़ा मिट जायगा और काशीप्रसाद मुआफी मांगेंगे परन्तु यदि सिद्ध न हो सका तो वे कहते हैं कि मुझे मुआफी मांगना होगा।

बाबू काशीप्रसाद यह भी कहते हैं कि वे इस बात को प्रमाणित कर देंगे कि वह 'मोहिनी' वाली चिट्ठी मैंने लिखी है, पर मैं नहीं जानता कैसे। आगे जो कुछ होगा बराबर लिखता रहूंगा। इधर पत्र न देने का कारण यह था कि मैं चाहता था कि यह सब झगड़ा निपट जाय तब मैं आपके पास लिखूँ। वहाँ का हाल लिखिए।

आपका
रामचन्द्र शुक्ल

---

१. बा० भगवानदास हालना।

(२)

मिरजापुर
२५-११-०५

प्रिय पाठक जी

कृपा कार्ड पाया। आपकी आशा के लिये धन्यवाद। प्रियवर, आजकल मेरे ऊपर ईश्वर की अथवा शनैश्चर की बुरी दृष्टि है। एक के उपरान्त दूसरी, दूसरी के उपरान्त तीसरी विपत्ति में आ फंसता हूँ। सुनिये, मैं काशी जाने की पूरी तैयारी कर चुका था परन्तु बीच में मेरे घर ही में एक विलक्षण षड्चक्र रचा गया? हरिश्चन्द्र का गौना ६ या सात दिन में आने वाला है। मेरे पिता जी इधर कई दिनों से दौरे पर हैं। इसी बीच में मेरी विमाता जी को भी भयंकर मूर्ति धारण करने को सूझी। ४००) का जेवर गायब करके कह दिया कि मेरे पास ही से घर में से चोरी हो गया। वे जेवर प्राय: वही थे जो हरिश्चन्द्र के विवाह में मिले थे। आप जानते होंगे कि ऐसी कार्रवाइयां दो बार वह और भी कर चुकी हैं। मेरे पिता जी को खबर दी जा चुकी है, आज वह आने वाले हैं। जब तक वे न आ जायं मेरा यहां से हटना उचित नहीं। बाबू श्यामसुन्दरदास को भी मैंने टेलीग्राम दे दिया है।

आपने लिखा कि "मारे लज्जा के माथा ऊंचा नहीं होता।" प्रियवर, थोड़े दिन माथा नीचा ही किए रहिए, यदि ईश्वर की इच्छा होगी तो वह ऊंचा हो ही जायगा। (मेरी कायरता का क्या परिणाम आपको उठाना पड़ा स्पष्ट लिखिये, मुझे बड़ा दु:ख है) आपने लिखा कि बाबू श्यामसुन्दरदास को बुरा होना पड़ा। यह बात मेरी समझ में नहीं आती। किससे बुरा होना पड़ा? क्या सारे संसार से? क्या संसार ही मेरे विरुद्ध है। महाबीरप्रसाद द्विवेदी से वे बुरे हुए तो कोई नई बात नहीं हुई। रहे कोटाधीश[1] वे द्विवेदी के उपासक ही ठहरे। उनके बुरा होने में बाबू श्यामसुन्दरदास ऐसे धीर मनुष्य को दु:ख मानना न चाहिए। हां, उनके अनुरोध पालन में मैंने बिलंब किया इसका अवश्य उन्हें दु:ख होगा। इस विषय में मैं और आपसे क्या कहूँ, मैं काशी जाने के लिये तैयार बैठा हूँ। केवल पिता जी की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। आज वे आने वाले हैं। आप कहते है कि तुमने अपने आगे आने वालों के मार्ग में कंटक बिछा दिया। प्रियवर, मुझे स्वप्न में भी यह विश्वास नहीं हो सकता कि आप ऐसे सुहृद् और स्नेही मित्र मेरे निकट आने में उन कंटकों की पर-

१. श्री काशीप्रसाद जायसवाल का घर कोट पर था।

वाह करेंगे। वे उन कंटकों का मर्दन करेंगे, उन्हें पददलित करेंगे। आपको मेरे ऊपर रुष्ट न होना चाहिए, दया करनी चाहिए। मेरी दशा की ओर ध्यान देना चाहिए। चारो ओर बवंडर चल रहा है, हृदय डांवाडोल है।

आपका
किंकर्तव्यविमूढ़ रामचन्द्र शुक्ल

(३)

रमईपट्टी, मिरजापुर
२२ अगस्त, ०६

प्रिय पाठक जी

प्रणाम

कृपाकार्ड मिला। चित्त प्रसन्न हुआ। मैं इधर कई आपत्तियों से बराबर घिरा रहा। मेरे घर में कालरा हो गया था। मैं स्वयं बराबर बीमार रहा। अच्छे होने की कम आशा थी। एक लड़का भी दो महीने का होकर मर गया। सारांश यह कि जो जो उपद्रव चाहिए सब इसी डेढ़ महीने के बीच हो गए। खैर अब से भी ईश्वर अनुग्रह करे। आप पत्र का उत्तर न पाने से अवश्य रुष्ट हुए होंगे। पर अब आपको दया करनी चाहिए। मेरे ऊपर वैसी ही कृपा बनाये रहिये, यही प्रार्थना है। आपका यहां से चला जाना मुझे बहुत अखर रहा है।

कोटाधीश विलायत में बैरिस्टरी भी पढ़ेंगे और व्यापार भी संभालेंगे। वेंक-टेश्वर समाचार में "हिन्दी लेखक का विलायत गमन" देखा। यह गमन समय में आप लिखवाते गए हैं।

"पिंकाट" की जीवनी यदि "बंगवासी" में मिल जाय तो बहुत अच्छी बात है। बिलायत से चिट्ठी का जबाव जो आपके पास आया है, कृपा करके उसकी नकल मेरे पास भेज दीजिये। आपके यहां न रहने से मेरा कुछ भी हाथ पैर नही चलता है। किन्तु मुझे दृढ़ आशा है कि आप मुझे वहां से भी उसकाते रहेंगे।

यदि आप जीवनी वहां से भेज दें तो मैं हाथ लगा दूं। देखिएगा, कृपा बनाए रहिएगा। पत्र बराबर देते रहिए। अब मैं भी स्वस्थ हो गया हूँ, मुझसे भी त्रुटि न होगी। आप अपने आने के विषय में अवश्य लिखिए। आपको ऐसी प्रतिज्ञा न करनी

चाहिए। न मिरजापुर में इच्छा हो तो काशी ही में आकर रहिए। इस प्रकार अपने प्रति और मित्र वर्ग का परित्याग कर देना ठीक नहीं। आशा है आप उचित उत्तर देंगे।

आपका वही
रामचन्द्र शुक्ल

(४)

बस्ती
२५–५–०८

प्रियवर

प्रणाम

मुझे यहां आये आज पांच दिन हुए। एक कार्ड मैं आपकी सेवा में यहां से भेज चुका हूँ। उससे सब समाचार विदित हुए होंगे। आपका स्वास्थ्य अब कैसा है? मेरी तबीयत तो यहां आने से ठीक हो गई है। बाबू राधाकृष्ण की जीवनी मैं यहीं से समाप्त करके बहुत शीघ्र भेजूँगा। सब लिख गई है केवल पत्र आदि स्थान स्थान पर सन्निविष्ट करना है। आपको मैं थोड़ा कष्ट देता हूँ, नीचे लिखी पुस्तकें मेरे पास यहां पर नहीं है। मैं मिरजापुर छोड़ आया—

(१) श्री गंगाप्रसाद गुप्त लिखित बाबू राधाकृष्णदास का जीवन चरित्र।

(२) सभा के गृह प्रवेशोत्सव के समय की कविता और विवरण।

कृपा करके ये दोनों चीजें शीघ्र भेज दीजियेगा। रिपोर्ट आदि भी जो मैंने मांगा था यदि भेज दीजिये तो अच्छा है। विशेषकर वे जिनमें उनका कुछ उल्लेख हो।

बाबू श्यामसुन्दरदास के विषय में भी लिखिएगा। कोश विभाग का कार्य किस प्रकार चल रहा है? बाबू श्यामसुन्दरदास बाहर गए? और जो नए समाचार हों लिखिये, पत्र बराबर भेजते रहिएगा।

गांव—अगौना
डाक—कलवारी
जिला—बस्ती

आपका
रामचन्द्र शुक्ल

शीघ्रता के विचार से मैं एक टिकट रख देता हूँ। पता मेरा हिन्दी में ही लिखिएगा। पत्र इस पते से भेजिएगा:—

रामचन्द्र शुक्ल
गांव—अगौना पो० आ०—कलवारी जिला—बस्ती

(५)

रमई पट्टी, मिरजापुर
२–८–०८

प्रियवर

हरिश्चन्द्र कल बनारस से आए और कहा कि पाठक जी कहते हैं कि अब आते क्यों नहीं, देर हो रही है। इसका क्या अभिप्राय है मेरी समझ में नहीं आया; क्योंकि मुझे अबतक बाबू श्यामसुन्दरदास का कोई पत्र नहीं मिला और न आप ही ने कुछ लिखा। साफ साफ लिखिए कि क्या बात है। यदि बाबू श्यामसुन्दरदास ने कोई पत्र बुलाने के लिये भेजा हो और वह मुझे न मिला हो तो कृपाकरके एक पत्र या टेलीग्राम तुरंत भेजिए। हरिश्चन्द्र की बात मेरी समझ में न आई।

मैं आते समय आपके घर पर गया था, बाबू वृजचन्द्र[1] जी के यहां भी गया था, पर आपका पता न लगा। बाबू श्यामसुन्दरदास के यहां मुझे देर हो गई थी इसी से लाइब्रेरी में नहीं गया। आते समय मैं आपसे नहीं मिला, इसका मुझे भी खेद है। पर इसमें मेरा दोष न जानकर क्षमा कीजियेगा।

आपका
रामचन्द्र शुक्ल

(६)

मिरजापुर, शनिवार

प्रियमित्र

पत्र भेजने में देर हुई, क्षमा कीजियेगा। मैं आपके घर पर गया था वहां सब कुशल है।

मेम्बर होने के लिये पत्र मैं आप ही के पास भेज देता हूँ। आप उसपर दो आदमियों के हस्ताक्षर बनवा कर सभा में दे दीजियेगा। ३) वार्षिक चन्दा मैं दूँगा। वर्तमान वर्ष का आधा चन्दा १।।) मैं सेक्रेटरी के नाम भेजता हूँ।

मेरे लेख पर क्या विचार हुआ यह भी लिखिएगा। आप मिरजापुर कबतक आवेंगे? मेरे ऊपर कृपा बनाए रहिएगा।

भवदीय
रामचन्द्र शुक्ल

---

१. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के भतीजे।

(७)

प्रिय पाठक जी

आप काशी जाते समय मुझसे नहीं मिले। कहिए, सभा के उत्सव का क्या रंग-ढंग है। यदि मैं आना चाहूँ तो क्या आप मेरे लिये एक कार्ड का प्रबंध कर सकते हैं? कृपा करके इसका उत्तर आप शीघ्र निश्चित रूप से दीजिये। मैं तो समझता था कि आप इसके विषय में मुझे अवश्य लिखेंगे पर आपने मौनावलम्बन ही उचित क्यों विचारा?

भवदीय
रामचन्द्र शुक्ल

---

१. तिथि और स्थान आदि का उल्लेख नहीं है।